के

he Bachelor of Arts)

लेखक

आर. के. नारायण

अनुवादक

रमा तिवारी

य चन्द्रिका प्रकाशन

स्नातक
(The Bachelor of Arts)

लेखक
आर. के. नारायण

अनुवादक
रमा तिवारी

मूल्य
एक सौ पचास रुपये मात्र

संस्करण
2004

प्रकाशक
साहित्य चन्द्रिका प्रकाशन
24, न्यू पिंकसिटी मार्केट, सिद्धेश्वर मन्दिर के पीछे
पंचवटी, राजापार्क

ISBN. **81-7932-026-X**

लेजर टाइपसैटिंग
साहित्यागार कम्प्यूटर्स, जयपुर

मुद्रक
शीतल ऑफसैट जयपुर

प्राक्कथन

श्री आर.के. नारायण आज हमारे मध्य नहीं हैं किंतु साहित्य-जगत में उनका स्थान शीर्ष पर है और रहेगा। उनके सुप्रसिद्ध कथा-संग्रह 'मालगुडी डेज़' का हिंदी अनुवाद मैं इससे पूर्व कर चुकी हूँ, जो दो भागों (1) 'मालगुडी डेज़' और (2) 'मालगुडी की दुनिया' में प्रकाशित हो चुका है।

श्री नारायण उन गिने-चुने भारतीय लेखकों में से हैं जिन्होंने विदेशी भाषा में साहित्य-सृजन किया और अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त की। श्री आर.के. नारायण का पूरा नाम था रसीपुरम कृष्णस्वामी नारायण स्वामी अय्यर। रसीपुरम उनके गाँव का नाम था और कृष्णास्वामी अय्यर पिता का। उनका जन्म 10 अक्टूबर, 1906 को मद्रास (दक्षिण भारत) में हुआ था तथा शिक्षा मद्रास व मैसूर में। सन् 1930 में 24 वर्ष की आयु में उन्होंने बी.ए. की परीक्षा पास की थी। उनका प्रथम उपन्यास 'स्वामी एण्ड फ्रेन्ड्स' 1935 में तथा दूसरा 'द बैचलर ऑफ आर्ट्स' 1937 में प्रकाशित हुआ था। इनके अतिरिक्त उनके अन्य उपन्यास हैं: 'द डार्क रूम' (1938); 'दि इंगलिश टीचर' (1945); 'मिस्टर संपत' (1949); 'द फाइनेन्शल एक्सपर्ट' (1952); 'वेटिंग फॉर द महात्मा' (1955); 'द गाइड' (1958); 'द मैन ईटर ऑफ मालगुडी' (1962); 'द वेन्डर ऑफ स्वीट्स' (1967); 'द पेन्टर ऑफ साइन्स' (1976); 'अ टाइगर फॉर मालगुडी' (1983); 'टॉकेटिव मैन' (1986); तथा 'द वर्ल्ड ऑफ नागराज' (1990); उनके दो उपन्यासों—'मिस्टर संपत' और 'द गाइड' पर फिल्में बन चुकी हैं। 'द गाइड' पर तो हिंदी व अंग्रेजी दोनों भाषाओं में फिल्म बनी है। अंग्रेजी वाली फिल्म के संवाद नोबेल पुरस्कार विजेता चीनी लेखिका पर्ल एस. बक ने लिखे थे। अपने उपन्यास 'द गाइड के लिए श्री नारायण को अपने देश का सर्वोच्च सम्मान—भारतीय साहित्य अकादमी का राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त हुआ। इन उपन्यासों के अतिरिक्त उनके छ कहानी संग्रह (अ हार्स एण्ड टू गोट्स एन

एस्ट्रोलोजर्स डे एण्ड अदर स्टोरीज'; 'लॉली रोड'; 'मालगुडी डेज़'; 'ग्रैण्डमदर्स टेल तथा 'अंडर द बनयन ट्री') भी प्रकाशित हुए हैं। इसके अतिरिक्त उन्होंने दो यात्रा पुस्तकें ('माई डेटलेस डायरी' और 'दि एमेरल्ड रूट'); पाँच निबन्ध संग्रह ('नेक्स्ट सडे', 'रिलक्टेन्ट गुरु', 'अ राइटर्स नाइटमेअर', 'अ स्टोरीटेलर्स वर्ल्ड' और 'सॉल्ट एण्ड सॉ डस्ट'); भारतीय पौराणिक ग्रंथों पर तीन पुस्तकें ('द रामायण', 'द महाभारत' और 'गॉड्स, डीमन्स एण्ड अदर्स') तथा 'माई डेज़' नामक स्मृति-ग्रंथ भी लिखा है।

वर्ष 1964 में श्री नारायण को भारत सरकार द्वारा 'पद्म भूषण' की उपाधि से सम्मानित किया गया। दिल्ली सहित अनेक विश्वविद्यालयों ने उन्हें डी.लिट की उपाधि प्रदान की। वे ऑस्टिन (टेक्सास) विश्वविद्यालय के विज़िटिंग प्रोफेसर भी रहे। वर्ष 1980 में उन्हें ब्रिटेन में रॉयल सोसायटी ऑफ लिट्रेचर द्वारा ए.सी. बेन्सन पदक प्रदान किया गया। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में वे इंगलिश स्पीकिंग यूनियन द्वारा पुरस्कृत किए गए और 1981 में उन्हें अमेरिकन अकादमी एवं कला व साहित्य संस्थान की मानद सदस्यता प्रदान की गई (वे दूसरे भारतीय व्यक्ति थे जिसे यह सम्मान प्रदान किया गया था। उनसे पूर्व, संगीत (सितार वादन) के क्षेत्र में पंडित रविशंकर को यह सम्मान प्राप्त हुआ था)। श्री नारायण व्यक्तिगत रूप से इस सम्मान को प्राप्त करने के लिए अमेरिका नहीं जा पाये थे, अत: 18 जनवरी, 1982 को अमेरिकन दूतावास रूज़वेल्ट हाऊस में आयोजित एक शानदार समारोह में भारत में अमेरिका के राजदूत श्री हैरी एस. बार्न्स द्वारा श्री नारायण को यह सम्मान प्रदान किया गया।

वर्ष 1989 में उन्हें राज्य सभा की सदस्यता प्रदान की गई और वर्ष 2000 मे पद्मविभूषण की उपाधि से विभूषित किया गया। मई 2001 में, 94 वर्ष की आयु मे, उनका देहांत हो गया।

श्री नारायण ने अपनी कहानियों व उपन्यासों की रचना एक छोटे से काल्पनिक दक्षिण भारतीय नगर—मालगुडी की पृष्ठभूमि में की है। "आखिर मालगुडी है कहाँ?" यह प्रश्न उनके सभी पाठकों के मन में उठता है और इस बात पर आसानी से विश्वास नहीं होता कि यह स्थान वास्तविक नहीं, बल्कि कोरी कल्पना की उपज है। श्री नारायण ने स्वयं इस बात की पुष्टि की थी कि यह क्षेत्र पूर्णत: काल्पनिक है जिसमें उन्होंने अपनी आवश्यकता व सुविधानुसार कहीं नदी तट, कहीं होटल व रेस्तराँ, कहीं बस्तियाँ, कहीं डाकखाने, कहीं वन-क्षेत्र, कहीं क्लिनिक, कहीं स्कूल, कहीं कॉलेज, कहीं सिनेमाघर आदि की कल्पना कर ली है। किंतु इसका चित्रण इतना सजीव है कि यह स्थान वास्तविक और यथार्थ ही प्रतीत होता है। इसके निवासी यानी इन उपन्यासों के पात्र भी इतने यथार्थ व सजीव प्रतीत होते हैं कि वे

मात्र क्षेत्रीय नहीं रह जाते, बल्कि पाठक को ऐसा लगता है कि स्थान व वातावरण के थोड़े से अंतर को छोड़ कर वे उसके अपने आसपास ही फैले हैं। उनमें हमें अपने ही समाज के जीते-जागते लोग दिखाई देते हैं। उनमें सहजता है, स्वाभाविकता है, जीवन का स्पंदन है। चाहे वह राजू ('द गाइड') हो, स्वामी ('स्वामी एण्ड फ्रेन्ड्स') हो, जगन ('वेन्डर ऑफ स्वीट्स') हो, कृष्णन ('दि इंगलिश टीचर') हो, चंद्रन ('द बैचलर ऑफ आर्ट्स') हो अथवा अन्य कोई पात्र हो। विषय-वस्तु का विशद् ज्ञान, वर्णन तथा कथोपकथन की सजीवता, सूक्ष्म मनोभावों का चित्रण तथा रोचक, विनोदपूर्ण शैली इन सभी कहानी-उपन्यासों की विशेषता है।

प्रस्तुत उपन्यास 'द बैचलर ऑफ आर्ट्स' मालगुडी के एक ग्रेजुएट युवक चंद्रन की कहानी है। उपन्यास के प्रारम्भ में वह बी.ए. के अंतिम वर्ष का छात्र है। लेखक ने कॉलेज-जीवन तथा उसके विभिन्न पहलुओं का बड़ा रोचक, सजीव व स्वाभाविक चित्रण किया है जिसे पढ़कर पाठक (चाहे वह किसी भी उम्र का क्यों न हो) को बरबस ही अपना छात्र-जीवन याद आ जाता है। उपन्यास के सभी पात्र—चाहे वे चंद्रन व उसके मित्र हों; विभिन्न विषयों के प्रोफेसर हों; चंद्रन के परिवार के सदस्य हो, पंडित-ज्योतिषी हों; ताँगेवाला अथवा कुली हों; कवि, पत्रकार या व्यवसायी हों; या फिर दफ्तरों में काम करने वाले लोग हों—पाठक को अत्यंत परिचित मालूम होते हैं। घटनाओं के क्रमिक विकास के साथ-साथ परिस्थितिजन्य आकर्षण, प्रेम, उत्कंठा, उद्वेग, निराशा, विरक्ति, क्षोभ, अंधविश्वास व कट्टरता, उदारता, सहानुभूति, उत्साह, आनन्द, त्याग, स्नेह आदि विभिन्न मानव सुलभ प्रवृत्तियों व भावनाओं की आँखमिचौनी पाठक को प्रारम्भ से अंत तक बाँधे रखती है। विषाद तथा विनोद जुड़वाँ बंधुओं की भाँति साथ-साथ रहते हैं। छोटी-छोटी व साधारण लगने वाली दैनिक बातों व चेष्टाओं के ताने-बाने से असाधारण व अविस्मरणीय साहित्य की रचना करने में श्री नारायण सिद्धहस्त हैं। उनकी कहानी कहने की कला तथा चरित्रांकन की इन्हीं विशेषताओं के कारण प्रसिद्ध अंग्रेजी लेखक ग्राहम ग्रीन ने श्री नारायण की तुलना चेख़व और तुर्गनेव से की है।

--रमा तिवारी

बी-96, सरस्वती मार्ग, बजाजनगर, जयपुर।

भाग एक

चंद्रन कॉलेज यूनियन हॉल की सीढ़ियाँ चढ़ ही रहा था कि यूनियन का सेक्रेटरी नटेशन तेजी से आकर बोला, "मैं तुम्हें ही खोज रहा था। तुम्हें अपना पुराना वादा याद है?"

"नहीं," चंद्रन ने अपना पक्ष निरापद रखते हुए तुरंत कहा।

"तुमने मुझसे वादा किया था कि मुझे जब भी अपने वाद-विवाद आयोजन के लिए वक्ता ढूँढ़ने में कठिनाई हो, मैं तुम पर निर्भर रह सकता हूँ। अब मुझे तुम्हारी आवश्यकता है। कल शाम को जो वाद-विवाद रखा गया है उसके लिए मुझे विषय का प्रवर्तन (प्रारम्भ) करने वाला प्रथम वक्ता चाहिए। वाद-विवाद का विषय है . इस सदन की राय में, सर्वप्रथम इतिहासकारों को कत्ल किया जाना चाहिए। तुम विषय के प्रथम वक्ता (प्रवर्तक) हो। कल शाम को पाँच बजे" यह कहता हुआ वह तेजी से चल दिया किंतु चंद्रन ने उसका हाथ पकड़ लिया और बोला : "मैं इतिहास का छात्र हूँ। इस वाद-विवाद (डिबेट) में विषय प्रवर्तक नहीं बन सकता और फिर विषय भी तो कैसा! मेरे प्रोफेसर मुझे जिंदा गाड़ देंगे।"

"चिंता मत करो। मैं तुम्हारे प्रोफेसर को आमंत्रित नहीं करूँगा।"

"पर कोई और विषय क्यों नहीं?"

"हम यूनियन कैलेन्डर में तो अब परिवर्तन कर नहीं सकते।"

"तो फिर किसी और दिन, किसी और विषय पर," चंद्रन ने अनुरोध किया।

"असंभव," कहते हुए नटेशन ने अपना हाथ छुड़ा लिया।

"कम से कम मुझे विषय के पक्ष का प्रवर्तक न बना कर विपक्ष का प्रवर्तक बना दो," चंद्रन ने विनती की।

"तुम विषय का पक्ष-प्रवर्तन बहुत बढ़िया करते हो। बस..... एक घंटे के अंदर नोटिस निकल जायेगा। कल शाम को पाँच बजे.....।"

चंद्रन घर गया और सारी रात नींद में सपने देखता रहा कि वह कुल्हाड़ी लेकर अपने इतिहास के प्रोफेसर राघवाचार पर वार कर रहा है। अगली सुबह वह वाद-विवाद की तैयारी करने बैठा और एक कागज लेकर उस पर अपने विचार लिखने लगा :

"इतिहासकारों का कत्ल सर्वप्रथम किया जाना चाहिए।.... इसके बाद किसका? वैज्ञानिकों का अथवा काष्ठकारों का? यदि काष्ठकारों को पहले मार दिया गया तो चाकू आदि हथियारों (कत्ल करने में काम आने वाले) की मूठ कौन बनायेगा?" और फिर किसी को कत्ल किया ही क्यों जाये, उसने सोचा। अच्छा होगा यदि यहाँ एक-आध चुटकुला दे दूँ।.... एक बार एक इतिहासकार अपने बाग में खुदाई कर रहा था। उसे मिट्टी में दो पुराने सिक्के मिले। उन्हें देख कर उसे लगा कि वे अतीत के किसी महत्त्वपूर्ण काल के थे। बाद में पता चला कि वे केवल दो पुराने बटन थे।... ओहो! यह किस्सा कुछ जमा नहीं। मूर्खतापूर्ण! आखिर मैं करूँ क्या? ऐसी पुस्तक कहाँ पाऊँ जिसमें इतिहास विषयक चुटकुले हों। क्या समाचारपत्र में निकलवाऊँ कि मुझे इतिहास संबंधी चुटकुलों की आवश्यकता है, वे कहाँ मिलेंगे?....

लगभग एक घंटे तक वह इसी उधेड़-बुन में लगा रहा। फिर उसने अपनी कलम रख दी और जो कुछ कागज पर लिखा था उसे पढ़ने लगा। अचानक उसे अपने विषय में एक महत्त्वपूर्ण बात का पता लगा। कागज-कलम लेकर बैठने पर उसका मन एकाग्र नहीं हो पाता था, इधर-उधर भटकता था, पर यदि वह सिर झुकाए (इधर-उधर न देखता हुआ) टहल रहा हो तो एकाग्रता से किसी विषय पर विचार कर सकता था।

उसने उठ कर अपना कोट पहना और बाहर निकल गया। लगभग दो घंटे बाद जब वह बाहर घूम-फिर कर घर लौटा तो उसे इतिहासकारों की सर्वप्रथम हत्या करने के लिए केवल एक तर्क सूझा था। वह यह कि जब वैज्ञानिकों, कवियों व राजनीतिज्ञों की हत्या की बारी आए तो उनकी हत्या के तथ्यों को तोड़-मरोड़ कर विकृत करने के लिए इतिहासकारों का जीवित न होना बहुत आवश्यक है। यह तर्क उसे काफी प्रभावशाली लगा और उसने अपनी कल्पना में यह तर्क सुन कर पूरे सदन को ठहाके लगाते हुए देखा।

अगले दिन चंद्रन लगभग आधा घंटे तक कॉलेज के नोटिस बोर्ड को ध्यान से देखता रहा। एक नोटिस में शाम को होने वाले वाद-विवाद का उल्लेख था जिसमें उसका नाम भी दिया हुआ था। वह विचारमग्न-सा बरामदा पार करके अपनी क्लास मे पहुँचा। प्रोफेसर के भाषण पर ध्यान देने व नोट्स लेने में भी उसे काफी कठिनाई हुई। ज्यों ही घंटा समाप्त हुआ और शिक्षक क्लास से निकले, वह फिर इतिहासकारों

के विषय मे सोचने लगा उसी समय रामू ने जो उससे कुछ दूर की सीट पर बैठा हुआ था, पुकार कर उससे कहा, "चलो, जब तक ब्राउन न आये, कुछ देर के लिए बाहर चलें?"

"नहीं।"

"क्यों नहीं?"

"तुम जाना चाहो तो जा सकते हो", चंद्रन ने खीज कर कहा।

"हाँ, हाँ, बिल्कुल। और तुम यहाँ मुँह फुलाकर बैठे रहो," कहता हुआ रामू चल दिया। उसके जाने पर चंद्रन ने चैन की साँस ली और फिर से इतिहासकारों के बारे में सोचने लगा किंतु वह ऐसा कर नहीं सका। किसी ने उससे पिछले घंटे वाले क्लास-नोट्स देने के लिए कहा तो किसी ने और कुछ माँगा। यही सब करते-करते प्रोफेसर ब्राउन, जो कॉलेज के प्रिंसिपल भी थे, पुस्तकों का बंडल बगल में दबाये कक्षा में प्रविष्ट हुए। वे ग्रीक ड्रामा पढ़ाते थे जो काफी महत्त्वपूर्ण विषय था, अत· चंद्रन को फिर से इतिहासकारों की बात भूल कर कक्षा में दत्तचित्त होकर बैठना पड़ा।

घंटा समाप्त होने पर चंद्रन पुस्तकालय गया और उसने पुस्तकों की सूची पर नजर दौड़ाई। उसने कई अलमारियाँ खोल कर पुस्तकें देखीं किंतु कोई लाभ नहीं हुआ। वाद-विवाद का विषय ही ऐसा विचित्र था। इतिहास के पक्ष में तो काफी साहित्य उपलब्ध था किंतु इतिहासकारों को समाप्त कर देने के पक्ष में कुछ भी नहीं।

वह घर पहुँचा तो तीन बजे थे। वाद-विवाद का समय पाँच बजे था। उसने माँ से कहा : "मुझे शाम को एक डिबेट में बोलना है। मैं उसकी तैयारी करने के लिए अपने कमरे में जा रहा हूँ। मेरे कमरे का दरवाजा कोई न खटखटाये और न खिड़की के बाहर शोर मचाये।"

साढ़े चार बजे वह अपने कमरे से निकला, घर के हॉल के कुछ चक्कर लगाये, सिर पर ठंडा पानी छिड़का और वापस अपने कमरे में जाकर बाल बनाये, अपना चॉकलेटी रंग का ट्वीड का कोट पहना (जो वह विशेष अवसरों पर पहनता था) और जल्दी से घर से निकल पड़ा।

यूनियन हॉल के बरामदे में यूनियन का सचिव नटेशन उसकी प्रतीक्षा में खड़ा पसीना-पसीना हो रहा था। हॉल में मंच के नीचे अग्रिम पंक्ति में चार गद्दीदार कुर्सियाँ लगी हुई थीं जो प्रमुख वक्ताओं के लिए थीं। नटेशन ने चंद्रन को ले जाकर उनमें से पहली पर बैठाया। चंद्रन ने रुमाल से अपना चेहरा पोंछते हुए हॉल में सब ओर नजर डाली। गैलरी में यूनियन के एक हजार लोगों के बैठने की व्यवस्था थी, किंतु

वह काफी खाली पडी थी लगभग पचास छात्र जूनियर कक्षाओ के और बीस छात्र फाइनल वर्ष की कक्षाओं के ही वहाँ दिखाई दे रहे थे। नटेशन ने चंद्रन के कंधे पर झुकते हुए फुसफुसा कर कहा, "काफी लोग आये हैं, है न?" यूनियन की डिबेट के हिसाब से श्रोतागणों की संख्या काफी बड़ी ही थी।

बाहर किसी कार के रुकने की आवाज़ आई। सचिव तेजी से बाहर भागा और उसने एक मिनट बाद, मुख पर एक औपचारिक मंद मुस्कान लिए, प्रोफेसर ब्राउन के साथ हॉल में प्रवेश किया। उसने प्रोफेसर को मंच पर ले जाकर विशिष्ट कुर्सी पर बैठाया और उनसे फुसफुसा कर कार्यवाही प्रारम्भ करने के लिए निवेदन किया। प्रोफेसर ब्राउन ने खड़े होकर घोषणा की, "मैं श्री एच.वी. चंद्रन को विषय-प्रवर्तन के लिए आमंत्रित करता हूँ...." और वापस अपनी कुर्सी पर बैठ गये।

श्रोतागण ने तालियाँ बजाईं। चंद्रन उठा, उसने सामने मेज पर रखे हुए पेपरवेट पर दृष्टि जमाई और बोलना प्रारम्भ किया, "अध्यक्ष महोदय, मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह सदन, जो व्यावहारिक ज्ञान व विवेक से संपन्न है, मेरे पक्ष में सहमत होगा कि इतिहासकारों का सर्वप्रथम वध किया जाना चाहिए। मैं स्वयं इतिहास का छात्र होने के नाते विषय की जानकारी रखते हुए ऐसा कह रहा हूँ।...."

वह इस प्रकार लगभग बीस मिनट तक बोलता रहा। उसके कई मनोरंजक तर्कों पर श्रोताओं ने प्रशंसा में तालियाँ भी बजाईं।

इसके बाद विपक्ष के प्रथम वक्ता ने भी लगभग बीस मिनट तक भाषण दिया। चंद्रन यह देखकर कुछ क्षुब्ध हुआ कि उसके भाषण के समय भी श्रोतागण ने उतना ही उत्साह-प्रदर्शन किया। इसके बाद पक्ष और विपक्ष के समर्थक बारी-बारी से बोलने के लिए खड़े हुए। उन्होंने बहुत-कुछ वही बातें बोलीं जो उनके आद्य वक्ताओं ने कही थीं। जब वक्तागण बोलने के लिए खड़े होते थे तो गैलरी में काफी शोर मचता था और प्रोफेसर ब्राउन को बार-बार घंटी बजाकर श्रोताओं को शांत करना पड़ता था। कुछ ही देर में चंद्रन ऊब गया। उसके अपने भाषण के बाद के सारे भाषण उसे अनावश्यक और निम्न स्तर के जान पड़े। वह कभी हॉल में इधर-उधर नजर दौड़ाता और कभी मंच पर बैठे अध्यक्ष का मुख निहारने लगता। प्रोफेसर ब्राउन के रक्ताभ गौर मुख की ओर देखता हुआ वह सोच रहा था कि यहाँ ये बार-बार घंटी का बटन दबाते हुए छात्रों के भाषण सुनने का अभिनय कर रहे हैं जबकि इनका मन इंगलिश क्लब के टेनिस-कोर्ट और ताश की मेज की ओर लगा हुआ है। हमारे बीच इनकी उपस्थिति हमारे प्रति प्रेम के कारण नहीं, औपचारिकता के लिए है। ये यूरोपियन लोग भला और क्या करेंगे? हर महीने हजार रुपया या उससे भी अधिक वेतन लेते हैं किंतु सच्चे मन से भारतीयों की कोई सेवा नहीं करते। मानो इन्हें इंगलिश

क्लब मे मौज मजा करने के लिए ही इतना भारी वेतन दिया जाता हो ये लोग अपने क्लबों में भारतीयों को क्यों नहीं आने देते? आखिर अपने गोरे रंग का इतना अभिमान क्यों? अगर मैं कभी इतना सक्षम हो जाऊँ तो इस बात का विशेष ध्यान रखूँ कि इन क्लबों में अंग्रेजों के साथ-साथ भारतीय भी जा सकें। जो लोग (भारतीय) घर से दूर हैं, वे सारे दिन के परिश्रम के बाद कुछ घंटे इन क्लबों में बिताने का अवसर क्यों नहीं पा सकते? आखिर इन लोगों को हमारे देश में आने का निमंत्रण किसने दिया था?

अचानक उसकी विचार-शृंखला को तोड़ता हुआ प्रोफेसर ब्राउन का स्वर कानों से टकराया : "सदन के विभिन्न सदस्यों ने अपने-अपने विचार व्यक्त किए। विपक्ष के प्रथम वक्ता भी अपनी बात पूरी कर चुके हैं। मैं श्रोताओं का वोट लेने से पूर्व मिस्टर चंद्रन को बोलने के लिए आमंत्रित करता हूँ।"

चंद्रन ने जल्दी-जल्दी कागज पर कुछ लिखा और फिर खड़े होकर बोलने लगा : "माननीय अध्यक्ष महोदय और सदन के सदस्य गण! मैंने बड़े उत्साह से माननीय सदस्यों के विचार सुने। आप लोगों ने मेरे विचारों का अनुमोदन किया है अत: मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि सदन का निर्णय विषय के पक्ष में ही होगा।..." जब तक अध्यक्ष ने घंटी का बटन दबा कर समय-समाप्ति की घोषणा नहीं की, वह इसी तरह बोलता गया। बैठने से पूर्व उसने वह इतिहास के प्रोफेसर (जिसे बाग की खुदाई करते समय पीतल के बटन मिले थे) वाला किस्सा भी सुना दिया।

जब सदन का वोट लिया गया तो भारी बहुमत से निर्णय विषय के पक्ष (यानी इतिहासकारों को सर्वप्रथम समाप्त कर दिया जाये) में रहा। चंद्रन को लगा कि यह उसी की विजय हुई है। उसने बड़ी नाटकीय मुद्रा से अपनी बाँह बढ़ाकर विपक्ष के प्रथम वक्ता से हाथ मिलाया।

प्रोफेसर ब्राउन उठ कर खड़े हुए और बोले : "वैसे तकनीकी रूप से तो मुझे इस विषय पर कुछ बोलना नहीं चाहिए।" फिर उन्होंने पाँच मिनट विषय के पक्ष मे और पाँच मिनट विपक्ष में अपने विचार प्रकट किए और फिर पक्ष तथा विपक्ष के वक्ताओं को उनकी सक्षम विचार-अभिव्यक्ति व सशक्त तर्कों के लिए बधाई दी।

उनके बैठ जाने के बाद यूनियन के सचिव ने मंच पर जाकर धन्यवाद दिया। धन्यवाद-ज्ञापन का कार्य पूरा होते-होते ही हॉल खाली हो गया था।

जब तक थके हुए सचिव (नटेशन) ने हॉल की बत्तियाँ बुझवाने और मेज पोश, पेपरवेट आदि सामान भंडार में पहुँचाने की व्यवस्था की, चंद्रन दरवाजे के पास खड़ा उसकी प्रतीक्षा करता रहा और फिर दोनों साथ चल दिए।

चलो मीटिंग भी पूरी हो गई नटेशन ने सीढियाँ उतरते हुए कहा चंद्रन को आशा थी कि नटेशन उसके भाषण के बारे मे कुछ कहेगा, किंतु वह अपने ही विचारों में डूबा हुआ था। "मैंने व्यर्थ ही यह काम अपने सिर लिया," वह बोला, "पढ़ाई के लिए तो बिल्कुल भी वक्त नहीं बचता। आधा अगस्त बीत चला है और मुझे यह भी नहीं मालूम कि पॉलिटिकल फिलॉसफी (राजनीतिक दर्शनशास्त्र) क्या चीज है।"

चंद्रन को सचिव के रूप में उसके कटु अनुभवों में कोई रुचि नहीं थी। वह तो यह चाहता था कि नटेशन उसके आज के भाषण के विषय में कुछ कहे। अतः वह रुखाई से बोला : "तुमसे सचिव बनने के लिए कहा किसने था। बल्कि तुमने सचिव बनने के लिए चुनाव के समय लोगों से उधार लिया, याचना की और वोटों की चोरी तक की।"

"जानता हूँ। पर अब इसका क्या करूँ?"

"पदत्याग कर दो" चंद्रन ने कहा। उसे यह सोच कर बहुत बुरा लग रहा था कि नटेशन डिबेट के पहले जितनी खुशामद कर रहा था, डिबेट समाप्त होने पर उतना ही तटस्थ हो गया था। यहाँ तक कि उसने चंद्रन के भाषण के बारे में एक शब्द भी कहने का कष्ट नहीं किया था।

"तुम्हें एक बात बताता हूँ", नटेशन बोला, "यदि मैं यूनियन के चुनावों से दूर रहता तो लगभग सत्तर रुपये बचा सकता था।"

"क्या मतलब?"

"हर वोट के लिए मुझे लोगों को खिलाना-पिलाना पड़ा था और चुनाव वाले महीने में मेरा रेस्तराँ का बिल सत्तर रुपये बैठा था। मेरे अप्पा (पिता) ने नाराज होकर मुझे पत्र में लिखा था : "क्या तुम सोचते हो कि हमारे गाँव की गलियों में रुपया बिखरा पड़ा है?"

चंद्रन के मन में सहानुभूति जागी पर अपने भाषण की चर्चा न किये जाने पर निराशा भी थी। उसने सोचा, नटेशन से यह आशा करना कि वह भाषण के लिए कुछ कहेगा, व्यर्थ है। उसकी तो आदत ही है अपना दुखड़ा रोते रहना। यदि उसके सारे ऋण चुका दिए जायें और उसे दुनिया की सारी सुख-सुविधाएँ दे दी जायें तो भी वह शिकवा-शिकायतों के लिए कोई न कोई कारण ढूँढ़ ही लेगा।

"मैंने अभी तक रेस्तराँ का बिल नहीं चुकाया है--," नटेशन ने कहना शुरू किया।

उसकी बात पर ध्यान न देकर चंद्रन पूछ बैठा :

"बॉस के भाषण के बारे में तुम्हारा क्या ख़याल है?"

"हमेशा की तरह विनोदपूर्ण था," सचिव ने कहा।

"पता नहीं तुम लोग ऐसा क्यों सोचते हो कि वे जो कुछ बोलते हैं, विनोदपूर्ण ही होता है। उन्होंने अपने होठ हिलाये नहीं कि तुम लोगों के हँसते-हँसते पेट में बल पड़ जाते हैं।"

"क्या बात है? तुम्हारा मूड क्यों खराब है?"

"मैं मानता हूँ कि वे कभी-कभी अच्छा परिहास कर लेते हैं, किंतु----"

"तुम इस बात से इनकार नहीं कर सकते कि ब्राउन बहुत अच्छे प्रिंसिपल हैं। उनसे जब भी किसी मीटिंग की अध्यक्षता करने के लिए कहा जाये, कभी अस्वीकार नहीं करते।"

"तुम्हारे विचार से मनुष्य का सर्वोत्तम गुण यही है कि वह मीटिंग की अध्यक्षता करे!"

"नहीं नहीं, मेरा मतलब केवल यही था कि वे बड़े खुशमिजाज व्यक्ति हैं।"

"मेरे विचार से वह एक कपटी व्यक्ति है," चंद्रन ने कहा, "हजार रुपया महीना पाता है इसलिए खुशमिजाज तो दिखेगा ही। अंदर से वह दुष्ट है, यह याद रखना।"

चलते-चलते वे मार्केट रोड का आधा रास्ता पार कर चुके थे। फौवारे वाला चौराहा पार करने के बाद चंद्रन को ख़याल आया कि वह अब तक व्यर्थ की बहस में समय व शक्ति नष्ट कर रहा था। दो-चार कदम और चलने के बाद कबीर स्ट्रीट आ जाती और नटेशन मुड़ कर अंधकार में अदृश्य हो जाता। चंद्रन को समय रहते ही अपनी बात कहनी थी। अतः उसने तुरंत पूछ लिया, "मेरा आज का भाषण तुम्हे कैसा लगा?"

सेक्रेटरी चलता-चलता रुक गया और चंद्रन की बाँह थाम कर बोला : "तुम्हारा भाषण कमाल का था। काश, तुम उस समय ब्राउन का चेहरा देखते! यदि वे अध्यक्ष की कुर्सी पर नहीं होते तो शायद ताली बजाने लगते। सच, तुम्हारा वह प्रोफेसर और उसके बटनों वाला किस्सा मुझे बहुत पसंद आया। ऐसी बातें होना सचमुच सभव है। बढ़िया, शानदार भाषण था तुम्हारा। भाषण की ऐसी प्रतिभा बहुत कम लोगों में होती है।"

कबीर स्ट्रीट आने पर चंद्रन ने सहानुभूतिपूर्वक पूछा, "तुम यहाँ रहते हो?"

"हाँ।"

"अपने परिवार के साथ?"

"मेरे परिवार के लोग तो गाँव में हैं। मैं यहाँ किसी अन्य परिवार के साथ रहता हूँ। मैंने मकान का एक छोटा-सा कमरा किराये पर ले रखा है। तीन रुपया महीना किराया देता हूँ।"

"और खाना?"

"एक होटल में खाता हूँ। कुल खर्चा पंद्रह रुपया महीना पड़ता है। खाना अच्छा नहीं मिलता। कमरा भी कौनसा अच्छा है! पर क्या करूँ। चुनावों के बाद मेरे अप्पा ने मेरे खर्च में कटौती कर दी और मुझे होस्टल छोड़ना पड़ा। किसी दिन मेरे कमरे में आओ न!"

"हाँ, हाँ," खुशी से चंद्रन ने कहा।

"गुड नाइट!"

नटेशन ने कबीर स्ट्रीट की ओर कदम बढ़ाये ही थे कि अचानक चंद्रन ने पुकारा, "सेक्रेटरी!" वह वापस आया। चंद्रन ने कहा, "मैंने तुमसे जो पद-त्याग करने की बात कही थी वह केवल मजाक में। मेरा वैसा मतलब नहीं था।"

"ओह, कोई बात नहीं," नटेशन ने कहा।

"दूसरी बात यह है कि मैं ब्राउन को बिल्कुल भी नापसंद नहीं करता। मैं तुम्हारी इस बात से पूरी तरह सहमत हूँ कि वे बड़े खुशमिजाज हैं। बड़े विनोदी स्वभाव के हैं। साथ ही बड़े विद्वान भी हैं। उनसे ग्रीक ड्रामा पढ़ना सचमुच एक सुंदर अनुभव है। मैं तो केवल यह कहना चाह रहा था कि कई बार उनकी गंभीरता में भी लोग परिहास ढूँढ़ने की कोशिश करते हैं। कृपया मुझे गलत मत समझना।"

"बिल्कुल नहीं," नटेशन ने कहा और कबीर स्ट्रीट के अँधेरे में अदृश्य हो गया।

चंद्रन को अब भी मार्केट रोड का कुछ हिस्सा पार करना था। सड़क की (म्यूनिसिपैलिटी की) रोशनी और दुकानों से आने वाली गैस के लालटेनों की रोशनी से रास्ता काफी प्रकाशित था। चंद्रन नटेशन के बारे में सोचता हुआ चला जा रहा था। बेचारा! मुसीबत का मारा था। हमेशा अपनी कठिनाइयों का रोना रोता रहता था। गंदे, अस्वास्थ्यकर कमरे में रहने व घटिया भोजन करने के साथ-साथ सामान उधार लाने के कारण शायद कर्ज के बोझ से भी दबा हुआ था। गाँव में कंजूस पिता था, यहाँ पढ़ाई के साथ-साथ सचिव के कार्य का उत्तरदायित्व। आखिर वह परीक्षा में पास कैसे होगा? वैसे लड़का बुरा नहीं है, काफी समझदार लगता है।

उसके पाव उसे स्वत ही लाली एक्स्टेन्शन की ओर ले आये थे एक्स्टेन्शन का चौराहा पार करके सड़क का सबसे अंतिम मकान उसका था। अपने मकान से पहले आने वाले मकान के सामने पहुँच कर उसने आवाज दी "रामू!"

"आ रहा हूँ!" अंदर से उत्तर आया।

रामू के आने पर चंद्रन ने पूछा, "तुम डिबेट में नहीं आये?"

"चाहता तो था, पर माँ को बाजार ले जाना था। कैसी रही डिबेट?"

"मेरे विचार से बहुत अच्छी रही। प्रस्ताव का पक्ष विजेता रहा।"

"सच!" और रामू ने तपाक से चंद्रन से हाथ मिलाया। वे लोग इतने उत्साहित दिख रहे थे मानो दिल्ली की विधान सभा में वित्त संबंधी विधेयक पास करवा कर आये हों।

"मेरा भाषण भी बुरा नहीं रहा," चंद्रन ने कहा, "ब्राउन ने अध्यक्षता की थी। सुना है उन्हें मेरा भाषण बहुत पसंद आया।"....

"काफी भीड़ रही होगी?"

"हाँ काफी लोग थे। गैलरी की दो पंक्तियाँ भरी हुई थीं। काश, तुम भी वहाँ होते!"

"और लोग (विपक्ष) कैसा बोले?"

"वह तो बाद के मतदान से पता चल जाता है। अंत में ब्राउन का भाषण बढ़िया था। हास-परिहास से परिपूर्ण।..... तुम अभी रात को पिक्चर देखना पसंद करोगे?" चंद्रन ने पूछा।

"पता है, नौ बज चुके हैं।"

"तो क्या हुआ! तुम भोजन तो कर ही चुके हो। मैं भी बस पाँच मिनट से अधिक नहीं लूँगा। तब तक कोट पहन कर आ जाओ।"

"टिकट के पैसे तो तुम्हीं दे रहे हो न?" रामू ने पूछा।

"हाँ, हाँ, बिल्कुल", चंद्रन ने कहा।

घर के फाटक तक पहुँचा तो चंद्रन ने अपने पिता को बरामदे में चहलकदमी करते हुए पाया। उसके देर से घर लौटने पर वे अशांत हो उठते थे। चंद्रन ने चुपचाप बिना आवाज किए गेट खोला और अंदर दाखिल हो गया। साधारणतः वह ऐसी परिस्थिति में घर के पिछले दरवाजे से अंदर घुस जाया करता था किंतु आज उसके मन में आत्मसम्मान की भावना उमड़ आई थी। उसे लगा कि आज तक वह जो करता आया था वह महज़ एक लड़कपन सुलभ कायरता थी। वह अब अठारह का

नही बल्कि इक्कीस वर्ष का था इस उम्र मे माता पिता के भय से कायरतापूर्ण हरकते करना! छी-छी! वह शीघ्र ही ग्रेजुएट (स्नातक) होने वाला था और फिर इतना अच्छा वक्ता था।

इस भावना की प्रतिक्रिया स्वरूप उसने अनावश्यक रूप से आवाज करते हुए गेट खोला और बंद किया। गेट की आवाज सुनकर उसके पिता चौंक उठे और गेट की ओर देखने लगे। चंद्रन बड़ी निडरता से आगे बढ़ा किंतु उसके मन में यह विचार आये बिना न रहा कि अपने साहस के प्रदर्शन के लिए उसने और कोई अवसर चुना होता तो अच्छा रहता। उसे आज लौटने में रोजाना से बहुत अधिक देर हो गई थी और उसने आगे सिनेमा जाने का भी कार्यक्रम बना रखा था। अप्पा अवश्य ही उसे रोक कर तरह-तरह के प्रश्न पूछेंगे। ज्यों ही वह बरामदे की सीढ़ियाँ चढ़ने लगा, उसके पिता बोले :

"नौ बज रहे हैं।"

"मैंने एक डिबेट में भाग लिया था, अप्पा। वह काफी देर तक चली।"

"डिबेट में तुम्हारा भाषण कैसा रहा?"

चंद्रन ने उन्हें डिबेट के बारे में बताया। इस बीच उसके मन में सिनेमा जाने की चिंता लगी रही। उसके पिता रात के शो में सिनेमा जाना बिल्कुल पसंद नहीं करते थे।

"बहुत अच्छा", पिता बोले, "अब जल्दी से अंदर जाकर भोजन करो। तुम्हारी माँ इंतजार कर रही हैं।"

अंदर जाते हुए चंद्रन ने कहा, "अप्पा, रामू यहाँ आने वाला होगा। उसे इंतजार करने के लिए कहें।"

"ठीक है।"

"हम लोग आज रात को सिनेमा देखने जा रहे हैं। डिबेट के बाद कुछ खुशी मनाने का मूड हो आया, इसलिए।"

"किंतु इसे अपनी आदत न बना लेना। देर रात तक सिनेमा देखना स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है।"

चंद्रन ने तुरंत भोजन-कक्ष में प्रवेश करके रसोइए को शीघ्र भोजन परोसने के लिए कहा। रसोइया बोला, "अम्मा को भी बुला लें। वे आपका इंतजार कर रही हैं।"

"ठीक है। पहले जल्दी से मुझे दही और चावल परोस दो," कहते हुए उसने अपनी माँ को पुकारा। वे पिछले बरामदे में बैठी हुई दूर अहाते में लगे हुए नारियल

के पेडो की ओर देखती हुई माला फेर रही थीं उनके होठो पर राम का पवित्र नाम था, मन में आंशिक रूप से अपने पति, गृहस्थी, बच्चे, संबंधियों आदि के विषय में विचार चल रंहे थे और आँखें तारों भरे आकाश की पृष्ठभूमि में लहराते नारियल के वृक्षों का सौंदर्य निहारने में तल्लीन थीं।

चंद्रन की पुकार कान में पड़ने पर वे उठीं, किंतु उनके भोजन-कक्ष में पहुँचने से पूर्व ही चंद्रन अपना भोजन समाप्त कर चुका था। उन्होंने पूजा-कक्ष में जाकर माला खूँटी पर लटकाई और देवता के समक्ष दण्डवत् करने के बाद अपनी पत्तल (केले का पत्ता) के सामने आ बैठीं। तब तक चंद्रन जा चुका था। माँ ने रसोइए से पूछा, "लगता है उसने ठीक से नहीं खाया?"

"जल्दी-जल्दी केवल दही और चावल खाकर भाग गये।"

माँ ने चंद्रन को बुला कर इसका कारण पूछा तो वह बोला,

"मैं सिनेमा जा रहा हूँ।"

"पता है, आलू की चटनी तो मैंने खास तौर पर तुम्हारे ही लिए बनवाई थी और तुम केवल दही और चावल खाकर चल दिए!"

"माँ, मुझे एक रुपया चाहिए।" माँ ने चाबी का गुच्छा उसकी ओर फेंकते हुए कहा, "दराज से निकाल लो। चाबियाँ वापस मुझे दे जाना।"

चंद्रन और रामू सिनेमा घर की ओर चल दिए। रास्ते में एक दुकान पर रुक कर चंद्रन ने कुछ पान के बीड़े और एक सिगरेट का पैकेट खरीदा। रात के शो मे जाना कोई सामान्य बात तो थी नहीं कि यंत्रवत् जाकर बैठे, पिक्चर देखी और उठ कर चले आये। उनके लिए यह एक ऐसा विशिष्ट अनुभव था जिसका वे पूरी तैयारी के साथ आनन्द लेना चाहते थे। रात्रिकालीन मंद वायु के शीतल झोंकों के बीच आप आराम से, इतमीनान से पान-सुपारी चबा रहे हों, सिगरेट का धुआँ उड़ा रहे हो। फिर सिनेमाघर में जाकर वहाँ और सिगरेट पिएँ, आधी रात तक पिक्चर देखें और इसके बाद पास के किसी होटल में जाकर गर्मागर्म कॉफ़ी पिएँ तथा एक बार फिर पान व सिगरेट का आनंद लें। फिर घर जाकर सो जाएँ। रात का शो देखने का यही तो सबसे अच्छा तरीका था। चंद्रन ने इसका पूरा आनंद लिया और फिर रामू जैसा साथी! उसकी उपस्थिति इस आनंद को परिपूर्णता प्रदान कर रही थी। वह सिगरेट पीता; पान चबाता; कॉफ़ी पीता; खूब हास-परिहास करता; चंद्रन को खूब पसंद करता तो उसका मजाक भी उड़ाता, उसके साथ झगड़ा भी करता; अपने प्रोफेसरो, मित्रों और दूसरे लोगों के विषय में चटपटी चर्चाएँ करता। सचमुच उसका साथ चंद्रन के लिए अत्यधिक महत्त्वपूर्ण था।

लगता था पिक्चर शुरू हो चुकी थी, क्योंकि सिनेमाघर के बाहर भीड़ नहीं थी। यह वहाँ का एक मात्र सिनेमाघर था—एक लम्बा हॉल जिसके ऊपर नालीदार लोहे की चादरों की छत थी। छोटी-सी टिकिट-खिड़की पर आकर चंद्रन ने पूछा, "क्या पिक्चर शुरू हो गई?"

"हाँ, बस अभी-अभी", टिकटवाले ने वही हमेशा वाला घिसा-पिटा जवाब दिया। आप पौन घंटा देर से पहुँचें तब भी उसका उत्तर यही होता था-"हाँ, बस अभी-अभी।" रामू खड़ा हुआ चार आने वाले प्रवेश-द्वार के बाहर गैलरी में लगे हुए विशाल पोस्टर को निहार रहा था। चंद्रन ने उसे पुकार कर जल्दी करने के लिए कहा।

हॉल में अँधेरा था। द्वार पर खड़े टिकट-कलेक्टर ने उनसे टिकट लिए और उन्हें रास्ता दिखाया। रामू और चंद्रन परदे पर चल रही पिक्चर के प्रकाश में अपने लिए खाली सीटों की तलाश करने लगे। एक कोने में दो सीटें खाली थीं। कुर्सियो पर बैठे हुए लोगों के आगे से रास्ता बनाते हुए वे उस ओर चले। पिछली सीट से कोई चिल्लाया : "आगे से हटो, दिखाई नहीं दे रहा।" किसी प्रकार जल्दी-जल्दी रास्ता पार कर वे सीटों पर बैठ गए। असली पिक्चर तो अभी शुरू नहीं हुई थी, किंतु उसके पूर्व दिखाई जाने वाली रील लगभग समाप्ति पर थी। जैस जिम का कोई कॉमिक चल रहा था जिसमें वह मोटा पात्र अपनी विचित्र टोपी लगाए रंग के पीपे से बाहर निकलने की जी तोड़ कोशिश कर रहा था।

देख कर चंद्रन खेद से बोला, "ओह, अगर मुझे मालूम होता कि पिक्चर के साथ जैस की रील दिखाई जा रही है तो थोड़ा जल्दी आते।"

रामू तल्लीन होकर देखता हुआ ठहाके लगा रहा था। आखिर रंग के पीपे को घाघरे की तरह कमर पर पहने जैस किसी तरह अपने पाँवों पर खड़ा हुआ। जाते-जाते उसने एक बार मुड़कर दर्शकों की ओर आँख मारी और ज्यों ही पीछे की ओर कदम बढ़ाया, ठोकर खाकर गिर पड़ा और लुढ़कता हुआ चला गया। रील समाप्त हो गई। हॉल के बीच वाली रोशनी जला दी गई। चंद्रन व रामू गरदन मोड़ कर हॉल का निरीक्षण करने लगे। इतने में वापस हॉल में अँधेरा हो गया और परदे पर असली पिक्चर 'लाइटगन्स ऑफ लॉरो' प्रारम्भ हो गई। कहानी-लेखक, निर्देशक, निर्माता, ड्रेस-डिजाइनर इत्यादि से संबंधित प्रारंभिक सूचनाओं के बाद एक गीत से कहानी का प्रारम्भ हुआ। उसके बाद के दृश्य में एक ग्रामीण बाला (विवियन ट्रॉयलेट) चौखाने का स्कर्ट पहने हुए गली में जाती दिखाई गई। इस प्रकार शांत से वातावरण मे प्रारम्भ हुई वह पिक्चर तेजी से आगे बढ़ने लगी और एक घंटे के अंदर उसमे प्रेम, वीरता, दुष्टता, षड्यंत्र, युद्ध आदि सभी कुछ आ गये और फिर मध्यातंर होने के

साथ हॉल में प्रकाश हो गया। वातावरण में तंबाकू की गंध भरी हुई थी। रामू ने उबासी ली, खड़े होकर पीछे की अधिक पैसों के टिकट वाली सीटों पर दृष्टि डाली और बोला, ''चंद्रन, प्रथम श्रेणी में ब्राउन किसी लड़की के साथ बैठा हुआ है।''

''हो सकता है उसकी पत्नी हो,'' चंद्रन ने बिना उधर देखे कहा।

''पत्नी नहीं है।''

''तो कोई और होगी। ये गोरे तो पैदा ही मौज उड़ाने के लिए हुए हैं। हमारे देशवासी ढंग से जीना नहीं जानते। यदि किसी के साथ लड़की दिख जाये तो सैंकड़ों ऑखें उसे घूरने लगती हैं और सैकड़ों मुँह उस पर फबतियाँ कसने लगते हैं, जबकि ये यूरोपियन लोग तो बिना लड़कियाँ साथ लिए बाहर जाते ही नहीं हैं।''

''अभागा है यह देश'', रामू खेदपूर्वक बोला।

चंद्रन पर एकदम शिष्टता की सनक सवार हो गई और उसने रामू को खींच कर सीट पर बैठाते हुए कहा, ''इस तरह खड़े होकर पीछे बैठे हुए लोगों को घूरना भारी असभ्यता है।''

हॉल में वापस अँधेरा हो गया। परदे पर एक-एक क्षण के लिए कुछ विज्ञापन दिखाए गए।

''यह भी अच्छा है कि ये बेकार चीजें अधिक समय तक नहीं दिखाते'' चद्रन ने कहा।

''इनमें से प्रत्येक विज्ञापन के लिए इन्हें बीस रुपया महीना मिलता है।''

''नहीं, नहीं, केवल पंद्रह रुपये मिलते हैं।''

''किसी ने बताया था कि बीस मिलते हैं।''

''पंद्रह रुपये मिलते हैं। मैं कह रहा हूँ न।''

''फिर भी। क्या यह बेईमानी नहीं है? इतने कम समय के लिए दिखाना! मैं उस विज्ञापन में शिशु-आहार का नाम तक नहीं पढ़ पाया था कि उसका स्थान सिगरेट के विज्ञापन ने ले लिया। मूर्ख कहीं के। मुझे विज्ञापनों से घृणा है।''

विज्ञापन समाप्त हुए और पिक्चर की कहानी आगे बढ़ी। कहानी के नायक को दस गज दूर से ही घात में बैठे हुए दुष्टों का पता चल गया। उसने छोटा वाला रास्ता पकड़ा, एक चट्टान पर चढ़ा और पीछे से उन्हें आतंकित कर दिया। इसी प्रकार कभी आग के और कभी पानी के बीच से लोग बढ़ते रहे और घटनाक्रम चलता रहा। अंत में नायक की (यानी अच्छाई की) विजय के साथ पिक्चर समाप्त हो गई। नायक एक सच्चा, साहसी, रूपवान और दृढ़ व्यक्ति था। उसकी विजय तो अंत मे

होनी ही थी। इस बात को भला कौन नहीं जानता था। किंतु फिर भी रोजाना हर शो में लोग इसी तरह दिल थामे इस सुखद अंत की प्रतीक्षा करते थे। सुखद अंत यानी कहानी के प्रारम्भ में जो लोग विरोधी थे उनका भी अंत में हृदय-परिवर्तन हो गया और वे भी प्रेमी-प्रेमिका के मिलन में सहायक हो गये। गुड नाइट।

हॉल में रोशनी हो गई। लोग उबासी लेते हुए, उनींदे, थकी हुई आँखों को मलते हुए बाहर निकलने लगे। पिक्चर के बाद सिनेमा हाउस से वापस घर जाना इस कार्यक्रम का सबसे उबाऊ भाग था। दो-तीन कारें हॉर्न बजाती हुई उनके सामने से निकलीं।

"खुशकिस्मत हैं साले। पाँच मिनट में अपने बिस्तर पर पहुँच जायेंगे। मैं जब कमाने लगूँगा तो सबसे पहले कार खरीदूँगा। कार का कोई मुकाबला नहीं। बस पिक्चर देखी और सीधे बिस्तर पर पहुँचे।"

जब वे लोग प्रकाश से जगमगाते कॉफ़ी-होटल के सामने से निकल रहे थे तो चंद्रन ने रामू से कॉफ़ी के लिए पूछा, पर दोनों को नींद आ रही थी अतः वे लोग वहाँ न ठहर कर सीधे घर की ओर बढ़ते रहे। पहले रामू का घर आया। उससे विदा लेकर चंद्रन अपने घर पहुँचा, धीरे से गेट खोला और हॉल में सो रहे अपने छोटे भाई को जगा कर दरवाजा खुलवाया व अपने कमरे में पहुँचा। उसने अँधेरे में ही अपना कोट उतार कर कुर्सी पर फेंका, जमीन पर बिस्तर डाला और बिस्तर के लंबा होने से पूर्व ही आँखें मूँद लीं।

जुलाई, अगस्त, सितम्बर और अक्टूबर तो ऐसे महीने थे जो बड़ी तेजी से, बडी सहजता से निकल जाते थे।

सुबह सोकर उठे, थोड़ी सी पढ़ाई की, दिन में कॉलेज गये, सांध्य भ्रमण के लिए सरयू नदी के तट पर चले गये, लगभग साढ़े आठ बजे घर लौट कर थोडी देर घर के लोगों से गपशप की और फिर सो गये। मेज पर पूरी पुस्तकें हैं या नहीं या कक्षा में लिए गए नोट्स भी पूरे हैं या नहीं, इसके प्रति भी सजग नहीं रहते थे। यह क्रम ऐसे ही चलता रहता था जब तक कि नवम्बर प्रारम्भ नहीं हो जाता। नवम्बर आने पर ही इस बात का ख़याल आता था कि आधा साल निकल चुका है। साल भर की पढ़ाई अब छ: महीने में करनी होगी।

नवम्बर के पहले दिन चंद्रन सुबह पाँच बजे उठ गया, ठंडे पानी से नहाया और पढ़ने बैठ गया। उस समय तक उसकी माँ भी, जो घर में सबसे पहले उठती थी, सोकर नहीं उठी थीं। वह पढ़ाई के लिए टाइम टेबल बनाने लगा।

एक योजना यह थी कि वह रोजाना इसी समय उठे, ठंडे पानी से स्नान करे और फिर कॉलेज जाने से पहले पूरे तीन घंटे जम कर पढ़ाई करे। दूसरी योजना यह थी कि शाम को आठ बजे से पूर्व घर लौट आए और साढ़े ग्यारह बजे तक पढे। उसने धूम्रपान छोड़ने का भी निश्चय किया क्योंकि यह हृदय के लिए अच्छा नहीं होता और परीक्षा की तैयारी के लिए हृदय का स्वस्थ रहना बहुत आवश्यक था।

उसने एक कागज लेकर उस पर अपने सब विषयों के नाम लिखे। फिर नवम्बर से मार्च तक जितने घंटे पढ़ाई के लिए उपलब्ध थे, उनका हिसाब लगाया। एक हजार से कुछ अधिक घंटे थे जिनमें छुट्टियों के बारह घंटे रोज भी शामिल थे। इस समय का आधुनिक इतिहास, प्राचीन इतिहास, राजनीतिक सिद्धान्त, ग्रीक ड्रामा, एटीन्थ सेन्चुरी प्रोज़ (अठारहवीं सदी का गद्य), शेक्सपियर के नाटक आदि विषयों के अध्ययन

के लिए उपयुक्त विभाजन करना था उसने एक ऐसी समय सारिणी तैयार की जिसके अनुसार इन सभी विषयों पर समान रूप से ध्यान दिया जा सके। एक विषय में शत प्रतिशत अंक पा लेने और दूसरे में लुढ़क जाने से तो काम चल नहीं सकता था।

दैनिक अध्ययन के छः घंटों में से तीन घंटे ऐच्छिक विषयों को देने थे और तीन अनिवार्य विषयों को। अनिवार्य विषय सुबह के समय और साहित्य का अध्ययन रात के समय। यूरोपियन हिस्ट्री को याद करने के लिए सुबह का समय ही ठीक था, जबकि दिमाग ताजा रहता है और साहित्य का अध्ययन रात को विशेष आनन्ददायक लगेगा।

उस दिन के लिए उसने शेक्सपियर के नाटक 'ओथेलो' और भारतीय इतिहास के आधुनिक काल के अध्ययन का कार्यक्रम निश्चित किया। उसने अनुमान लगाया कि वह इन दोनों को लगभग अड़तालीस घंटों में समाप्त करके, मिल्टन और ग्रीक हिस्ट्री प्रारम्भ कर देगा और उसने पूरे जोर-शोर से अपना कार्यक्रम शुरू किया।

भारतीय इतिहास का आधुनिक काल हाथ में लेते ही अनेकों कठिनाइयाँ दृष्टिगोचर हुई। इस विषय पर कई पुस्तकें थीं और कक्षा में लिए गए नोट्स भी बहुत अधिक थे। यदि वह आधुनिक काल ही पढ़ता रह गया तो मध्य काल और प्राचीन काल का क्या होगा? उन दोनों की भी तो उपेक्षा नहीं की जा सकती थी। तो फिर क्या वह इतिहास ही पढ़ता रह जाये और अन्य विषयों की तैयारी नहीं करे? लगभग आधे घंटे तक वह इस समस्या पर विचार करता रहा।

उस समय तक घर के सभी लोग उठ चुके थे। उसके पिता बगीचे में पेड़-पौधों का निरीक्षण कर रहे थे। उसकी खिड़की के सामने से निकले तो बोले . "आज तो तुम बड़ी जल्दी उठ गये!"

"अब मैं रोजाना सुबह पाँच बजे उठा करूँगा," चंद्रन ने कहा, "आज नवंबर का पहला दिन है। अठारह मार्च से मेरी परीक्षा है। मैंने गिनकर देखा है। 128 से भी कम दिन बचे हैं और पता है मुझे कितने पृष्ठ पढ़ने हैं? लगभग पाँच हजार पृष्ठ पुस्तको के और क्लास-नोट्स अलग। यानी एक सौ अट्ठाईस दिनों में लगभग बीस हजार पृष्ठ। इसीलिए तो मुझे इतना जल्दी उठना है। हो सकता है बाद में और भी जल्दी उठने की आवश्यकता पड़े। मैंने अपने काम का पूरा टाइम-टेबल बनाया है। आप देखेंगे?"

उसके पिता ने अंदर आकर उसके बनाए हुए टाइम-टेबल पर नजर डाली। कागज पर जो कुछ लिखा गया था वह उन्हें रेलवे टाइम टेबल की ही तरह दुरूह जान पड़ा और कुछ भी समझ में नहीं आया। कुछ देर असफल प्रयत्न करने के बाद वे बोले : "मुझे यह ठीक से समझ में नहीं आ रहा है।" चंद्रन ने उन्हें अपना

टाइम टेबल समझा कर अपनी समस्या भी बताई और उनकी राय माँगी बोला "यदि मैं इतिहास का केवल आधुनिक काल पुस्तक में से पढ़ूँ और शेष सारा नोट्स से, तो क्या यह ठीक रहेगा?" उसके पिता विज्ञान के स्नातक थे, अतः इतिहास के मामले में राय देना उनके लिए कठिन था। कहने लगे : "मेरे विचार से तो तुम्हे इस तरह का ख़तरा नहीं उठाना चाहिए।" चंद्रन को निराशा हुई। उसे उम्मीद थी कि उसके पिता उसके विचार से सहमत होंगे। किंतु उन्होंने जो परामर्श दिया उससे वह मन ही मन खीज उठा। सोचने लगा : "इनसे पूछने से क्या लाभ? इन्होने कभी इतिहास तो पढ़ा नहीं है।"

"अप्पा, आप नहीं जानते प्रोफेसर राघवाचार कक्षा में कितने बढ़िया भाषण देते हैं। उनके भाषणों में इतिहास की सारी पुस्तकों का निचोड़ होता है। उनके नोट्स पढ़ कर आई.सी.एस. की परीक्षा तक पास की जा सकती है।"

"यह तो तुम जानो", कहते हुए अप्पा वापस बगीचे की ओर जाने के लिए मुड़े। जाते-जाते बोले : "चंदर, बाजार की ओर जाओ तो थोड़ा तारों का जाल लेते आना। कोई व्यक्ति अहाते की डोली के पास लगे हुए बेले के पौधे से रोजाना फूल चुरा ले जाता है। मैं वहाँ आड़ लगाना चाहता हूँ।

"वह देखने में अच्छा नहीं लगेगा, अप्पा।"

"लेकिन और किया ही क्या जा सकता है? सवेरा होने से पहले ही कोई आकर फूल चुरा लेता है।"

"आखिर फूल ही तो चुराता है", चंद्रन ने कहा। अप्पा बड़बड़ाते हुए चले गये।

चंद्रन ने फिर से अपने काम की ओर ध्यान लगाया और तय किया कि वह पुस्तक से केवल आधुनिक युग पढ़ेगा। उसने पुस्तक लेकर उसकी धूल झाड़ी और मुगल आक्रमण से पढ़ना प्रारम्भ किया। यह महीन अक्षरों और चिकने पृष्ठों वाली मोटी-सी पुस्तक थी जिसमें स्थान-स्थान पर भूतपूर्व शासकों के मटमैले से चित्र थे। पाँच पृष्ठ पढ़ने के बाद नौ बजे उसने पुस्तक बंद कर दी। उसके मन में टाइम-टेबल के अनुसार पढ़ाई शुरू कर देने का संतोष था।

नाश्ता करने के लिए अंदर जाते समय उसने बरामदे में खड़े अपने भाई सीनू को देखा जो दूर किसी सुपारी के पेड़ पर बैठे हुए कौओं की ओर ताक रहा था। वह अभी केवल आठ वर्ष का था और अलबर्ट मिशन स्कूल में तीसरी कक्षा का छात्र था। चंद्रन ने उससे कहा : "सुबह-सुबह आकाश की ओर ताकते हुए समय क्यों नष्ट कर रहे हो?"

"मैं नहाने के लिए इंतजार कर रहा हूँ। स्नान-घर में कोई गया हुआ है।"

"अभी केवल नौ बजे हैं। नहाने की ऐसी क्या जल्दी है? स्नान-घर के सामने खड़े रह कर सारा दिन बिता देने का इरादा है क्या? जाकर अपनी पढ़ाई करो। स्नान-घर खाली होने पर तुम्हें बुला लिया जायेगा। मैं दुबारा तुम्हें इस तरह वक्त बरबाद करते न देखूँ!"

सीनू चल दिया। चंद्रन को गुस्सा आ रहा था। जिन दिनों वह अलबर्ट मिशन स्कूल में था, हर सुबह कम से कम दो घंटे पढ़ता था। "आजकल बच्चे कैसे गैर-जिम्मेदार होते जा रहे हैं," उसने सोचा।

इतने में उसकी माँ हाथ में फूलों की डलिया लिए आती दिखाई दीं, बोली : "कोई बगीचे के सारे फूल ले जाता है। क्या इस मुसीबत से छुटकारा पाने का कोई उपाय नहीं है? इस घर में कोई किसी चीज की परवाह ही नहीं करता।" वे इस समय शिकायत के मूड में थीं, जो इस समय उनके लिए स्वाभाविक था। सुबह उन्हें कई काम होते थे—दूध वाले, सब्जी वाले, तेली आदि से सामान लेना; रसोइए और नौकरों को काम के लिए आवश्यक निर्देश देना; पूजा के लिए फूल चुनना और अपने पति व बच्चों की फरमाइशें पूरी करना।

चंद्रन जानता था कि इस समय उनसे बहस करना ठीक नहीं होगा, अतः उन्हे तसल्ली देते हुए बोला : "रात को फाटक पर ताला लगा देंगे और डोली पर तारो वाली जाली लगा देंगे।"

"तारों वाली जाली? उससे मकान कितना खराब दिखेगा! क्या तुम्हारे अप्पा फिर तारों वाली जाली की बात कर रहे थे?"

"नहीं, नहीं," चंद्रन ने कहा, "अप्पा ने तो केवल अंतिम उपाय के रूप मे तारों के जाल की बात कही थी।"

"तारों की जाली तो नहीं लगाएँगे," माँ ने निश्चयपूर्वक कहा, "कुछ और ही तरकीब करनी पड़ेगी।" चंद्रन मन ही मन कोई उपाय सोचने लगा। आखिर क्या किया जाये? घर के चारों ओर खाई खोद कर उसमें घड़ियाल रख छोड़ना तो सभव नहीं है। खैर, फिलहाल माँ उसकी तसल्ली से शांत होकर बोलीं, "तुम्हारे अप्पा कम से कम पच्चीस रुपये बगीचे पर और दस रुपये माली पर खर्च करते हैं। यदि हमें पूजागृह में देवता पर चढ़ाने के लिए मुट्ठी भर फूल भी न मिल सकें तो इस खर्चे का क्या लाभ?"

उस दिन मध्याह्न के समय चौराहा पार करते समय चंद्रन को इतिहास के प्रोफेसर राघवाचार मिले। वह उन्हें नमस्कार करके आगे बढ़ ही रहा था कि उन्होंने पुकार

लिया चद्रन को कुछ अजीब सा लगा क्योकि कक्षा के बाहर प्रोफेसरो के व्यक्तिगत सपर्क में केवल वही छात्र आ पाते थे जो या तो सर्वाधिक प्रतिभाशाली होते थे या फिर चाटुकार किस्म के होते थे। चंद्रन इन दोनों ही श्रेणियों में नहीं आता था। प्रोफेसर ने उससे पूछा : "आज तुम्हारी कक्षाएँ कितने बजे तक होंगी?"

"साढ़े चार बजे तक, सर।"

"इसके बाद मुझसे मेरे कमरे में मिलना।"

जब उसने रामू को इस मुलाकात के बारे में बताया तो उसने पूछा : "कहीं तुमने उनके घर में कोई बम-वम रखने की कोशिश तो नहीं की थी?"

"मुझे यह मज़ाक पसंद नहीं आया," चंद्रन ने चिढ़ कर कहा।

"सुन कर निराशा हुई। आखिर तुम मुझसे चाहते क्या हो?" रामू ने पूछा।

"यही कि आप चुप रहें। बात का कुछ भी अर्थ निकालने की कोशिश न करें।"

वे दोनों उस समय कक्षा के बाहर सीढ़ियों पर बैठे हुए थे। रामू उठ खड़ा हुआ और बोला : "यदि तुम्हें, मेरी जरूरत हो तो मैं पाँच बजे तक वाचनालय में मिलूँगा।"

"साढ़े तीन बजे 'ओथेलो' की क्लास है।"

"मैं उसमें उपस्थित नहीं रहूँगा," कह कर रामू चल दिया।

चंद्रन अकेला बैठा अनुमान लगाता रहा कि आखिर राघवाचार उससे क्यों मिलना चाहते थे। चंद्रन ने उनके साथ कोई अशिष्टता नहीं की थी।..... लायब्रेरी की कोई पुस्तक भी लौटानी बाकी नहीं थी।....

हाँ, दो-एक टैस्ट चंद्रन ने नहीं दिए थे, किंतु राघवाचार टैस्ट की कापियाँ जाँचते ही कब थे जो उन्हें पता चलता। कहीं ऐसा तो नहीं कि उन्होंने अचानक एक साथ ही सारे टैस्टों की कापियाँ जाँच ली हों और उन्हें पता चल गया हो कि चंद्रन ने कुछ टैस्ट नहीं दिए? किंतु यदि डाँटने योग्य कोई बात होती तो प्रोफेसर सारी कक्षा के सामने ही डाँटना पसंद करते। सारी क्लास के सामने डाँटने का अवसर भला कोई भी प्रोफेसर कैसे छोड़ देगा? अपने कमरे में बुला कर क्यों डाँटेगा? और फिर रामू तो एक भी टैस्ट में नहीं बैठा था, उसे क्यों नहीं बुलाया गया?

इतने में घंटी बजी। चंद्रन अपनी कक्षा में जाकर सीट पर बैठ गया, अपनी 'ओथेलो' (शेक्सपियर का नाटक) खोली और कागज तथा पेन निकाल लिया। इस समय मिस्टर गजपति की क्लास थी, जो इंगलिश के सहायक प्रोफेसर थे। वे पतली-

सी मूँछों और मोटे चश्मे वाले दुबले-पतले आदमी थे। उन्हें न छात्र पसंद करते थे और न शिक्षक गण। छात्र उनके पढ़ाने के ढंग के कारण और उनके साथी शिक्षक उनके दंभी स्वभाव के कारण। वे हर जगह यह कहते फिरते थे कि शेक्सपियर को समझने वाले पूरी दुनिया में दस व्यक्ति भी नहीं निकलेंगे। उनके कथनानुसार फ़ाउलर की पुस्तक 'मॉडर्न इंगलिश यूसेज' (जो अत्यन्त प्रामाणिक मानी जाती थी) मे भी भारी अशुद्धियाँ थीं। वे हमेशा दूसरों की अंग्रेजी में गलतियाँ निकालते रहते थे और कहते थे कि अंग्रेजी लिखना भारतीयों के बस की बात नहीं है। उनकी ये बातें उनके सह-शिक्षकों को, जो अपने भाषण अंग्रेजी में तैयार करते थे और अपनी अंग्रेजी काफी अच्छी समझते थे, बहुत अखरती थीं। परीक्षा की कापियाँ जाँचते समय वे किसी को भी चालीस प्रतिशत से अधिक अंक नहीं देते थे। विराम चिन्हों के प्रयोग का तो वे स्वयं को विशेषज्ञ ही मानते थे और उत्तर-पुस्तिकाएँ जाँचते समय विराम चिन्हों संबंधी छोटी से छोटी अशुद्धि का भी आधा अंक काट लेते थे।

वे द्रुत गति से हॉल में आये, लगभग उछल कर प्लेटफ़ार्म पर चढ़े, पुस्तक ('ओथेलो') खोली और पढ़ना शुरू किया। वे शेक्सपियर के नाटकों को अपने देशी लहज़े में एक ही स्वर में पढ़ते थे। बीच-बीच में, अपने इस पढ़ने के क्रम को तोड़ कर, शेक्सपियर के प्रसिद्ध आलोचकों की आलोचना भी करने लगते थे। जैसे "यद्यपि डाउडन ने ऐसा कहा है किंतु मैं बड़े-बड़े प्रसिद्ध नामों से प्रभावित होने वाला नहीं हूँ। मैं खुद अपना स्वतंत्र मत रखता हूँ। माना कि ब्रेडले आदि ने शेक्सपियर के सबध में अनुसंधान किया है किंतु हम आँख मूँद कर उनकी बातों को सत्य नहीं मान सकते"..... आदि आदि। प्रोफेसर गजपति इस प्रकार के छिद्रान्वेषण में सतत प्रयत्नशील रहते थे।.....

चंद्रन ने नोट्स लेने की कोशिश की, किंतु जब उन (नोट्स) पर एक दृष्टि डाली तो देखा कि वे केवल गजपति की व्यक्तिगत विचारधारा मात्र लग रहे थे। अत: वह अपना पेन एक तरफ रख कर पीछे सरक कर बैठ गया। गजपति को यह बिल्कुल पसंद नहीं था कि छात्रगण इस तरह आराम से बैठे हुए उनकी ओर ताकते रहें। इस प्रकार दो सौ जोड़ी आँखें उन्हें घूरती रहें तो संभवत: उन्हें घबराहट होती होगी। अत: वे हमेशा निर्देश देते रहते थे : "सिर नीचे हों और पेंसिलें चलती रहें। पेंसिलों के माध्यम से ही आप लोग मेरी बातें सुनें!"

चंद्रन को इस प्रकार बैठे देख कर वे पूछ बैठे : "क्या बात है, आराम कर रहे हो?"

"जी, सर।"

"जी सर क्या, अपना पेन उठाओ। लिखना शुरू करो।"

"जी सर," कह कर चंद्रन ने पेन उठा लिया और लिखना शुरू किया : "ओह, गजपति! गजपति! तुम अपनी बकवास कब बंद करोगे? क्या तुम सोचते हो कि तुम्हारा भाषण बड़ा रोचक और उपयोगी है? इन दो पंक्तियों में शेक्सपियर ने इयागो के चरित्र को सबसे अधिक उजागर किया है।.... 'गज' का अर्थ होता है हाथी और 'पति' का अर्थ मालिक या मुखिया। वाह कितना बढ़िया नाम है तुम्हारा—हाथियों का मुखिया!" और इसके बाद उसने चश्मा लगाये हुए एक हाथी का चित्र बना दिया।

"चंद्रन, क्या तुम नोट्स ले रहे हो?"

"जी, सर।"

इतने में घंटा बज गया। गजपति घंटा बज जाने के बाद भी अपना भाषण बंद नहीं कर रहे थे, लेकिन जब वेरिटी (ए.डब्लू.वेरिटी का संस्करण) के 'ओथेलो' की दो सौ प्रतियाँ एकदम 'फटाक' की आवाज के साथ बंद हो गईं और छात्रगण अपनी-अपनी सीट से उठ खड़े हुए तो उनके पास भाषण बंद कर देने के अतिरिक्त और कोई चारा न रहा।

ज्यों ही चंद्रन कक्षा के बाहर निकलने लगा गजपति बोले : "चंद्रन, एक मिनट!" चंद्रन रुक गया, सोचने लगा : "आज सभी लोग मुझे क्यों बुला रहे हैं?"

गजपति ने कहा : "मैं तुम्हारे क्लास-नोट्स देखना चाहता हूँ।"

चंद्रन घबरा गया। उसे और कुछ तो स्पष्ट रूप से याद नहीं आया पर इस बात का ध्यान आ गया कि उसने हाथी का चित्र बनाया था। हाँ, यह अवश्य याद रहा कि उसने जो कुछ लिखा था, गजपति को दिखाने योग्य नहीं था। एक क्षण तो उसके मन में आया कि कोई झूठा बहाना बना कर भाग जाये। किंतु गजपति जैसे तुच्छ व्यक्ति के लिए झूठ बोलना मन को गवारा न हुआ। वह बोला : "सच पूछिए तो मैं आज बिल्कुल भी नोट्स नहीं ले सका। माफ कीजिएगा सर, मैं जरा जल्दी में हूँ। मुझे अभी तुरन्त प्रोफेसर राघवाचार से मिलना है।"

ज्यों ही चंद्रन प्रोफेसर के कक्ष के निकट पहुँचा, उसके मन में घबराहट होने लगी। उसने अपने कोट के बटन ठीक से लगाये, एक मिनट के लिए झिझका, किंतु फिर सोचने लगा, "यह भय किसलिए? चाहे राघवाचार हो या कोई और, मैं भला किसी से क्यों डरूँ? वे भी तो मेरी ही तरह मनुष्य हैं। उनका चश्मा, साफा और लम्बा कोट उतार कर यदि उन्हें केवल एक लँगोटी में खड़ा कर दिया जाये तो उनका सारा रौब-दाब झड़ जायेगा। एक चश्मे, साफ़े और लम्बे काले कोट से भयभीत होने में भला क्या तुक है?

कक्ष में प्रवेश कर चंद्रन ने राघवाचार को अभिवादन किया। राघवाचार एक मोटी-सी लाल रंग की पुस्तक पढ़ रहे थे। उन्होंने पढ़ते-पढ़ते सिर उठाकर चद्रन की ओर देखा और एकाएक उसके आने का कारण नहीं समझ सके।

''सर, आपने आज साढ़े चार बजे मिलने के लिए कहा था,'' चंद्रन ने कहा।

''हाँ, हाँ, बैठो।''

चंद्रन एक कुर्सी के किनारे पर टिक गया। राघवाचार अपनी कुर्सी की पीठ का सहारा लिए कुछ देर छत को ताकते रहे। चंद्रन का घबराहट के मारे गला सूख रहा था किंतु उसने अपनी उसी पुरानी कल्पना (लँगोटी मात्र पहने राघवाचार की) के सहारे अपना आत्मविश्वास बनाये रखा।

''मैं कॉलेज में एक हिस्ट्री-एसोसिएशन (इतिहास के छात्रों का संघ) प्रारम्भ करने के बारे में तुम्हारी राय जानना चाहता हूँ।''

चंद्रन ने चैन की साँस ली और बोला : ''यह तो बहुत अच्छी योजना है सर,'' और मन में यह सोच कर विस्मित हुआ कि इन्होंने इस परामर्श के लिए मुझे ही क्यों चुना।

''तुम्हें करना यह है कि दिनांक पंद्रह को इस संबंध में एक मीटिंग की व्यवस्था करनी है। बाकी कार्यक्रम इसके बाद होगा,'' प्रोफेसर ने आदेशात्मक स्वर में कहा।

''जी, सर।''

''तुम इस एसोसिएशन के सचिव होंगे और मैं अध्यक्ष।.... तो पंद्रह तारीख को मीटिंग होना तय रहा।''

''सर, क्या आपको नहीं लगता कि.....''

''क्या नहीं लगता?'' प्रोफेसर ने पूछा।

''कुछ नहीं, सर।''

''देखो, इस तरह आधी-अधूरी बातें बोलना मुझे पसंद नहीं। तुम जो कुछ कहना चाहते थे कह डालो। उसके बाद ही मैं आगे बढ़ूँगा।''

चंद्रन ने अपना गला साफ करते हुए कहा : ''कुछ नहीं, सर। मैं तो केवल इतना ही कहना चाहता था कि आप सेक्रेटरी किसी और को बना देते तो बेहतर रहता।''

''इस बात का निर्णय तो तुम मुझ पर ही छोड़ दो।''

''जी, सर।''

''एसोसिएशन शुरू करने के मामले में तो तुम्हें कोई आपत्ति नहीं है?''

बिल्कुल नही, सर

"बहुत अच्छा। मैं ऐसा महसूस करता हूँ कि लोगों में ऐतिहासिक तथ्यों की जानकारी का अत्यधिक अभाव है। इस अभाव को दूर करने का यही तरीका नजर आता है कि हम एक एसोसिएशन प्रारम्भ करें, उसमें सभाएँ करें और अपने लेख, भाषण आदि प्रस्तुत करें।"

"मैं समझ रहा हूँ, सर।"

"फिर भी तुम मुझसे पूछते हो कि एसोसिएशन क्यों बनाएँ!"

"नहीं सर, ऐसा बिल्कुल नहीं है।"

"तुम अपने दो-एक मित्रों से भी इस विषय में बात कर लेना और एसोसिएशन की प्रारंभिक सभा के बारे में निश्चित कार्यक्रम बना कर मुझसे मिलना।"

चंद्रन उठ खड़ा हुआ।

"लगता है तुम्हें जाने की बहुत जल्दी है!" राघवाचार ने बाघ की तरह गुर्रा कर कहा।

"नहीं सर," कह कर चंद्रन फिर बैठ गया।

"यदि तुम्हें जाने की जल्दी हो तो मैं तुम्हें नहीं रोक सकता क्योंकि छुट्टी का समय (साढ़े चार से ऊपर) हो गया है। अगर जल्दी नहीं हो तो कुछ और बातें भी तय कर ली जायें।"

"जी, सर।"

'जी सर, जी सर' रटने से तो कोई लाभ नहीं। तुम्हें कोई उपयोगी सुझाव देना चाहिए।"

"मैं अपने कुछ मित्रों से परामर्श करके फिर आपके पास आऊँगा, सर।"

"ठीक है। अब तुम जा सकते हो।"

चंद्रन विचारों में डूबा हुआ प्रोफ़ेसर के कक्ष से बाहर निकला। अपना सचिव बनाया जाना उसे कुछ अच्छा नहीं लग रहा था। उसे लग रहा था कि उसका हाल भी अब यूनियन के सचिव नटेशन जैसा होने वाला है। नटेशन को आए दिन सभा-सम्मेलनों की व्यवस्था करने के अतिरिक्त कुछ भी सोचने की फ़ुरसत नहीं मिलती थी। जैसे अपना और कोई व्यक्तित्व ही न हो। उसका तो अभी से यह हाल था कि वह एसोसिएशन की प्रारंभिक मीटिंग के विचार से अत्यधिक चिंतित हो उठा था। इस एक ही मीटिंग की व्यवस्था करनी होती तब भी कोई बात थी। उसे तो मार्च से पूर्व लगभग आधा दर्जन ऐसी सभाओं की व्यवस्था करनी होगी। विविध ऐतिहासिक

विषयों पर छात्रों के निबंध-वाचन, मोटी तोंद वाले बूढ़ों के ज्ञान-गरिष्ट भाषण, सचिव के धन्यवाद-ज्ञापन वाले भाषण आदि के आयोजन व तैयारियाँ करनी पड़ेंगी। उसे इस सारे जंजाल से भारी वितृष्णा महसूस होने लगी। उसे इन सारे भाषणों के दौरान शुरू से अंत तक बैठे रहना होगा। जब तक कि हॉल की रोशनी बुझा कर ताला न लगा दिया जाये, उसे वहीं रहना पड़ेगा। फिर वह रात होने पर सिर में दर्द लिए लौटेगा। रामू के साथ नदी-तट पर टहलने भी नहीं जा सकेगा। सुबह उसकी रामू से भी कुछ तनातनी हो गई थी। वह रामू को ढूँढ़ने के लिए कॉलेज के वाचनालय मे पहुँचा जहाँ रामू उसका इंतजार करने वाला था। लगभग आधा दर्जन छात्र बैठे पत्र-पत्रिकाएँ पढ़ने में व्यस्त थे, पर रामू वहाँ नहीं था। शायद शतरंज-कक्ष में हो, उसने सोचा। रामू को शतरंज खेलने का तो शौक नहीं था, पर वह कभी-कभी दूसरों का खेल देखने जरूर वहाँ पहुँच जाता था। पर आज रामू न वहाँ मिला और न टेबल-टेनिस कक्ष में। चंद्रन उसे न पाकर निराश हो नीचे उतर आया और नदी-तट की ओर मुड़ गया जो कॉलेज से कुछ ही दूरी पर था।

वह नदी-तट की रेत पर चलता रहा। वहाँ हमेशा वाली ही भीड़ थी—बालों मे बेला के फूल लगाए लड़कियाँ, खेलते हुए बच्चे, इधर-उधर मटरगश्ती करते हुए छात्र और स्वास्थ्य की दृष्टि से सांध्य भ्रमण करते हुए वृद्ध लोग। चंद्रन को नदी-तट पर शाम बिताना बहुत पसंद था। उसने लड़कियों की ओर निहारा, बच्चों के साथ खेलने का बहाना किया, मित्रों से हँसी-दिल्लगी की, इधर-उधर कुछ चक्कर लगाये और फिर नलप्पा के निर्जन क्षेत्र की ओर जाकर सिगरेट पीने लगा। रामू की संगति और उसकी धाराप्रवाह टीका-टिप्पणी उसकी इन शामों को सजीव बना देती थी। पर आज रामू नहीं था और चंद्रन अपने मन पर बोझ सा महसूस कर रहा था, अतः वह और वहाँ न रुक कर घर की ओर चल दिया।

जब वह लॉली एक्स्टेन्शन के दूसरे चौराहे पर पहुँच कर मुड़ा तो समय सात बजे से कुछ ऊपर हो चुका था। उसने रामू के घर के सामने पहुँच कर उसे आवाज दी। रामू बाहर आया।

"आज तुम वाचनालय में नहीं मिले?"

"मैंने वहाँ तुम्हारा इंतजार किया था, लेकिन फिर यह सोच कर कि तुम्हें आज देर हो जायेगी, चला आया।"

"तुम नदी-तट पर भी नहीं थे?"

"मैं घर लौट कर ट्रंक रोड की तरफ घूमने निकल गया था।"

"तुम सुबह इस तरह एकाएक वाचनालय का नाम लेकर चले क्यों गये थे?"

मुझे पत्रिकाएँ देखनी थी

"झूठ! तुम नाराजगी में गये थे। आखिर तुम इस तरह नाराज क्यों हो जाते हो?"

"अपनी तरफ भी तो देखो। तुम्हें राघवाचार से मिलना था, इसलिए तुम इतने चिंतित थे कि मेरी सामान्य-सी बातों पर भी भड़क रहे थे।"

राघवाचार का जिक्र आते ही चंद्रन को उनसे हुई मुलाकात स्मरण हो आई। उसने रामू को सारी बात बताई और वे दोनों लगभग दो घंटे तक वहीं सड़क पर खडे इस समस्या पर विचार करते रहे।

चंद्रन घर पहुँचा तो नौ बज चुके थे। बाद में जब वह सोने जाने वाला था तो उसके पिता ने पूछा : "लगता है तुमने अभी अपने टाइम-टेबल के अनुसार पढ़ाई शुरू नहीं की?" इस प्रश्न ने सीधे चंद्रन के अंत:करण पर चोट की। वह अपने कमरे में पहुँचा और सुबह बनाये हुए टाइम टेबल को देखता रहा। अब उसका विशेष अर्थ नहीं रह गया था। वह अपने बिस्तर पर पड़ा करवटें बदलता रहा। उसने आज की पूरी सुबह पढ़ाई की योजनाएँ बनाने में व्यतीत की थी। आज का पूरा दिन व्यर्थ हो गया था। 'ओथेलो' और आधुनिक इतिहास की पुस्तक को जो अट्ठाईस घंटे दिए जाने थे उनमें से छ: घंटे नष्ट हो चुके थे।

हिस्ट्री-एसोसिएशन के उद्घाटन की मीटिंग का ख़याल चंद्रन को दिन-भर चिंतित किए रहा और वह 'ओथेलो' और 'मॉडर्न हिस्ट्री' के अध्ययन में कोई प्रगति नहीं कर पाया। इस प्रकार की मीटिंग में वास्तव में किया क्या जाता था इस बात का उसे कोई अनुभव नहीं था। बस एक अस्पष्ट सी धारणा थी कि लोग सभा कक्ष में बैठ कर चाय पीते होंगे, एक-दूसरे से हाथ मिलाते होंगे और उद्घाटन हुआ मान लेते होंगे।

मीटिंग के पाँच दिन पहले, अपनी इस चिंता की झोंक में, वह मॉडर्न हिस्ट्री की पुस्तक पढ़ना छोड़ नटेशन के कमरे की ओर चल दिया। यदि इस मामले में कोई उसका मार्गदर्शन कर सकता था तो वह नटेशन था। वह दो बार संस्कृत-एसोसिएशन का सचिव व एक बार उसका उपाध्यक्ष तथा एक बार एक समाज सेवा लीग के फ़िलॉसाफी (दर्शन शास्त्र) एसोसिएशन का सचिव रह चुका था और अब कॉलेज यूनियन का सचिव था। ईश्वर जाने आगे भी वह और क्या-क्या बनने वाला होगा। अपनी कॉलेज की जिंदगी में उसने सौ के लगभग सभाएँ तो जरूर करवाई होंगी। वैसे चंद्रन प्राय: उससे मुलाकात करने से बचता फिरता था किंतु आज जब उसका द्वार खटखटाने पर वह घर पर मिला तो चंद्रन को प्रसन्नता हुई। नटेशन का

कमरा बड़ा सँकरा सा था जिसकी एकमात्र छोटी सी खिड़की कबीर स्ट्रीट की ओर खुलती थी। उस कमरे का आधा स्थान खाट ने घेर रखा था और शेष एक बड़ी सी मेज ने, जिस पर पुस्तकों का ढेर लगा था। नटेशन अपने गोल लपेटे हुए बिस्तर के सहारे बैठा पढ़ रहा था। वह चंद्रन को देख कर बहुत खुश हुआ और उससे खाट पर बैठने के लिए कहा।

चंद्रन ने अपनी समस्या उसे बताते हुए पूछा : "उद्‌घाटन के दिन क्या-क्या करना होता है?"

"एक लंबा-सा भाषण रखा जाता है। भाषण की समाप्ति पर अध्यक्ष भाषणकर्त्ता को धन्यवाद देता है और फिर सेक्रेटरी भाषणकर्त्ता व अध्यक्ष दोनों को। इसके बाद सब चल देते हैं।"

"चाय-वाय कुछ नहीं?"

"नहीं। भला चाय का पैसा कहाँ से आयेगा?"

नटेशन ने चंद्रन को सुझाव दिया कि वह भाषण के लिए प्रिंसिपल को और अध्यक्ष की कुर्सी के लिए राघवाचार को चुन सकता है। नटेशन से मुलाकात के बाद चद्रन को यह एहसास हुआ कि एक सेक्रेटरी का जीवन कितना कष्टपूर्ण है। केवल नटेशन के ही नहीं, बल्कि अन्य सचिवों—आलम, राजन, मूर्ति (जो क्रमशः साहित्य, दर्शनशास्त्र व अर्थशास्त्र एसोसिएशन के सचिव थे) आदि के काम का महत्त्व तथा उत्तरदायित्व भी अब उसकी समझ में आ रहा था। यों दूर से देखने-सुनने वाले को इन सभाओं में खास कुछ नजर नहीं आता था, जबकि इनमें से हर मीटिंग के पीछे एसोसिएशन के सेक्रेटरी का असाधारण परिश्रम और निस्स्वार्थ सेवा होती थी। आखिर उसे इस सेवा के बदले क्या मिलता था? न कोई विशेषाधिकार और न परीक्षा में अतिरिक्त अंक। बल्कि इसका उलटा ही होता था। यदि कोई चूक हो जाती तो कक्षा के छात्रों की निन्दा व प्रोफेसरों की त्यौरियाँ ही उसके पल्ले पड़ती थीं और फिर परेशानियाँ कितनी! अपने एसोसिएशन की मीटिंग की तारीख निश्चित करने के लिए दूसरे सचिवों से टक्कर लेना, भाषण का विषय व भाषणकर्ता खोजना, श्रोताओं को इकट्ठा करना.... आदि, आदि।

उस दिन प्रिंसिपल से मिलने के चक्कर में चंद्रन को अपने दो पीरियड छोडने पड़े। प्रिंसिपल के कक्ष के बाहर बैठने वाला चपरासी उसे अंदर ही नहीं जाने दे रहा था। वह फुसफुसा कर बात कर रहा था और उसने चंद्रन को भी ऐसा ही करने का आदेश दिया। अतः फुसफुसाते हुए ही चंद्रन ने उसकी काफी विनती-चिरौरी की, पर वह टस से मस न हुआ।

"मुझे आदेश है कि किसी को भीतर न जाने दूँ", उसने कहा। उसने यही नौकरी करते-करते उम्र बिताई थी। उसका नाम था अज़ीज़।

"सुनो अज़ीज़," चंद्रन ने नरमी से कहा, "प्रिंसिपल से अभी कोई क्यों नहीं मिल सकता?"

"यह पूछना मेरा काम नहीं है। वे इस समय बहुत व्यस्त हैं।"

"किस चीज में व्यस्त हैं?"

"तुम्हें क्या मतलब?" अज़ीज़ ने अक्खड़ता से कहा।

"उन्हें हजार रुपया महीना क्या इसी बात का मिलता है कि लोगों से न मिलकर अंदर बंद कमरे में बैठे रहें?"

यह सुनते ही चपरासी क्रोधित हो उठा, बोला : "तुम कौन होते हो यह सब पूछने वाले?" चंद्रन ने भी इसका कुछ कड़ा उत्तर दिया। फुसफुसाहट में इस प्रकार की बातचीत करना बहुत कठिन प्रतीत हो रहा था। चंद्रन समझ गया कि क्रोध करना व्यर्थ है, कोई तरकीब करनी होगी। उसने कहा : "अज़ीज़, मेरे पास घर पर एक पुराना कोट रखा हुआ है, एकदम साबुत। क्या तुम उसे लेने मेरे घर आना चाहोगे?"

"किस वक्त?"

"किसी भी वक्त। मैं लॉली एक्सटेन्शन में रहता हूँ।"

"हाँ, हाँ। मैं वह जगह जानता हूँ। आपका घर ढूँढ़ लूँगा।"

"मुझे एक कागज का टुकड़ा देना!"

अज़ीज़ ने दरवाजे पर लटके हुए बंडल में से कागज का टुकड़ा फाड़ा और चंद्रन ने उस पर अपना नाम लिख कर अंदर भेज दिया। कुछ ही मिनटों में अज़ीज कक्ष से बाहर निकल कर बोला कि वह अंदर जा सकता है। चंद्रन ने अपना कोट ठीक किया और अंदर चला गया।

प्रिंसिपल साहब को अभिवादन करके चंद्रन ने संक्षेप में हिस्टोरिकल एसोसिएशन के बारे में बताया और उसकी उद्घाटन-सभा में भाषण देने का अनुरोध किया। उन्होने एक छोटी-सी काले रंग की डायरी निकाल कर उसके पृष्ठ पलटे और कहा : "पंद्रह की शाम खाली है, आ जाऊँगा।"

उन्हें धन्यवाद देकर वह कुछ मिनट वहीं खड़ा रहा। उसे अनुमान नहीं था कि काम इतनी जल्दी हो जायेगा। अत: वह समझ नहीं पाया कि कृतज्ञता के कुछ और शब्द कहे या चल दे। प्रिंसिपल साहब ने एक सिगरेट निकाल कर जलाते हुए पूछा: "और कुछ?"

"सर, हम लोग आपके बहुत आभारी हैं.....'

"ठीक है, ठीक है। यह सब कहने की जरूरत नहीं है।"

"मैं जा सकता हूँ, सर?"

"हाँ, बिल्कुल।"

उन्हें नमस्कार कर चंद्रन बाहर निकला और जाते-जाते बाहर बैठ अज़ीज से बोला : "तुम बड़े खराब आदमी हो, मुझे अंदर नहीं जाने दे रहे थे!"

"मैं तो अपनी ड्यूटी करता हूँ भैया जी, और ऊपर से बुरा और बनता हूँ आखिर मैं भी क्या करूँ?---तो कल सुबह आपके घर आ जाऊँ?"

"मैं अपने चपरासी से कह दूँगा कि तुम्हें घर के गेट में न घुसने दे।"

"मैं गरीब बूढ़ा आदमी हूँ भैया जी, हमेशा ठंड के मारे काँपता रहता हूँ। आपके कोट के लिए हमेशा आपको याद रखूँगा।

"ठीक है; कल आ जाना", चंद्रन ने फुसफसा कर कहा और राघवाचार के कमरे की ओर बढ़ गया।

उद्घाटन-सभा में भाषण देने के लिए प्रिंसिपल की रज़ामंदी की बात सुनकर राघवाचार जरा भी उत्साहित नहीं दिखाई दिए। वे कुछ सोचने के बाद बाघ की तरह गुर्राकर बोले : "उनका भाषण क्या हिस्टोरिकल एसोसिएशन के लिए उपयुक्त रहेगा?"

"मेरे विचार से, वे यह सब कर लेंगे सर।"

"अच्छा। देखते हैं।"

"आपको अध्यक्षता करनी है, सर।"

"हूँ।" दस दिन तक उनके निकट संपर्क में रहकर चंद्रन समझ गया था कि इसका अर्थ है उनकी सहमति। अतः वह और नहीं रुका, उनसे अनुमति लेकर वहाँ से चल दिया।

❑❑❑

3

पंद्रह नवम्बर चंद्रन के लिए काफी व्यस्तता का दिन था। सुबह का काफी समय शाम की मीटिंग की तैयारी में निकल गया। दो दिन पूर्व ही उसने अपने हस्ताक्षर वाली मुद्रित विज्ञप्तियाँ अपने कॉलेज-स्टाफ़ के सदस्यों तथा नगर के सभी महत्त्वपूर्ण वकीलों, डॉक्टरों, अधिकारियों व शिक्षकों को भिजवा दी थीं। कॉलेज के भी हर बोर्ड पर उसने मीटिंग के लिए सबको आमंत्रित करते हुए नोटिस लगवा दिए थे।

परिणाम यह हुआ कि पंद्रह नवम्बर की शाम को पाँच बजे से ही (जबकि चंद्रन सभा वाले हॉल को व्यवस्थित करने में ही लगा हुआ था) श्रोतागण आने प्रारम्भ हो गये।

मीटिंग की तैयारी में कॉलेज का चपरासी अज़ीज़ काफी उपयोगी साबित हुआ। यह सब उस पुराने कोट का कमाल था जो चंद्रन ने उसे दिया था। हॉल में प्रथम पंक्ति वाली (विशिष्ट व्यक्तियों के लिए) कुर्सियाँ अज़ीज़ ने खुद अपनी देखरेख में लगवाईं और मंच वाली मेज-कुर्सियों को भी उसी ने शानदार ढंग से सजा दिया। उसने मंच पर लाल कपड़ा बिछाया व मेज पर हरा मेजपोश, और सारे हॉल में पेट्रोल-लैम्प लगा दिए।

अतिथियों को आते देख चंद्रन भाग कर बरामदे में पहुँचा और उनका स्वागत कर, उन्हें ले जाकर कुर्सियों पर बैठाने लगा। गैलरी की भी सारी सीटें भर गईं। जो छात्र देर से आये उन्हें तो जंगले के सहारे बैठना पड़ा।

प्रिंसिपल और प्रोफ़ेसर राघवाचार आये और बरामदे में रुक गये। चंद्रन ने उन्हें भीतर आने के लिए आमंत्रित किया। प्रिंसिपल ने अपनी घड़ी देखी और बोले : ''पाँच मिनट और। साढ़े पाँच तक यही रुकते हैं।''

राघवाचार ने भी अपना चश्मा ठीक करते हुए सहमति व्यक्त की।

अतिथिगण बराबर आते जा रहे थे और चंद्रन उन्हें उनकी सीट दिखा रहा था रामू पूरे समय उसके साथ रह कर उसकी सहायता करता रहा। वह चंद्रन से पूछकर (जिसका उसे कभी जवाब मिलता और कभी नहीं) दौड़-धूप करता और हर प्रकार के काम निपटाता हुआ बराबर उसे सहयोग देता रहा। इतनी सारी भीड़ देखकर वह भी विस्मित था।

इतने में अलबर्ट मिशन स्कूल के हेडमास्टर साहब आते दिखे और चंद्रन उनके स्वागत के लिए आगे बढ़ा। उन्हें हॉल में पहुँचा कर वह वापस लौटा।

रामू बोला : "ऐसा लग रहा है जैसे तुमने सारे नगर के लोगों को डिनर-पार्टी पर बुलाया हो।"

"हाँ, लग तो ऐसा ही रहा है," चंद्रन ने अतिथियों के आगमन-पथ की ओर देखते हुए कहा, "बस फूल, इत्र और भोजन की कमी है।"

"क्या मैं भाषण के बाद तुम्हारा इंतजार करूँ?" रामू ने पूछा , किंतु उसे इसका उत्तर नहीं मिल सका क्योंकि उसी समय राघवाचार ने अपनी घड़ी की ओर देखकर कहा : "साढ़े पाँच बज गये। शुरू करें?"

"जी सर," कहते हुए चंद्रन आज के वक्ता और अध्यक्ष दोनों को मंच पर ले गया और उनकी कुर्सियों पर बैठाया। फिर किनारे की एक कुर्सी पर स्वयं भी बैठ गया। छात्रों ने करतल-ध्वनि की।

इसके पश्चात् राघवाचार उठे, अपना चश्मा लगाया और बोलने लगे : "देवियो और सज्जनों! आज के भाषणकर्ता का आपको परिचय देने की कोई आवश्यकता नहीं है। मैं आपके व उनके मध्य अधिक देर तक नहीं रहना चाहता। मैं केवल आप लोगों के कुछ मिनट, बल्कि कुछ क्षण, लेकर हमारे इतिहास-एसोसिएशन से सम्बन्धित कतिपय तथ्यों से आपको परिचित कराना चाहता हूँ।--" और वे लगभग चालीस मिनट तक बोलते रहे। उनके भाषण से श्रोताओं को जो कुछ समझ में आया वह यह था कि हिस्टोरिकल एसोसिएशन जीवन में उनकी आस्था का ही एक रूप है, उनका स्वप्न है जो उनके जीवन की समस्त गतिविधियों को प्रेरित करता है, और यह भी कि नब्बे प्रतिशत से भी अधिक मनुष्यों की बुद्धि पर अंधकार का परदा पडा हुआ है और हिस्टोरिकल एसोसिएशन का महत् उद्देश्य है उस परदे को हटाना। भारतीय इतिहास के अत्यधिक महत्त्वपूर्ण तथ्य मतभेद की आग में झुलस रहे हैं जबकि लोगों का इस ओर ध्यान ही नहीं है। यदि जनता का सहयोग नहीं होगा तो उन ऐतिहासिक तथ्यों का उद्धार होगा कैसे? उदाहरणार्थ, माध्यमिक स्कूल में पढाई जाने वाली इतिहास की पुस्तक में लिखा हुआ है कि सिराजुद्दौला ने ईस्ट इंडिया

कपनी के कुछ लोगों को एक सँकरी-सी कोठरी में बंद करके उन्हें घुट-घुट कर मर जाने के लिए छोड़ दिया। यह कोठरी 'कलकत्ता के ब्लैक हाल (अँधेरी गुफ़ा) के नाम से जानी जाती थी। किंतु बाद में आने वाले इतिहासकारों ने इस बात का खंडन करते हुए बताया कि इस प्रकार के किसी स्थान का अस्तित्व ही नहीं था।-- राघवाचार ने कहा कि वे इस प्रश्न पर अपना कोई मत नहीं देना चाहते। वे तो श्रोताओं तक और संपूर्ण प्रबुद्ध जनता तक केवल यह बात पहुँचाना चाहते हैं कि भारतीय इतिहास मे किस प्रकार विवादों का **द्वन्द्व** मचा हुआ है। सच्चा इतिहास न तो कल्पना की उपज है और न दार्शनिक विचारधारा की। यह तो यथार्थ की सुदृढ़ नींव पर आधारित ज्ञान है। यदि उनसे पूछा जाये कि देश को सर्वाधिक आवश्यकता किस बात की है तो वे यही कहेंगे कि वह (आवश्यकता) स्वायत्त शासन अथवा आर्थिक स्वातंत्र्य की नहीं, बल्कि स्पष्ट, सुलझे हुए व शोधित भारतीय इतिहास की है।

इसके बाद उन्होंने पुनः यह दोहराया कि वे वक्ता और श्रोताओं के बीच में नहीं खड़े रहना चाहते, और प्रोफ़ेसर ब्राउन से भाषण प्रारम्भ करने का अनुरोध करके अपनी कुर्सी पर बैठ गये। प्रोफेसर ब्राउन के भाषण का तालियों से स्वागत किया गया। उन्होंने चारों ओर दृष्टि डाली, दाहिना हाथ पैन्ट की जेब में डाला, बायें हाथ को कनपटियों पर फेरा और बोलना प्रारम्भ किया। सर्वप्रथम उन्होंने चंद्रन की ओर देखकर कहा कि उन्हें यह अनुमान बिल्कुल नहीं था कि इतनी बड़ी और महत्त्वपूर्ण सभा में बोलना है। उन्होंने तो यह समझा था कि एक सामान्य से एसोसिएशन का उद्‌घाटन करना है, किंतु प्रोफ़ेसर राघवाचार की बातों से मालूम हुआ कि यह कोई सामान्य मीटिंग नहीं, बल्कि राष्ट्रीय दृष्टि से अति महत्त्वपूर्ण है। यदि उन्हें इस बात का जरा भी अनुमान होता तो वे अपने सामने वाली पंक्ति में बैठना और किसी अधिक योग्य व्यक्ति को वक्ता की कुर्सी पर देखना पसंद करते। पर अब तो ऐसा नहीं किया जा सकता था, अतः चंद्रन से वे बाद में निपट लेंगे। चंद्रन उनकी बातें सुनकर मुस्कराता रहा और श्रोतागण भी।

प्रोफ़ेसर ब्राउन ने अपने भाषण में बताया कि इतिहास से उनका संबंध उस समय प्रारम्भ हुआ था जब वे समरसेट के एक प्राइवेट स्कूल में पढ़ते थे। जब वे उच्च शिक्षा के लिए ऑक्सफोर्ड गए तो उन्होंने अवसर मिलते ही इतिहास छोड़ कर साहित्य ले लिया क्योंकि उन्हें इतिहास का अध्ययन रात्रि के समय दलदल वाला जोखिम भरा रास्ता पार करने के ही समान प्रतीत होता था। "वैसे इतिहास यानी मानव जीवन ने अब तक जो कुछ किया है उसके बारे में मैं थोड़ा बहुत नियमित रूप से पढ़ता रहा हूँ," उन्होंने बताया, "पर कृपया मुझसे किसी घटना की तारीख न पूछें। पूरे इतिहास में मुझे केवल 1066 का ध्यान है।"

वे लगभग एक घंटे तक बोले। उनके भाषण में न विशेष गंभीरता थी और न गहराई, पर उसके एक-एक शब्द में उनका प्रभावपूर्ण व्यक्तित्व झलकता था। पूरा भाषण उनके जीवन के रोचक संस्मरणों और विनोदपूर्ण चुटकियों से परिपूर्ण था।

अंत में बैठने से पूर्व उन्होंने अपने श्रोताओं को यह परामर्श दिया : "कला की ही भाँति इतिहास का अध्ययन भी स्वान्तः सुखाय होना चाहिए, यानी यदि इतिहास में वास्तविक रुचि है तो अपनी विश्वविद्यालय की शिक्षा पूरी करने के बाद उसे पढ़ें। फिर यह आवश्यक नहीं होगा कि आप उसे प्रारम्भ से पढ़ें। आप उसे कहीं से भी पढ़ना शुरू कर सकते हैं—चाहे मध्य से लेकर प्रारम्भ तक या अन्य किसी क्रम में। कोई आपसे यह नहीं पूछेगा कि आपने अपने दिमाग में इतिहास के कितने तथ्य ठूँसे। वास्तविक इतिहास में तथ्य केवल एक गौण चीज है।"

राघवाचार उनका भाषण सुन कर मन ही मन कुढ़ रहे थे। वे सोच रहे थे कि यदि वक्ता प्रिंसिपल के अतिरिक्त और कोई होता तो वे इस भाषण के एक-एक शब्द का विरोध करते और बोलने वाले की जबान खींच लेते।-- भाषण की समाप्ति पर उन्होंने उठ कर श्रोताओं की ओर से वक्ता को धन्यवाद दिया और बैठ गये। जब चंद्रन वक्ता और अध्यक्ष दोनों को धन्यवाद देने के लिए उठा तो श्रोतागण समझ गये कि सभा समाप्त हो गई है और शोर-गुल के साथ उठ-उठ कर जाने लगे। चंद्रन ने जो कुछ कहा वह केवल प्रथम पंक्ति वालों को ही सुनाई दिया।

❑❑❑

उद्घाटन-सभा के संपन्न होने तक चंद्रन ने बाकी सारे काम छोड़ दिए थे। उसने अपने आप को यह कह कर समझा लिया था कि जहाँ अब तक इतने महीने बेकार गये वहाँ पंद्रह दिन और सही। उसने निश्चय कर लिया था कि मीटिंग समाप्त हो जाने के बाद वह सुबह पाँच बजे के स्थान पर साढ़े चार बजे उठा करेगा और इस प्रकार उन पंद्रह दिनों की क्षतिपूर्ति कर लेगा। शाम को भी वह साढ़े सात के स्थान पर सात बजे ही घर लौट आया करेगा। इस प्रकार अध्ययन के लिए पूरा एक घंटा अधिक मिला करेगा। किंतु आदमी की बनाई हुई योजनाएँ हमेशा पूरी कहाँ हो पाती हैं? अभी तो उसकी दो सुबह और नष्ट होनी थीं।

उद्घाटन-सभा वाली रात को सोने के लिए जाने से पूर्व वह थोड़ी देर के लिए घर के हॉल में बैठा, अपनी माँ से बातचीत कर रहा था। उसने माँ को बताया कि वह सुबह साढ़े चार बजे उठेगा। हॉल से लगे हुए बरामदे में ही उसके अप्पा बैठे अखबार पढ़ रहे थे। उन्होंने उसकी बात सुन कर वहीं से कहा : "तो आख़िर आ ही गया पढ़ाई का ख़याल!" उनकी यह बात चंद्रन को खटकी तो सही पर वह चुप ही रहा। किंतु अप्पा चुप रहने वाले नहीं थे। पाँच मिनट बाद ही वे फिर बोल उठे : "हर योजना में दो बार की कोशिश माफ़ होती है। यह तीसरी बार है कि तुम जल्दी उठकर पढ़ने का निश्चय कर रहे हो, आशा है उस बार इसे पूरा करोगे।" चंद्रन उठकर बरामदे में चला गया। उसके अप्पा कुछ चुहल के मूड में थे। चंद्रन को देख कर उन्होंने अपने चश्मे के ऊपर से उस पर एक नजर डाली और पूछा : "क्यों, सहमत हो न मेरी बात से?"

"कौनसी बात, अप्पा?"

"यही कि हर काम की योजना में दो प्रयास माफ़ होने चाहिए।"

"आपको पता है अप्पा, यदि यह मीटिंग न होती तो अपने टाइम-टेबल के अनुसार मैं अब तक पूरे नब्बे घंटों की पढ़ाई कर चुका होता। अब भी मैं इस नुकसान

को पूरा कर लूँगा। कल से मैं किसी से मिलूँगा भी नहीं।'' और उसने अगली सुबह से प्रारंभ होने वाला पढ़ाई का जोरदार कार्यक्रम अपने अप्पा को बताया।

उन्होंने सुनकर प्रसन्नता जाहिर की और कहा : ''अगर तुम साढ़े चार बजे उठो तो मुझे भी जगा देना। मैं उस बदमाश को पकड़ना चाहता हूँ जो सुबह हमारे फूल चुराता है।'' और हॉल से माँ की आवाज आई : ''तो आखिर सोच ही ली कुछ करने की!''

''यह मेरी गलती नहीं है,'' अप्पा ने चिल्ला कर उत्तर दिया ''मैंने तो तार की जाली लगाने का प्रस्ताव रखा था।''

''क्यों? क्या आप चाहते हैं कि चोर फूल के साथ-साथ तार भी खोल कर ले जाये?''

अप्पा को यह व्यंग्य चुभ गया। माँ ने आग में और घी डाला : ''बगीचे पर पच्चीस रुपये खर्च होते हैं पर पूजा घर में देवता पर चढ़ाने के लिए फूल की एक पखड़ी भी नहीं मिलती।''

अप्पा को गुस्सा आ गया। जैसे प्राचीन कथा में मध्ययुगीन योद्धा प्रेयसी के उकसाने पर जोश में आकर ड्रेगन (अजदहा) को मारने के लिए कटिबद्ध हो गया था, कुछ उसी अदा में अप्पा ने बातचीत में इंगित किया कि अगले दिन वे फूलों के चोर को, जिंदा या मुर्दा, लाकर उनके चरणों में डाल देंगे।

अगली सुबह अपनी घड़ी का अलार्म सुनकर चंद्रन जाग पड़ा। उसने अपने पिता के कमरे में जाकर उन्हें भी जगा दिया। फिर वह ठंडे पानी से नहाने के लिए स्नानघर में चला गया।

दस मिनट में वह अपनी मेज पर आ गया और लाइट जलाकर पहले तैयार किए गए टाइम टेबल को ध्यान से देखने लगा।

इतने में उसके पिता ने एक मोटी लाठी लिए कमरे में प्रवेश किया। उनकी आँखों में शिकारियों जैसी चमक थी। उनके पीछे दूसरी लाठी लिए जोश में भरा हुआ सीनू आ रहा था। अपनी पढ़ाई में यह बाधा चंद्रन को अच्छी नहीं लगी, पर उसके पिता ने फुसफुसा कर क्षमा माँगते हुए बत्ती बुझा देने के लिए कहा ताकि कमरे में बत्ती जली देख कर चोर भाग न जाये।

''चोर भाग जाये तो अच्छा ही है,'' चंद्रन ने कहा, ''फिर माँ को फूल मिल सकेंगे।''

''वह किसी और दिन आयेगा।''

"कम से कम मार्च तक तो नहीं आ सकेगा क्योंकि तब तक रोजाना उसे इस समय मेरे कमरे की लाइट जली हुई दिखेगी। मार्च के बाद हम उसे पकड़ लेंगे।"

"मुझे तो उसे आज ही पकड़ना है। उस चक्कर में यदि तुम्हारा घंटा भर नष्ट हो जाए तो भी कोई बात नहीं। उसकी भरपाई तुम बाद में कर लेना।"

चंद्रन ने बत्ती बुझा दी और अँधेरे में बैठा रहा। अप्पा और सीनू बगीचे मे चले गए। चंद्रन कुछ देर कुर्सी पर बैठा रहा। फिर उसने उठ कर खिड़की से झाँक कर देखा। बाहर बगीचे में घुप अंधकार था।

चंद्रन सोचने लगा कि आखिर उसके पिता और सीनू उस अँधेरे में क्या कर रहे होंगे। क्या वे चोर को पकड़ पाये होंगे? उसका कौतूहल इतना बढ़ गया कि वह बगीचे में जाकर अँधेरे में सावधानी से आगे बढ़ने लगा। एक फैले हुए, बड़े से क्रोटन के पीछे से फुसफसाने की आवाजें आईं। किसी ने धीरे से कहा : "यह तो चंद्रन है।" अप्पा और सीनू दोनों क्रोटन के पीछे छिपे हुए थे।

"आवाज मत करना," अप्पा ने फुसफुसा कर चंद्रन से कहा। चंद्रन को सबका एक ही स्थान पर छिपना ठीक नहीं लगा। अत: उसने अपने पिता से कहा कि वे कुछ आगे बढ़ कर गुलाब की झाड़ी के पीछे छिप जायें और छोटे भाई सीनू से कहा कि वह दूसरी ओर से आये। वह खुद चौकन्ना होकर तेंदुए की तरह धीमे कदमों से यहाँ-वहाँ सब जगह जाकर देख रहा था। इसमें एक कठिनाई आई। अंधकार के कारण सीनू को अकेले जाने में डर लग रहा था। चंद्रन ने 'डरपोक' कह कर उसकी खासी लानत-मलामत की और पूछा कि जब उसे इतना डर लगता था तो अपना बिस्तर छोड़ कर यहाँ आने की जरूरत ही क्या थी।

एक घंटे में सूरज निकल आया और उन लोगों ने देखा कि बेला और अन्य पौधों के सारे फूल गायब हैं। अप्पा बोले : "हमें साढ़े चार नहीं, चार बजे उठना होगा।"

अगले दिन चंद्रन चार बजे उठकर अपने पिता के साथ बगीचे में जा पहुँचा। दस मिनट तक कुछ नहीं हुआ। फिर उन्होंने गेट के पास हलकी सी आहट सुनी। अप्पा गुलाब की झाड़ी के पीछे थे और चंद्रन अहाते की दीवार के पास ही छिपा हुआ था। कोई गेट के पास दीवार पर से अंदर बगीचे में कूदा। उसने एक क्षण इधर-उधर देखा और फिर अभ्यस्त सा बेले के फूलों की ओर बढ़ा।

उसने लगभग आधा दर्जन फूल चुने होंगे कि बाप और बेटा दोनों निकल कर उस पर टूट पड़े। वे चोर को घसीट कर घर में ले आये और चंद्रन की माँ को पुकार कर जगाया व बत्ती जलाने के लिए कहा।

बत्ती जलने पर उन्होने देखा कि चोर केवल एक लगोटी पहने और बालो की जटा बनाये हुए प्रौढ़ आयु का व्यक्ति था। उसके कटि-वस्त्र के गेरुए रंग से वह कोई संन्यासी मालूम होता था, अतः अप्पा ने अपनी पकड़ ढीली कर दी।

माँ ने कहा : "उसे पकड़े रहो, छोड़ो मत। बल्कि उसे पुलिस-थाने मे ले जाओ।"

चंद्रन ने चोर से कहा, "संन्यासी का वेश धारण करके चोरी करते हो!"

"क्या यह संन्यासी है?" माँ ने पूछा, और फिर चोर के अधोवस्त्र के रंग की ओर उनका ध्यान गया। वे भयभीत होकर बोलीं : "इसे छोड़ दो।" उनके मन में आशंका उठी कि कहीं उनके परिवार को संन्यासी का शाप न लग जाये और उन्होंने आदरपूर्वक कहा : "आप जाइए महाराज।"

चंद्रन को यह अच्छा नहीं लगा, बोला : "यह क्या माँ! जहाँ भी लंबे बाल और गेरुए कपड़े देखे, डर से काँपने लगती हो। --अगर तुम वास्तव में संन्यासी हो तो ऐसा काम क्यों करते हो?"

"मैंने किया क्या है?" वह बोला।

"घर के अहाते में कूद कर फूल नहीं चुरा रहे थे?"

"गेट पर ताला लगा था इसलिए मुझे कूद कर आना पड़ा और फूल तो ईश्वर की देन हैं। चाहे आप लोग उन्हें देवता पर चढ़ायें या मैं चढ़ाऊँ, क्या फर्क पड़ता है? एक ही बात है।"

"पर तुम्हें हमसे पूछना चाहिए था।"

"आप सब लोग उस समय सोये हुए रहते हैं और मैं आप लोगों की नींद मे बाधा नहीं डालना चाहता। आप लोगों के जागने तक मैं इंतजार नहीं कर सकता क्योंकि मुझे सूर्योदय से पूर्व ही अपनी पूजा समाप्त करनी होती है।"

अब माँ ने बीच में दखल देते हुए कहा : "आप अब जाइए, महाराज। आप अपनी जरूरत के अनुसार फूल ले सकते हैं। फूल तो उन्हीं के लिए हैं जो सच्ची पूजा करते हैं। इससे अधिक सदुपयोग भला फूलों का और क्या हो सकता है।"

"आपने सत्य कहा, माँ" संन्यासी बोला, "मुझे फूल तोड़ने के लिए आप लोगों की अनुमति लेनी चाहिए थी, किन्तु आप लोगों में से कोई भी उस समय जागे हुए नहीं होते।"

"कल से मैं जागा हुआ मिलूँगा," चंद्रन ने कहा।

"क्या आप ये फूल अपनी पूजा के काम में लेती है, माँ?" अजनबी ने पूछा।

"हाँ, रोजाना। मैं किसी भी दिन पूजा किए बिना नहीं रहती।" "यह बात मैं नहीं जानता था। मैं सोचता था कि दूसरे बँगलों की भाँति यहाँ के फूल भी केवल सजावट के लिए होंगे। मुझे यह जान कर खुशी हुई कि पूजा जैसे पवित्र कार्य में इनका उपयोग होता है। आगे से मैं केवल मुट्ठी भर फूल लिया करूँगा और शेष आपकी पूजा के लिए छोड़ दिया करूँगा। अब मैं जाऊँ?" वह हॉल को पार करके बरामदे की सीढ़ियाँ उतरने लगा।

"गेट का ताला खोल दो," अप्पा ने चंद्रन से कहा, "वरना वह बाहर कैसे निकलेगा?"

"और कैसे? डोली पर से कूद जायेगा," खीजे हुए चंद्रन ने दीवार पर ठुकी हुई कील से चाबी उतारते हुए कहा।

5

नवम्बर से मार्च तक का समय चंद्रन के लिए अत्यधिक व्यस्तता का था। वह रोजाना सुबह साढ़े चार बजे उठता और रात के ग्यारह बजे तक जागता। वह अपने बनाये हुए टाइम टेबल के नियमों का अक्षरशः पालन कर रहा था। मार्च के प्रारम्भ तक उसने अपने हर विषय के अध्ययन में काफी प्रगति कर ली थी। विभिन्न विषयों में कुछ संदिग्ध स्थल अभी भी बाकी थे, जैसे शेक्सपियर के बारे में लिखने वाले विद्वानों के पारस्परिक मतभेद; मध्यकालीन दक्षिण भारतीय इतिहास वाला अंश; ईसाई धर्म में पोप तथा राजाओं के संघर्ष काल वाला और सामंतवाद वाला अंश.... इत्यादि। इन संदिग्ध अंशों के कारण यदि उसे हर प्रश्न-पत्र में 30 अंक भी खोने पड़ते तो भी सत्तर अंक तो शेष रहते ही। इन सत्तर अंकों में से भी अगर 20 अंक लेखन की त्रुटियों और परीक्षक की मनमानी के काट दिए जाते, तो 50 अंक तो उसे हर प्रश्न-पत्र में मिलने की पूरी आशा थी, यानी पास होने के लिए जितने अंक आवश्यक थे उनसे 10 अंक अधिक।

इस दौरान कुछ और महत्त्वपूर्ण कार्य भी उसने किए थे, जैसे मार्च से पूर्व वह इतिहास एसोसिएशन की आठ सभाएँ आयोजित कर चुका था। एक सभा में उसने स्वयं भी 'मौर्य राज्यतंत्र के अपेक्षाकृत अपरिचित पहलू' पर एक पेपर पढ़ा था।

इतिहास-एसोसिएशन की ही बदौलत वह दो दिलचस्प व्यक्तियों के संपर्क में आया—वीरास्वामी (एक क्रांतिकारी) और मोहन (एक कवि)। वीरास्वामी बाईस वर्ष का नाटा, गठीला और साँवला युवक था। एक दिन उसने चंद्रन के पास आकर कहा कि वह "भारत में ब्रिटिश शासन के विस्तार के सहायक तत्त्व" पर पेपर पढना चाहता है। सुन कर चंद्रन को प्रसन्नता हुई क्योंकि उसे अब तक ऐसा कोई नहीं मिला था जो स्वतः ही सभा में भाषण देना चाहता हो। एक दिन, 35 श्रोताओ के सम्मुख वीरास्वामी ने अपना पेपर पढ़ा। उसमें ब्रिटिश सरकार को बुरी तरह लांछित किया गया था और आशा प्रकट की गई थी कि उसे बलपूर्वक हटा दिया जायेगा।

. .. ..., जो उस मीटिंग मे उपस्थित थे, अत्यधिक अस्वस्ति का अनुभव कर रहे थे। अगले दिन उसे प्रिंसिपल ब्राउन ने एक नोट भिजवाया जिसमें लिखा था कि आगे से जो भी पेपर एसोसिएशन के सम्मुख पढ़े जाएँ वे पहले उनके पास भेज दिए जाएँ। इस पर चंद्रन को इतना गुस्सा आया कि वह सचिव के पद से त्यागपत्र देने की बात सोचने लगा, किंतु राघवाचार ने उसे सुझाया कि ऐसा करने पर उसकी डिग्री खतरे में पड़ जायेगी। चंद्रन ने वीरास्वामी से मिल कर उसे यह सब कुछ बताया और उससे परामर्श किया कि ब्राउन की तानाशाही को समाप्त कैसे किया जाये। वीरास्वामी ने प्रस्ताव रखा कि उसे "साम्राज्यवाद की बारीकियाँ" पर एक पेपर पढ़ने दिया जाये, किंतु यह पेपर पहले ब्राउन के पास अनुमोदनार्थ न भेजा जाये। चंद्रन ने इस प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। उसकी कॉलेज से निकाले जाने की कतई मंशा नहीं थी। इसके लिए वीरास्वामी ने चंद्रन को 'कायर' कहा। चद्रन को लगा जैसे उसने बिच्छू के डंक पर पाँव रख दिया हो। वीरास्वामी में हिंसा व विद्रोह की भावनाएँ कूट-कूट कर भरी हुई थीं। 'साम्राज्यवाद' उसकी पसंद का विषय था। उसका विचार था कि विदेशों से गुप्त रूप से ला-ला कर घातक शस्त्रो का संग्रह किया जाये और उनकी मदद से सारे अंग्रेजों को मार दिया जाये। उसने चंद्रन को बताया कि इस समय भी वह अपने इस महत् लक्ष्य की पूर्ति की ओर सतत प्रयत्नशील था। उसकी शिक्षा, संपर्क और उसकी हर चेष्टा उसी दिशा में जाने की तैयारी थी। उसने इस विषय पर हर कोण से विचार करके देखा था। भूखी व रुग्ण भारतीय जनता के लिए नारियल और नागफनी के फलों की उपयोगिता पर वह शीघ्र ही तमिल, तेलगू और अंग्रेजी में पुस्तिकाएँ प्रकाशित करने वाला था। जहाँ तक रोगों का प्रश्न था, उसका विश्वास था कि ब्रिटिश लोग जान-बूझ कर भारतीय जनता को रोगी व अस्वस्थ रखना चाहते थे ताकि ब्रिटिश औषधि निर्माताओं को यहाँ स्थायी बाजार मिल सके। वह प्राकृतिक चिकित्सा द्वारा उनकी इस योजना को विफल करना चाहता था। उसका कहना था कि जनता के शारीरिक स्वास्थ्य में सुधार करने के बाद वह उनके मानसिक स्वास्थ्य पर ध्यान देगा। वह गाँवों में जाकर काम करेगा, उनका पुनर्निर्माण करेगा और गुप्त रूप से ग्रामीण जनता को क्रांति के लिए तैयार करेगा।

उसके बाद तो वीरास्वामी ने उसे एक क्षण भी चैन नहीं लेने दिया। चंद्रन को जब भी फुरसत होती वह डरता रहता कि कहीं वीरास्वामी न आ जाये। वह वाचनालय अथवा टेबल टेनिस कक्ष, कहीं भी जाये, वीरास्वामी हर जगह आ धमकता था। अत बीच में अवकाश के समय चंद्रन नदी के किनारे एक एकांत स्थल पर जा बैठता था। उसके इस व्यवहार से रामू को गलतफहमी हो गई थी कि चंद्रन उसकी

सगति से बचने के लिए ऐसा करता है। फिर भी वीरास्वामी उसे पकड़ ही लेता। वह पूरी शाम लगातार अपनी क्रांति विषयक बातें बोलता रहता और चंद्रन व रामू बलि के बकरे की भाँति विवश से उसकी बातें सुनते रहते।

दूसरा व्यक्ति जिससे इतिहास एसोसिएशन के कारण चंद्रन का परिचय हुआ था, वह था मोहन। मोहन से चंद्रन को इतनी परेशानी नहीं हुई। एक दिन जब चद्रन कॉलेज यूनियन के रेस्तराँ में कॉफी पी रहा था तो मोहन ने आकर उससे पूछा कि क्या उन लोगों की किसी मीटिंग में कविताएँ प्रस्तुत की जा सकती हैं। चंद्रन को कविता पढ़ने का शौक नहीं था किंतु वह कवियों को काफी सम्मान की दृष्टि से देखता था अतः एक कवि से मिलकर उसे प्रसन्नता हुई। उसने मोहन को कॉफी पिलाई और उससे पूछा कि क्या उसकी कविताएँ इतिहास से संबंधित हैं।

"मुझे खेद है कि लोग इतने संकीर्ण हृदय हैं," मोहन ने कहा, "काव्य और इतिहास में भला अंतर ही क्या है?"

चंद्रन इस प्रकार की बहस में नहीं पड़ना चाहता था। उसने पूछा "तुम्हारी कविताओं का विषय क्या है?"

"कविता को विषय की क्या आवश्यकता है! क्या कविता का कविता होना ही काफी नहीं है?"

चंद्रन ने पशोपेश में पड़ कर पूछा : "कविताएँ अंग्रेजी में हैं या तमिल में?"

"अंग्रेजी में, जो सारे विश्व की भाषा है।"

"तो तुम अंग्रेजी साहित्य के एसोसिएशन में अपनी कविताओं का पाठ क्यों नहीं करते?"

"ओहो! जब तक बाबा ब्राउन उसके अध्यक्ष की कुर्सी पर डटे हुए हैं, मेरी दाल वहाँ कैसे गल सकती है? ऐसी धृष्टता करने का साहस क्या उनके सम्मुख किया जा सकता है? उनके रहते हुए तो कॉलेज में कोई मौलिक कार्य संभव ही नहीं है। बड़ा ईर्ष्यालु प्रकृति का है वह! वर्ड्सवर्थ पर या अठारहवीं शताब्दी के गद्य पर उसके भाषणों से लिये गए नोट्स तुम सैंकड़ों बार जाकर एसासिएशन की सभाओं में पढ़ सकते हो। वह इसके लिए अनुमति दे देगा। लेकिन किसी मौलिक चीज को सहन नहीं करेगा।"

"मैं खुद तुम्हारी कविताएँ पढ़ना पसंद करूँगा। किंतु एसोसिएशन की मीटिंग में उन्हें कैसे रखा जा सकता है?"

"यदि तुम यह जानते हो कि इतिहास मानव संस्कृति के विकास का अभिलेख है तो फिर यह भी जानते होगे कि काव्य मानव संस्कृति का अभिन्न अंग है। यदि

कविता पढ़ने के लिए कोई उपयुक्त स्थान है तो वह है इतिहास-एसोसिएशन की सभा।''

जब चंद्रन ने राघवाचार से इसकी अनुमति माँगी तो वे इसके लिए राजी नहीं हुए। उन्होंने कहा कि वे इतिहास-एसोसिएशन को तुकबाज़ों का अखाड़ा नहीं बनाना चाहते। यह बात मोहन को बताते हुए चंद्रन को काफी खेद हुआ। वह मोहन को पसंद करने व उसे मित्र-भाव से देखने लगा था। उसने मोहन से आग्रह किया कि वह अपनी कुछ कविताएँ उसे सुनाए। कॉलेज समाप्त होने के बाद शाम के समय उसे कुछ अवकाश रहता था, अतः अगली शाम को अपना टहलने का कार्यक्रम स्थगित करके उसने मोहन से उसकी कविताएँ सुनीं। पर रामू को ऐसा करना नहीं भाया। वह मोहन के वहाँ पहुँचने से पूर्व ही चल दिया।

चंद्रन को भी इस प्रकार संध्या समय अपने कमरे में बैठे रहना पसंद नहीं था किंतु काव्य के सम्मान में उसने यह त्याग करना मंजूर किया।

टाइप किए हुए कागजों का एक बंडल बगल में दबाए मोहन आया। उसे बैठा कर चंद्रन ने पूछा : ''कितनी कविताएँ लाए हो?''

''केवल पच्चीस।''

''सात बजे तक समाप्त हो जायेंगी न? साढ़े सात बजे से मुझे पढ़ने बैठना है।''

''हाँ हाँ, क्यों नहीं?'' कह कर मोहन ने अपना काव्य-पाठ प्रारम्भ किया और शाम को देर तक पढ़ता रहा। कविताएँ विविध विषयों पर थीं—सड़क पर घास बेचनेवाले से लेकर आसमान के नक्षत्र तक; चींटे से लेकर मरणोन्मुख संगीतकार तक। कविताओं में भाव-वैविध्य भी था : क्रोध, दुख, निराशा और चुनौती की भावना। कुछ कविताएँ छन्दबद्ध थीं और कुछ छंदमुक्त। किसी कविता का प्रारम्भ अस्पष्ट था, किसी का मध्य और किसी का अंत। अधिकांश कविताओं का आशय चंद्रन को अस्पष्ट प्रतीत हुआ। कुछ समय बाद उसने उनका आशय समझने का प्रयत्न ही छोड़ दिया और निढाल होकर बैठ गया। जब मोहन ने पच्चीसवीं कविता पढ़ कर समाप्त की तो चद्रन ने चैन की साँस ली और थोड़ी देर घूमने की इच्छा प्रकट की।

चंद्रन के सिर में हलका-हलका दर्द हो रहा था और कविताएँ पढ़ते-पढ़ते मोहन का कण्ठ भर्रा गया था। घूमते-घूमते चंद्रन ने पूछा, ''तुम किसी पत्र या पत्रिका में अपनी कविताएँ छपवाने की कोशिश क्यों नहीं करते?''

''वह तो मैं पिछले पाँच साल से कर रहा हूँ'', मोहन ने कहा, ''हर डाक से मेरी कविताएँ वापस आती रहती हैं। मैं संसार— इंगलैण्ड, अमेरिका, कनाडा, दक्षिण

अफ्रीका, आस्ट्रेलिया और भारत—की लगभग सारी पत्र-पत्रिकाओं के लिए अपनी कविताएँ भेज चुका हूँ। ढेरों रुपया डाक पर खर्च कर चुका हूँ।''

''फिर भी तुम इतना सब लिख रहे हो!'' चंद्रन ने प्रशंसात्मक दृष्टि से उसकी ओर देखा।

''मेरे लिए लिखना साँस लेने के समान जरूरी है। जब तक मेरी उँगलियाँ साबुत रहेंगी, मैं लिखता रहूँगा। मैं रोज लिखता हूँ। अपनी पाठ्य पुस्तकें मैं नही पढ़ता। मुझे मालूम है मैं फ़ेल हो जाऊँगा।--आशा है मुझे किसी दिन कोई समझदार सपादक अथवा प्रकाशक अवश्य मिलेगा।''

''वह दिन शीघ्र ही आयेगा जब तुम्हारी इन कविताओं को प्रसिद्धि प्राप्त होगी,'' चंद्रन ने विश्वास के साथ कहा।

मार्च के महीने में चंद्रन का वजन छः पौण्ड कम हो गया। इन दिनों वह पूरी तरह अध्ययन में लगा हुआ था— न किसी से मिलता था और न पढ़ाई के अतिरिक्त किसी और चीज के बारे में सोचता था। कॉलेज में भी वह अपनी कक्षा के अतिरिक्त और कहीं नहीं जाता था और उसका ध्यान पूरी तरह कक्षा में होने वाले भाषण पर जमा रहता था। कॉलेज में सभी पढ़ाई और आसन्न परीक्षा को लेकर काफी गंभीर हो गए थे। यहाँ तक कि गजपति भी अब शेक्सपियर के समालोचकों पर वार करने मे कम और परीक्षा के लिए उपयोगी बातें बताने में अधिक समय लगाने लगे थे। सत्र के अंतिम दिन सभी की कक्षाओं में पाठ्यक्रम के समापन का माहौल था। हर प्रोफेसर तथा व्याख्याता ने अपने विषय को समाप्त करके पुस्तक बंद कर दी। ब्राउन ने 'सोफ़ोक्लीज' बद करते हुए आशा प्रकट की कि उनके छात्रों की साहित्य में रुचि केवल परीक्षा तक ही नहीं बल्कि उसके बाद भी बनी रहेगी। उनकी इस बात पर छात्रों ने तालियों बजाकर अपना हर्ष व्यक्त किया। गजपति ने 'ऑथेलो' बंद करके रखते हुए कहा . ''आशा है, मैं आप लोगों के सम्मुख शेक्सपियर के विचारों व मनोभावों को स्पष्ट करने में सफल रहा हूँ और परीक्षा के बाद आप लोग खुद ऐसी स्थिति में होंगे कि उसके विषय में स्वतंत्र चिंतन कर सकें।'' यूरोपियन इतिहास वाले प्रोफेसर ने 'लीग ऑफ नेशन्स' के साथ सत्र की समाप्ति की। उस दिन अंतिम क्लास भारतीय इतिहास की थी। राघवाचार ने 'मॉन्टेग्यू-चेल्म्सफ़ोर्ड सुधारों के साथ पाठ्यक्रम की समाप्ति की और कक्षा छोड़ते हुए छात्रों को चेतावनी दी कि वे तालियाँ बजाकर या किसी भी प्रकार का शोर करके अन्य कक्षाओं की पढ़ाई में बाधा न डालें।

शाम को विदाई की पार्टी हुई। प्रिंसिपल के साथ छात्रों का सामूहिक फोटो खींचा गया, दावत हुई, कॉफ़ी पी गई, गीत गाए गए, भाषाण दिए गए और एक-

दूसरे की सफलता के लिए शुभकामनाओं का आदान-प्रदान हुआ। प्रोफेसरों ने छात्रों के साथ हाथ मिलाए और छात्रों ने एक-दूसरे के साथ। उस अवसर पर हर व्यक्ति भावुक हो उठा था। विदा के समय सबके दिल भर आए थे।

घर लौटते समय चंद्रन का हृदय भी ऐसी ही भावनाओं से परिपूर्ण था। पिछले चार वर्षों से उसका अधिकांश समय जिसके प्रति समर्पित था, वह कॉलेज-जीवन आज समाप्त हो गया था। कल से वह कॉलेज नहीं जायेगा। पंद्रह दिन बाद केवल परीक्षा देने जायेगा और परीक्षा पास करने के बाद सदा के लिए अल्बर्ट कॉलेज उससे छूट जायेगा। यह सब सोच कर मन बहुत भारी, बहुत उदास था।

भाग दो
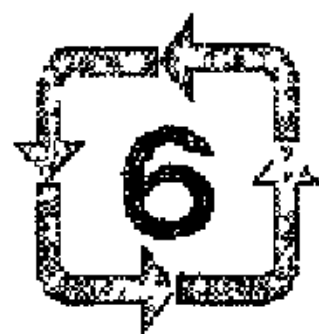
चंद्रन को बी.ए. पास किए छः महीने हो गए थे और उसे आगे क्या करना चाहिए इस बारे में विभिन्न संबंधियों और बुजुर्ग पारिवारिक मित्रों के सुझाव आने प्रारम्भ हो गये थे। उसने तो अब तक यह सोचा ही नहीं था कि आगे कुछ करना है। पर अब स्थिति यह थी कि वह जहाँ भी जाता, लोग पूछने लगते : "आगे क्या करने का इरादा है?"

"मैंने अभी इस विषय में कुछ भी नहीं सोचा है," वह उत्तर देता।

"मद्रास जाकर कानून की पढ़ाई क्यों नहीं करते?"

नेलोर में चंद्रन के चाचा रहते थे। उन्होंने उसे पत्र में लिखा कि अब उसे अपने लिए कोई काम चुनकर व्यवस्थित जीवन जीना चाहिए। उसके एक रिश्ते के मामा उसे कानून का अध्ययन करने की सलाह दे रहे थे। उसके मद्रास वाले चाचा का कहना था कि वह मालगुडी में रहकर कुछ नहीं कर पायेगा, उसे किसी बड़े शहर जाकर लोगों से मिलना चाहिए। वे विभिन्न लोगों से मिलना बड़ा महत्त्वपूर्ण मानते थे। उन्होंने लिखा था कि यदि चंद्रन चाहे तो वे उसे रेलवे के किसी ऑडिटर (लेखा-परीक्षक) के नाम परिचय-पत्र दे सकते हैं। वह ऑडिटर उसका परिचय एक और महत्त्वपूर्ण व्यक्ति से करवाएगा और अंत में चंद्रन को रेलवे में नौकरी मिल जायेगी। वे चाचा हमेशा परिचय-पत्रों की बातें करते रहते थे। कई संबंधियों, विशेषकर महिलाओं ने चंद्रन से यह भी पूछा कि वह आई.सी.एस. (इंडियन सिविल सर्विस) अथवा आई.ए. एस. (इंडियन ऑडिट सर्विस) की परीक्षा में क्यों नहीं बैठता। उनका यह विश्वास उसे अच्छा लगता। कुछ लोगों का विचार था कि व्यापार से बढ़ कर कोई व्यवसाय नहीं है। मामूली-सी पूँजी लगाकर एक दुकान खोली जा सकती है—इससे लाभ भी मिलेगा और आत्मनिर्भरता भी। कई लोग यह भी कहते थे कि उसे किसी सरकारी दफ्तर में क्लर्क के पद के लिए आवेदन कर देना चाहिए। उनके

विचार से सरकारी नौकरी ही सर्वोत्तम थी, जिसमें महीने की पहली तारीख को वेतन मिलना निश्चित था और आर्थिक सुरक्षा थी। --

चंद्रन यह सब सुनते-सुनते तंग आ गया था। एक सुबह जब उसके पिता बगीचे मे गुलाबों की काट-छाँट कर रहे थे तो उसने उनके सम्मुख अपनी मनोव्यथा प्रकट की।

''अप्पा, मुझे खेद है कि मैंने बी.ए. पास किया।''

''ऐसा क्यों?''

''जिसे देखो, मेरी नौकरी की बात करने लगता है। लोग अपने काम से मतलब क्यों नहीं रखते?''

''दुनिया की यही रीति है। तुम इससे परेशान क्यों होते हो? यह तो एक प्रकार का शिष्टाचार मात्र है।''

दोनों चंद्रन के भविष्य को लेकर बातचीत करने लगे। अप्पा को पता चला कि चंद्रन के मन के किसी कोने में इंगलैण्ड जाकर वहाँ कुछ करने की इच्छा है। उन्हे इसमें कोई बुराई नहीं दिखाई दी।

''इंगलैण्ड जाकर वहाँ क्या करना चाहते हो?'' उन्होंने पूछा।

''मैं वहाँ जाकर डॉक्टर की उपाधि या ऐसा ही कुछ प्राप्त करके वापस आना चाहता हूँ। फिर किसी कॉलेज में व्याख्याता की नौकरी करने की मेरी इच्छा है। उसमें स्वाधीनता भी है और फुरसत भी।''

अपने पिता से बात करके चंद्रन का मन कुछ हलका हुआ। अब वह पूछने वालों से कह देता : ''मैं अगले वर्ष इंगलैंड जा रहा हूँ।''

''अगले वर्ष क्यों? तुरन्त क्यों नहीं?'' कुछ लोग पूछ बैठते और वह कहता· ''एकदम सोचते ही तो इंगलैंड जा नहीं सकते, क्यों? क्या ख़याल है?''

अब चंद्रन के लिए पढ़ाई का बंधन तो था नहीं, स्वतंत्रता थी और अवकाश था। अपनी प्रथम शिशु-कक्षा से लेकर बी.ए. तक (सोलह वर्ष से अधिक) की अवधि में उसे इतनी लंबी छुट्टी (छ: महीने से भी ज्यादा) पहले कभी नहीं मिली थी। यदि रामू वहाँ होता तो उसे छुट्टी का और भी अधिक आनंद आता। परीक्षा-परिणाम घोषित होने के बाद से ही रामू का पता नहीं था। वह नौकरी की तलाश मे बंबई गया था और फिर सारे उत्तर भारत में नौकरी ढूँढ़ता फिर रहा था। चंद्रन को उसका केवल एक पत्र मिला था जिसमें उसने लिखा था कि उसने पूना में कानून की पढाई प्रारम्भ कर दी है

अब तो चंद्रन को रामू के बिना ही रहना था। वह सार्वजनिक पुस्तकालय का सदस्य बन गया और ढेर से कहानी-उपन्यास और अन्य साहित्य पढ़ने लगा। उसने इस बीच कार्लाइल का काफी अध्ययन किया और शेक्सपियर के नाटकों का तथा कई अन्य कवियों का भी। इससे साहित्य के बारे में उसे काफी नई जानकारी हुई। उसके इस अध्ययन का कोई निश्चित क्रम नहीं था। जब जो पुस्तक उपलब्ध हो जाती, पढ़ लेता। किसी हास्य-लेखक के बाद कार्लाइल की पुस्तक मिल जाती तो वह पढ़ लेता। फिर शेक्सपियर और फिर शॉ या वेल्स, जिसका साहित्य हाथ लगता, पढ़ने लगता। बस इस बात का ख़याल जरूर रहता था कि पुस्तक रोचक हो। उबानेवाली पुस्तकें वह बिल्कुल नहीं पढ़ता था।

दिन का अधिकांश समय पुस्तकें पढ़ने में बिताने के बाद शाम को वह लंबे भ्रमण के लिए निकल जाता था—अकेला ही, क्योंकि उसके अधिकांश मित्र बाहर चले गए थे। वह दूर तक नदी किनारे घूमता रहता, देर से घर लौटता फिर एक-दो घंटे अपने माता-पिता से गपशप करता और सोने से पूर्व थोड़ा-बहुत पढ़ता। उसे इस शांतिपूर्ण जिंदगी व दिनचर्या की आदत हो गई थी और यह उसे काफी अच्छी भी लगने लगी थी।

❑❑❑

इसी प्रकार नदी किनारे घूमते समय एक बार उसने मालती को देखा और दिन-रात उसी के बारे में सोचने लगा। न जाने वह कौनसी आकर्षण-शक्ति है जो दो मनुष्यों को एक-दूसरे की ओर खींच लेती है, किंतु ऐसा होता है।

एक शाम वह नदी किनारे घूम रहा था कि उसने एक लगभग पंद्रह वर्षीय लडकी को देखा जो अपनी छोटी बहन के साथ रेत पर खेल रही थी। वह रेत पर बैठी कई लड़कियों को रोज देखता था किंतु अन्य किसी लड़की ने उसे इस तरह आकर्षित नहीं किया था। चंद्रन को उसकी हर चीज अच्छी लगी--उसका बैठने का ढग, उसका अपनी बहन के साथ खेलने का ढंग, रेत में हाथ गड़ा कर उसे हवा में उछालने का ढंग। किंतु वह वहाँ ठहरा केवल क्षण भर के लिए। उसका बस चलता तो वह वहीं रुक कर उसे रेत से खेलते देखने में अपना शेष जीवन बिता देता। लेकिन ऐसा करना संभव नहीं था। वहाँ दूसरे कई लोग थे।

वह आगे बढ़ गया। इच्छा तो हुई कि पीछे मुड़ कर लड़की पर दुबारा नजर डाले, पर उसे लगा जैसे वहाँ बैठे हुए लोग सब उसी को देख रहे हों।

वह रोजाना की तरह घूमता हुआ नलप्पा वन-क्षेत्र की ओर निकल गया, नदी के दूसरे तट पर पहुँच कर वहाँ घूमता रहा, किंतु वहाँ भी उसे उस लड़की का स्मरण हो आया। उसकी आयु क्या होगी? शायद चौदह वर्ष। पंद्रह या सोलह भी हो सकती है। यदि चौदह से अधिक हुई तो वह विवाहिता होनी चाहिए। इस विचार से उसे निराशा हुई। किसी शादीशुदा लड़की के बारे में सोचने से क्या लाभ? ऐसा करना तो अनुचित होगा। उसने अपने मन को दूसरी चीजों की ओर मोड़ने की कोशिश की, जैसे निकट भविष्य में अपने इंगलैंड जाने की बात। वह वहाँ किस प्रकार के कपड़े पहनेगा? उसे टाई, जूते, कोट और हैट पहनने और छुरी-काँटे से खाने की आदत डाल लेनी चाहिए। वह वहाँ प्रथम श्रेणी की डिग्री प्राप्त करके भारत लौट आयेगा और यहाँ आकर शादी करेगा। किसी विवाहित लड़की के विषय में सोचना

व्यर्थ है। -- शायद वह विवाहित न हो। उसके माता-पिता आधुनिक विचारों वाले हों और वे छोटी उम्र में बच्चों की शादी कर देना अच्छा नहीं समझते हों। -- आखिर वह उस लड़की के बारे में सोच ही क्यों रहा है? क्या वह बहुत सुंदर है? पता नहीं। पहले तो कभी उसकी ओर ध्यान गया नहीं। चंद्रन पूरे रास्ते इसी उधेड़-बुन में पड़ा रहा।

फिर उसे ख़याल आया कि उसका नाम क्या होगा। 'लक्ष्मी' नाम जँचता है उस पर। काफी सुंदर नाम है। संपत्ति की देवी, जगत के रक्षक भगवान विष्णु की अर्द्धांगिनी।

उस रात वह अत्यंत विचारमग्न घर लौटा। उसने उस लड़की को पाँच बजे देखा था और अब नौ बजे भी उसी के बारे में सोच रहा था।

रात्रि के भोजन के बाद वह रोजाना की भाँति हॉल में न बैठ कर अपने कमरे मे चला गया और कुछ पढ़ने की कोशिश करने लगा। उसने वेल्स की पुस्तक 'टोनो बगे' आधी पढ़ ली थी और वह उसे काफी रोचक भी लग रही थी। किंतु इस समय वह उसमें ध्यान नहीं जमा पा रहा था। आखिर परेशान होकर उसने पुस्तक रख दी और चुपचाप बैठा दीवार की ओर ताकने लगा। फिर उसे लगा कि शायद अँधेरे में बैठना अधिक शांतिप्रद होगा। वह लैम्प बुझा कर कुर्सी पर बैठ गया। मन में फिर वही विचार उठने लगे। मान लो वह लड़की अविवाहित होकर भी किसी अन्य जाति की हुई तो? जाति एक होने पर भी यदि गोत्र प्रतिकूल हुए तो शादी नहीं हो सकेगी। यदि भारत को नष्ट होने से बचना है तो इस जाति-प्रथा के जंजाल से बाहर निकलना होगा। समुदाय, जातियाँ, उपजातियाँ, गोत्र, उपगोत्र... उफ़! कैसे-कैसे बखेड़े कर रखे हैं! यह सब सोच कर ही उसका दिमाग भन्ना उठा। उस लडकी की जाति या गोत्र कुछ भी हो, वह उससे शादी करके समाज के सम्मुख एक उदाहरण प्रस्तुत करेगा।

अगले दिन उसने बड़ी सावधानी से दाढ़ी बनाई और ध्यानपूर्वक बाल सँवार कर शाम होने की प्रतीक्षा करने लगा। शाम होने पर वह अपना चॉकलेटी रंग के ट्वीड का कोट पहन कर बाहर निकल पड़ा। पाँच बजे वह नदी किनारे जा पहुँचा और पिछले दिन उसने जिस स्थान पर उस लड़की को बैठे देखा था उससे कुछ ही दूरी पर जा बैठा। वह दो घंटे तक वहाँ बैठा रहा पर वह लड़की नहीं आई। नगर के अन्य दर्जनों लोग आकर इधर-उधर फैल-पसर गये, किंतु उस लड़की के दर्शन नहीं हुए। चंद्रन उठकर वहाँ बैठे हर जन-समुदाय को कनखियों से ताकता हुआ इधर-उधर घूमने लगा। काफी देर के सूक्ष्म निरीक्षण के बाद भी कुछ हाथ न लगा। आखिर वह आई क्यों नहीं? दूर से साडी पहने हुए किसी को भी आते देख कर

उसके दिल की धड़कन तीव्र हो जाती... किंतु वह नहीं दिखी। आखिर यह सोचते हुए कि उसका इतनी अच्छी तरह शेव करना, ब्रिलियन्टीन लगाना, इस्तरी किया हुआ ट्वीड-कोट पहनना आदि सब व्यर्थ गया, वह लगभग पौने आठ बजे घर की ओर चल पड़ा।

अगले दिन वह फिर नदी किनारे गया, शाम के पौने आठ बजे तक प्रतीक्षा की और निराश होकर घर लौटा। सारी रात वह अपने बिस्तर पर करवट बदलता रहा। बीच-बीच में अर्द्धजाग्रत अवस्था में वह 'लक्ष्मी-लक्ष्मी' भी बोल रहा था। अत में वह अपने आप को सँभाल कर उठ खड़ा हुआ। उसे अपनी स्थिति पर हँसी आई। लगता था वह लड़की अब नदी किनारे नहीं आयेगी। संभव था कि वह भिन्न जाति की हो और विवाहित भी। दिन-रात उसी के बारे में सोचते रह कर उसने अपने तीन दिन बिगाड़ दिए, क्या यह उसकी (चंद्रन की) मूर्खता नहीं थी? सचमुच खाली दिमाग शैतान का घर होता है और फिर उसका दिमाग तो पूरे नौ महीने से निष्क्रिय बना हुआ था।

यही सब सोचता हुआ चंद्रन अपने आप को समझाता रहा। जब सुबह उठा तो उसका उतरा हुआ पीला मुख देख कर माँ ने उसके स्वास्थ्य के बारे में पूछताछ की। अपनी सफाई में चंद्रन ने कह दिया कि उसके सिर में दर्द है। माँ ने उसके भाल व कनपटियों को छू कर देखा, उसे स्पेशल कॉफ़ी बनाकर पिलाई और दिन भर घर पर रह कर आराम करने की सलाह दी। चंद्रन को भी उनका सुझाव पसंद आया और उसने निश्चय किया कि आज वह पूरी तरह छुट्टी मनायेगा—न शेव करेगा, न कंघी करेगा, न कपड़े बदलेगा और न बाहर जायेगा। उसे भय था कि यदि वह बाहर निकला तो उसका मन उसे नदी किनारे जाने के लिए विवश न कर दे।

वह दिन भर अपने कमरे में ही रहा। दोपहर में उसके पिता उसके पास आ गये और कुर्सी पर बैठकर इधर-उधर की बातें करने लगे। .... बातों के दौरान अचानक चंद्रन को यह बात सूझी कि क्यों न वह मालगुडी से बाहर चला जाये। इससे उसकी समस्या सुलझ सकती थी।

''अप्पा, क्या आप मुझे मद्रास जाने देंगे'', वह पूछ बैठा।

''क्यों नहीं? यदि तुम्हें परिवर्तन की जरूरत है तो अवश्य जाओ''।

''क्या वहाँ गर्मी बहुत होगी?''

''वह तो होगी। कहते हैं न कि मद्रास दस महीने गरम रहता है और दो महीने और भी अधिक गरम रहता है।''

फिर तो मैं वहाँ की गरमी मे जाकर नहीं भुनना चाहता

चाहो तो किसी और जगह जा सकते हो अपनी बुआ के पास बँगलौर क्यो नहीं चले जाते?"

"नहीं, नहीं। वे मुझे दिन-रात यही बताती रहेंगी कि उन्होंने अपनी बेटी के लिए क्या-क्या गहने बनवाए हैं। उनकी बातें मुझे अच्छी नहीं लगतीं", चंद्रन ने कहा और अंत में उसने यही निश्चय किया कि वह पृथ्वी के सर्वोत्तम स्थान—अपने घर में ही रहेगा।"

लगभग तीन बजे माँ ने आकर उसकी तबियत के बारे में पूछा। साढ़े चार बजे सीनू स्कूल से लौटा और आकर चंद्रन से पूछने लगा कि वह बिस्तर में क्यों लेटा हुआ है। चंद्रन ने उसके प्रश्न को टालते हुए पूछा कि स्कूल की क्या खबर है। सीनू उसे अपने स्कूल के हालचाल बताने लगा।

साढ़े छ: बजे बाद चंद्रन से बिस्तर में नहीं रहा गया। उसने उठकर सारी खिड़कियाँ खोलीं, मुँह धोया, बालों में कंघी की, कोट (ट्वीड वाला नहीं) पहना और बाहर चल दिया। उसने अपने मन को समझाया कि इस समय उसे ताजी खुली हवा, व्यायाम और कुछ परिवर्तन की आवश्यकता है। व्यायाम के लिए टहलना ही सबसे ठीक रहता किंतु वह नदी किनारे नहीं जाना चाहता था, अत: उसने ठीक विपरीत दिशा में—ट्रंक रोड की ओर जाने का निश्चय किया। ट्रंक रोड पर एक मील तक चलकर वह मुड़ गया। जल्दी-जल्दी लॉली एक्सटेंशन, मार्केट रोड और नॉर्थ स्ट्रीट पार करता हुआ वह नदी किनारे पहुँचा। इस समय अँधेरा हो चुका था और अधिकतर लोग घर लौट चुके थे।

अगली शाम चंद्रन ने उस लड़की को नदी-तट पर देखा। उसने हरे रंग की साड़ी पहन रखी थी और साथ वाली बच्ची के साथ खेल रही थी। उसे देखते ही मानो किसी अदृश्य डोर से खिंचता हुआ चंद्रन उसकी ओर बढ़ गया। किंतु उसके पास पहुँचते ही उसका साहस जवाब दे गया और विपरीत दिशा की ओर चल पड़ा। कुछ दूर चल कर वह रुका और उससे परिचय करने का इतना अच्छा अवसर खो देने के लिए अपने आप को दोष देने लगा। वह दुबारा मुड़ा और धीरे-धीरे चहलकदमी करता हुआ बिल्कुल उसके पास से निकला। कुछ दूर से तो वह फिर भी उसे देख पा रहा था किंतु पास पहुँचने पर स्वत: ही उसका सिर झुक गया, दृष्टि भूमि की ओर स्थिर हो गई और वह तेजी से चलता हुआ निकल गया। एक क्षण में वह उससे बहुत दूर चला गया। एक बार फिर रुक कर उसने पीछे देखा और दूर से उसकी हरी साड़ी की झलक देख कर पुलकित हो उठा। किंतु अधिक समय तक इस तरह ताकने की हिम्मत नहीं जुटा पाया। उसे लग रहा था जैसे नदी-तट की सारी भीड उसे देख रही हो। वह दूर खडा सोचने लगा कि उस लडकी ने ठसे

देखा होगा या नहीं शायद देख लिया हो शायद उसके इस्तरी किए हुए कोट की ओर उसका ध्यान गया हो। साथ ही मन में यह संशय भी उठता था कि लड़की ने उसे नहीं देखा होगा क्योंकि एक तो वह काफी तेज चल रहा था दूसरे वहाँ इतने सारे लोग आ-जा रहे थे। उसने इस संशय को ठेल कर मन से निकाल देना चाहा और संपूर्ण मन से इस विश्वास को सहारा दिया कि जिस तरह उसने इतनी भीड़ के होते हुए भी लड़की को देख लिया था, उसी प्रकार उसने भी भीड़ के बावजूद उसे अवश्य देख लिया होगा। भाग्य अक्सर ऐसे ही खेल खेलता है और फिर उसके बढ़िया इस्तरी किए हुए चॉकलेटी रंग के ट्वीड-कोट की ओर ध्यान आकर्षित होना स्वाभाविक था। वह सोचने लगा कि उस लड़की के सामने से निकलते समय मेरी चाल बेढंगी तो नहीं हो गई थी? यह तो उसने देख ही लिया होगा कि मैं इस भीड़ जैसा नहीं हूँ। अब क्यों न किसी ऐसी जगह जाकर बैठूँ जो उसके समीप होने के साथ-साथ सीधी उसके दृष्टि-क्षेत्र में हो? प्रेम-मार्ग में आधी विजय तो दृष्टि- विनिमय से ही हो जाती है। ... किंतु मन में छिपे संशय ने फिर सिर उठा लिया। कहीं ऐसा न हो कि उसकी इन चेष्टाओं से डरकर वह नदी-तट पर आना ही छोड़ दे। फिर विचार आया कि यदि वह फिर यहाँ नहीं आई तो उससे संपर्क ही टूट जायेगा। जो कुछ करना है समय रहते ही कर लेना चाहिए।.... वह इस अंतर्द्वन्द्व में फँसा हुआ था कि उसकी पीठ पर किसी का हाथ पड़ा और उसने मुड़ कर देखा कि उसके पीछे वीरास्वामी और मोहन खड़े हुए थे।

"कैसे हो चंद्रन? लगता है जैसे मिले बरसों बीत गये।"

"पिछले मार्च में ही तो मिले थे, पूरा साल भर भी नहीं हुआ", चंद्रन ने कहा।

"चंद्रन, तुम्हें वह शाम याद है जो हमने तुम्हारे कमरे में कविता पढ़ते हुए बिताई थी?"

"हाँ, हाँ। तुम्हारी कविताओं का क्या हुआ?"

"वे अब भी मेरे पास ही हैं।"

इससे अधिक कुछ कहने-सुनने की चंद्रन की इच्छा नहीं हुई। उसकी इस समय किसी से मिलने की इच्छा नहीं थी। उसने वहाँ से चले जाना चाहा। पर वीरास्वामी कहाँ छोड़ने वाला था! वह बोला : "मिले हुए एक साल हो गया। मैं पुराने सहपाठियों से मिलने के लिए बेचैन रहा हूँ और तुम हो कि रुख ही नहीं मिला रहे। क्यों न किसी रेस्तराँ में चल कर साथ कॉफी पियें?" वह चंद्रन की बॉह में बाँह डाल कर उसे खींच ले चला। चंद्रन ने पहले विरोध किया फिर कहा

"इस रास्ते से चलो। मैंने किसी से मिलने का वादा किया था। जरा देख लूँ वह यहाँ है या नहीं----" उसने नदी-तट की ओर इशारा करते हुए कहा और वे लोग हरी साड़ी की दिशा में चल पड़े। मोहन ने तीन बार पूछा कि चंद्रन इन दिनो क्या कर रहा था किंतु उसे कोई उत्तर नहीं मिला। वीरास्वामी लगातार बोलता जा रहा था। चंद्रन उनकी बातें सुनने का अभिनय जरूर कर रहा था किंतु साथ ही अपने मित्रों की नजर बचाकर अपनी बायीं तरफ कुछ देखता भी जा रहा था। जब वह लड़की के सामने से निकला तो उसकी हरी साड़ी की एक झलक मात्र ही देख पाया। नदी-तट से दूर जाने से पूर्व वह दो बार से अधिक पीछे मुड़ कर नहीं देख सका। उसे इस समय अपने साथियों का मिलना बहुत बुरा लग रहा था।

"आजकल तुम कर क्या रहे हो, चंद्रन?" मोहन ने हार न मानते हुए चौथी बार फिर पूछा।

"आजकल तो कुछ नहीं कर रहा। हाँ, कुछ महीनों में इंगलैंड जाने वाला हूँ।"

यह सुनकर वीरास्वामी ने इंग्लैण्ड जाने के महत्त्व पर एक उत्तेजनापूर्ण भाषण दे डाला। वह कहने लगा: "आखिर हमें अंग्रेजों से क्या सीखना है? समझ में नहीं आता लोगों पर यह इंग्लैण्ड जाने का खब्त कब तक सवार रहेगा। इससे देश की संपदा की कितनी हानि होती है! अंग्रेजों से ऐसा क्या सीखना है?"

"हो सकता है मैं उन्हें कुछ सिखाने जा रहा होऊँ", चंद्रन ने कहा। उसके मन में अब भी वह लड़की ही घूम रही थी। चंद्रन सोच रहा था कि चाहे पहली बार लड़की ने उस पर ध्यान न दिया हो किन्तु दुबारा सामने से निकलने पर तो उसने अवश्य देखा होगा। यही सोच कर चंद्रन ने गौर से उधर नहीं देखा था। वह उससे नजरें मिला कर उसे संकुचित नहीं करना चाहता था।

"'स्वागत' रेस्तराँ में चलें?" वीरास्वामी ने पूछा। अब वे नदी-तट को छोड़ कर नॉर्थ स्ट्रीट में आ गए थे।

"कहीं भी", चंद्रन ने अनमनेपन से उत्तर दिया।

"लगता है तुम्हें कोई परेशानी है," वीरास्वामी ने कहा।

"नहीं, नहीं।" और चंद्रन ने अपने आप को सँभाला। बेचारे ये दोनों उससे बातें करना चाह रहे थे और वह था कि न जाने क्या-क्या सोच रहा था। उसने अपने ऐसे व्यवहार के लिए मित्रों से क्षमा माँगी। अब वे लोग 'स्वागत' रेस्तराँ के सामने जा पहुँचे थे। वह एक छोटी-सी इमारत थी जिसमें से हमेशा मिठाइयों और जलते हुए घी की गंध निकलकर गली तक फैली रहती थी वे उसके अँधेरे से

हाल मे जाकर एक चिकनी मेज के इर्द गिर्द बैठ गए वेटर लोग ग्राहको को व्यजन सूची और बिल पकड़ाते हुए इधर से उधर आ जा रहे थे उनमे से एक लड़के ने उन लोगों के पास भी आकर पूछा : "क्या लाऊँ, साहब?"

"क्या मँगवाएँ?"

"मैं तो केवल कॉफी लूँगा।"

"उसके साथ कुछ तो लो।"

"असंभव। केवल कॉफी।"

"तीन कप कॉफी ले आओ। अच्छी, कड़क हो।"

चंद्रन ने मोहन से पूछा : "तुम आजकल क्या कर रहे हो? पास तो हो गए थे न?"

"नहीं, मैं फेल हो गया था। मेरे चाचा ने मुझे और पढ़ाने से इनकार कर दिया था। आजकल मैं मद्रास के दैनिक समाचार-पत्र 'द डेली मेसेन्जर' का मालगुडी-संवाददाता हूँ यानी पूरे मालगुडी जिले का। वे मुझे समाचारों के हर इक्कीस इंच वाले कालम के लिए साढ़े तीन रुपये देते हैं।"

"क्या तुम इससे काफी कमा लेते हो?"

"कभी पचास तो कभी केवल दस। यह सब उन दुष्टों की मर्जी पर निर्भर है। कभी-कभी तो वे मेरी भेजी हुई सारी खबरें काट देते हैं।"

"यह तो नर्म दल वालों का अखबार है," वीरास्वामी ने उपहासपूर्वक कहा।

"मुझे उनकी नीति से क्या मतलब!" मोहन बोला।

"और तुम क्या कर रहे हो?" चंद्रन ने वीरास्वामी की ओर मुड़ कर पूछा।

"मुझे तो यह सब बताने में पूरा दिन लग जायेगा। मैं एक आंदोलन चला रहा हूँ जिसका नाम है 'रेज़रेक्शन (पुनरुद्धार) ब्रिगेड'। इसके लिए मुझे काफी भ्रमण करना पड़ता है।"

"यह वास्तव में है क्या?"

"यह देश को क्रांति के लिए तैयार करने का प्रयास है। मॉन्टेग्यू चेल्म्सफोर्ड सुधार, साइमन रिपोर्ट आदि सब धोखा है। हमारे सब राजनीतिज्ञ, जिनमें कांग्रेस के लोग भी शामिल हैं, साम्राज्यवादियों के हाथ के खिलौने हैं। सविनय अवज्ञा आंदोलन (सिविल डिसओबीडियन्स मूवमेन्ट) एक बचकानी चेष्टा है। हमारी ब्रिगेड एक मौलिक तरीके से देश का उद्धार करेगी। क्या तुम इसके सदस्य बनोगे? मोहन तो पहले से ही इसका सदस्य है।"

''मैं सोच कर बताऊँगा। मोहन को इसमें किस तरह का काम करना है?''

''हर तरह का। हमें इसमें सब प्रकार के लोगों की जरूरत है—कवि, संगीतज्ञ, मूर्तिकार और तलवार चलाने वाले।''

''अब तक कितने लोग इसके सदस्य हो चुके हैं?''

''लगभग पच्चीस। मुझे आशा है कि दो साल के भीतर केवल दक्षिण भारत से ही हमें पाँच हजार सदस्य मिलेंगे।''

कॉफ़ी समाप्त करके वे लोग उठे, फिर से नदी किनारे गये, सिगरेट पिए और पूरी शाम बातें करते रहे। विदा लेने से पूर्व चंद्रन ने उनसे पुनः मिलने का वादा किया और उनका पता-ठिकाना पूछा। वीरास्वामी ने बताया कि वह मोहन के साथ ठहरा हुआ है। मोहन से पता पूछने पर उसने बताया कि वह कमरा नं. 14, मॉडर्न इंडियन लॉज, मिल स्ट्रीट में रहता है। वीरास्वामी ने यह भी बताया कि वह केवल मंगलवार तक यहाँ मिलेगा, उसके बाद छः महीने के लिए देहात की ओर निकल जायेगा।

चंद्रन को यह समझ में आ गया कि नदी तट पर मित्र और परिचित आकर उसे परेशान कर सकते हैं। उसने अपने मन में निश्चय कर लिया कि वह आगे से इन सबसे दूर रहने की कोशिश करेगा। इस निश्चय के साथ वह अगले दिन सरयू किनारे पहुँचा। उसने यह भी निश्चय किया कि आगे से वह झिझकेगा नहीं और न दूसरों के देखने की और आलोचना की परवाह करेगा।

वह अपनी छोटी बहन के साथ नदी तट पर मौजूद थी। चंद्रन एक ऐसी जगह जा बैठा जो उस लड़की से लगभग तीस गज की दूरी पर थी। उसने सोच लिया था कि आज उसे जी भर देखेगा। यदि संभव हुआ तो उसकी ओर देख कर मुस्करा देगा या आँख से इशारा करेगा। वह अभी तक यह भी नहीं जान पाया था कि वह गोरी है अथवा साँवली, उसके बाल लंबे हैं अथवा छोटे, उसकी आँखें गोल हैं अथवा बादाम के आकार की, और उसकी नाक के बारे में भी उसे कुछ भी पता नहीं था। उस स्थान पर बैठा हुआ वह उसे थोड़ी-थोड़ी देर में कनखियों से देखता रहा। वह उस बच्ची के साथ खेलने में मग्न थी। उसकी इच्छा हुई कि उसके पास जाकर पूछे कि क्या वह बच्ची उसकी बहन है और उसकी स्वयं की उम्र क्या है। किंतु उसने ऐसा किया नहीं। इतने लोगों के सामने यदि एक बाईस वर्ष का आदमी जाकर एक अपरिचित वयस्क लड़की से बातें करने लगे तो वह अजीब-सा लगेगा, उसने सोचा।

फिर तो यह दृष्टि-संपर्क नित्य की बात हो गई। इन दिनों चंद्रन की निरीक्षण व अनुमान क्षमता काफी बढ़ गई थी। उसने उस लड़की के बारे में कई बातें जान

ली थी वह एक दिन काली साडी और एक दिन हरी साडी बदल बदल कर पहनती थी। वह नदी किनारे विशेष रूप से उस बच्ची की खातिर आती थी। वह शुक्रवार को नहीं आती थी और बुधवार को देर से आती थी। इससे चंद्रन ने अनुमान लगाया कि वह शुक्रवार की शाम को मंदिर जाती होगी और बुधवार को शायद संगीत-शिक्षक या सिलाई-शिक्षक से संगीत अथवा सिलाई सीखती हो। इससे यह अनुमान भी लगाया गया कि वह संगीत अथवा सिलाई-कढ़ाई में निपुण होगी। उसकी नियमितता से यह भी पता चलता था कि वह काफी व्यवस्थित आदतों वाली है। उसे एक बच्ची के साथ खेलते देख कर चंद्रन को यह भी लगता था कि वह स्नेहशील प्रकृति की है। लगता था उसके कोई भाई नहीं है वरना कभी तो उसे पहुँचाने या लेने आता। इससे उत्साहित होकर चंद्रन ने सोचा कि जब वह लड़की घर जाने के लिए उठे तो क्यों न उसे रोक कर उससे बात की जाये। बल्कि वह उसके घर तक साथ-साथ जा सकता है। यह रोजाना का क्रम भी बन सकता है। वह उससे कितनी अच्छी-अच्छी बातें करेगा! वे दोनों चाँदनी में, या तारों की रोशनी में साथ-साथ टहलते हुए जायेंगे। उसके घर से कुछ गज की दूरी पर ही वह रुक जाया करेगा। उससे विदा लेने में कैसी करुण-मधुर अनुभूति होगी! -- उसकी इस स्वप्निल कल्पना मे उस लड़की के साथ वाली बच्ची का कोई स्थान नहीं था। वह बस नदी-तट पर लड़की के साथ होती थी (और उसके बाद शायद अकेली घर जाती थी)।

कुछ भी हो, उस लड़की को इस तरह देख लेने से भी उसके मन को काफी शाति प्राप्त होती थी। वह नदी-तट से शाम को देर से घर जाता और रास्ते भर एकाग्र मन से ईश्वर से प्रार्थना करता कि वह उसके प्रेम को सफलता प्रदान करे। पूरी-पूरी रात वह 'लक्ष्मी' नाम को मन में दोहराता रहता और भाव-प्रवण होकर सोचता कि काश इस रात के सन्नाटे में उसकी आत्मा मेरी यह पुकार सुन पाती हो।

जब इसी मन:स्थिति में एक महीने से अधिक निकल गया तो चंद्रन को लगा कि उसे कुछ व्यावहारिक होना चाहिए। आखिर इस तरह नदी-तट पर जाकर लड़की की ओर ताकते हुए पूरा जीवन तो नहीं बिताया जा सकता। उसके बारे में सब कुछ मालूम करना चाहिए।

एक दिन जब साँझ के झुटपुटे में वह नदी-तट से वापस घर लौट रही थी तो वह उसके पीछे-पीछे लगभग आधा फर्लांग की दूरी पर चलने लगा। उसने उसे मिल स्ट्रीट के एक मकान में प्रवेश करते देखा। यह देखने के लिए कि घर के सामने कोई तख्ती तो लगी हुई नहीं है, वह दो बार उस घर के सामने से निकला। वहाँ नाम इत्यादि की कोई तख्ती नहीं थी।

अचानक चंद्रन को याद आया कि मोहन भी मिल स्ट्रीट में ही रहता था। उसने अपना पता बताया था : मिल स्ट्रीट में मॉडर्न इंडियन लॉज, कमरा नं. 14। वह इस होटल की तलाश करता हुआ घूमता रहा। अंत में उसे पता चला कि वह तो उस लड़की के घर के सामने ही था। वहाँ एक नामपट्ट भी लगा हुआ था जो उसे अँधेरे में नहीं दिखा था। कमरा नं. 14 सीढ़ी के ऊपर ही बना हुआ था। वह एक छोटी सी कोठरी थी जिसे लकड़ी के एक ऊँचे पार्टीशिन द्वारा कमरा नं. 14 व 15, दो भागों में विभक्त किया हुआ था।

मोहन चंद्रन को देख कर बहुत खुश हुआ। मोहन से मालूम हुआ कि वीरास्वामी कई सप्ताह पूर्व ही वहाँ से जा चुका था। कमरे में एक भी मेज या कुर्सी नहीं थी। बस, जमीन पर एक धारीदार दरी बिछी हुई थी। मोहन इस पर लकड़ी के पार्टीशन के सहारे बैठता था। कमरे के एक कोने में एक पीले रंग का ट्रंक रखा हुआ था जिस पर कागज के फूलों वाला एक चमकीला-सा निकल का फूलदान रखा हुआ था। कमरे में हवा व प्रकाश कमरा नं. 15 में बनी हुई एकमात्र खिड़की से लकड़ी के पार्टीशन के ऊपर से आते थे। पार्टीशन से एक गैस का लैम्प भी लटका हुआ था जिसकी हरी-सी रोशनी दोनों कमरों (नं. 14 व 15) को समान रूप से प्राप्त होती थी।

"शायद तुम्हें यह सुनकर विश्वास नहीं होगा कि मैं इस ओर पहले कभी नहीं आया", चंद्रन ने कहा।

"अच्छा! पर ऐसा होना स्वाभाविक है। तुम शहर के दक्षिणी भाग में रहते हो जबकि यह पूर्व में है।"

"मुझे यह सड़क अच्छी लगी। पता नहीं यह मिल स्ट्रीट किसलिए कहलाती है। क्या यहाँ रहने वाले लोग मिल-मालिक हैं?"

"ऐसा तो बिल्कुल नहीं है। हाँ, बरसों पहले इस सड़क के छोर पर दो कपडा बुनने की मिलें थीं। अब तो यहाँ सब तरह के लोग हैं।"

"कोई महत्त्वपूर्ण व्यक्ति भी रहता है क्या?"

"मेरी जानकारी में तो ऐसा कोई नहीं है।"

चंद्रन पूछना चाहता था कि सामने वाले मकान में कौन रहता है किंतु उसने संकोचवश पूछा नहीं। केवल यह इच्छा प्रकट की कि वह अक्सर मोहन से मिलने यहाँ आया करेगा।

"मैं समाचार एकत्र करने के लिए सुबह दस बजे निकल जाता हूँ और उन्हे डाक से भिजवाकर लगभग चार बजे लौटता हूँ। उसके बाद तो प्राय: घर पर ही रहता हूँ। तुम जब चाहो आ सकते हो," मोहन ने कहा।

"क्या तुम्हें छुट्टियाँ नहीं मिलतीं?"

"रविवार को अखबार नहीं निकलता, इसलिए शनिवार को छुट्टी रहती है। मैं पूरा दिन अपने कमरे में ही बिताता हूँ। तुम जिस समय और जितनी बार चाहो, जरूर आना।"

"धन्यवाद! आजकल कोई भी साथी दिखाई नहीं देता। मैं यहाँ अक्सर आना पसंद करूँगा," चंद्रन ने कहा।
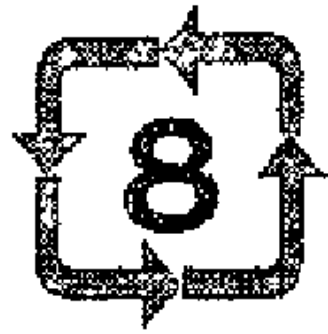
मोहन की सहायता से चंद्रन को मालूम हुआ कि उस लड़की का नाम मालती था, वह अविवाहित थी और एक्जीक्यूटिव इंजीनियर के दफ्तर के हेड क्लर्क मिस्टर डी डब्लू. कृष्ण अय्यर की बेटी थी। पिता के नाम के बाद वाले भाग से पता चलता था कि वे चंद्रन की ही जाति व गोत्र के थे। चंद्रन यह सोच कर मन ही मन सिहर उठा कि यदि वे कृष्ण आयंगर या कृष्ण राव या फिर कृष्ण मुदालियार होते तो उसे कितनी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता। यदि वह विजातीय लड़की से शादी करना चाहता तो उसके पिता अवश्य ही उसका परित्याग कर देते।

चंद्रन ने यह एक शुभ शकुन माना और उसे लगा कि यह उसकी प्रार्थनाओं का फल है। आखिर यह भगवान की कृपा ही तो थी कि मोहन उस लड़की के घर के सामने ही रहता था, कि वह अविवाहित निकली और यह भी कि उसके पिता अय्यर निकले।

चंद्रन ने ईश्वर से प्रार्थना की कि उसे साहस दे ताकि वह अपने पिता के पास जाकर शादी की बात कर सके। वह अपने पिता के पास गया भी, किंतु अंत में उसका साहस जवाब दे गया और वह कोई और ही इधर-उधर की बात करके चला आया। दूसरे दिन वह फिर निश्चय करके अपने पिता के पास गया किंतु फिर वही हाल हुआ। वह अपने कमरे में जाकर अपनी कायरता पर पछताता रहा। ऐसा डरपोक, मेरुदंडहीन व्यक्ति मालती के योग्य कैसे हो सकता है, उसने सोचा। अपने पिता से डरना! उफ! आखिर वह खिलौने के लिए मचलता हुआ शिशु तो था नहीं, वयस्क था और फिर एक गंभीर, महत्त्वपूर्ण उद्देश्य से वहाँ गया था। ऐसा दुर्बलहृदय व्यक्ति और मालती का पति! छी!

वह फिर से अपने पिता के पास पहुँचा। वे उस समय बरामदे में बैठे कुछ पढ़ रहे थे। माँ अपनी कुछ सहेलियों से मिलने गई हुई थीं और सीनू स्कूल गया था। इस समय पिता से अपने मन की बात कही जा सकती थी

चद्रन को देखकर उसके पिता ने अपने हाथ की पुस्तक रख दी। चद्रन उनकी आराम कुर्सी के पास एक कुर्सी खींच कर बैठ गया।

"चंद्रन, तुमने यह पुस्तक पढ़ी?"

चंद्रन ने पुस्तक देखी—डिकिन्स का कोई उपन्यास था। उसने इनकार किया। कोई और समय होता तो वह कहता, "मुझे डिकिन्स का हास्य-चित्रण असहज और अस्वाभाविक लगता है", और इस पर बहस करता, किंतु इस समय उसने केवल इतना ही कहा : "मैं इसे बाद में पढ़ने की कोशिश करूँगा।" वह साहित्यिक वाद-विवाद में यह अमूल्य समय नष्ट नहीं करना चाहता था।

"अप्पा, कृपया मुझे गलत न समझें। मैं डी. डब्लू. कृष्ण अय्यर की बेटी से शादी करना चाहता हूँ।"

अप्पा ने चश्मा उठाकर लगाया और एकदम उठकर सीधे बैठ गये, त्योरी चढ़ाकर बोले : "वे कौन हैं?"

"एक्ज़ीक्यूटिव इंजीनियर के ऑफिस में हेडक्लर्क हैं।"

"उनकी लड़की से शादी क्यों करना चाहते हो?"

"वह मुझे पसंद है।"

"क्या तुम उस लड़की को जानते हो?"

"हाँ। मैंने उसे कई बार देखा है।"

"कहाँ?"

चंद्रन ने बताया।

"तुम लोगों ने एक-दूसरे से बात की है?"

"नहीं ---।"

"वह तुम्हें जानती है?"

"पता नहीं।"

अप्पा हँसने लगे। चंद्रन के मन को धक्का-सा लगा।

"यही लड़की क्यों? कोई दूसरी क्यों नहीं?" उन्होंने पूछा।

"मुझे यह लड़की पसंद है।"

"देखो, मैं इन बातों में कुछ समझता नहीं। तुम्हारी माँ के आने पर उनसे पूछना पड़ेगा," अप्पा ने कहा। चंद्रन तुरंत वहाँ से चल दिया।

बाद में माँ ने चंद्रन के कमरे में आकर पूछा, "यह सब मैं क्या सुन रही हूँ?" चंद्रन मौन रहा।

"कौन है यह लड़की?" उनके स्वर में भारी चिंता झलक रही थी। चंद्रन ने बताया। सुनकर उन्हें बड़ी निराशा हुई। उन्होंने अपनी बहू के रूप में एक हेडक्लर्क की लड़की की कल्पना नहीं की थी। बोलीं : "चंद्रन, तुम्हारे लिए दर्जनों लड़कियो के रिश्ते आये हैं। उनमें से किसी पर विचार क्यों नहीं करते?"

चंद्रन ने क्रुद्ध होकर यह सुझाव ठुकरा दिया।

"वे लड़कियाँ ज्यादा अमीर घरों की और ज्यादा सुंदर हों तो भी नहीं?"

"मुझे कोई मतलब नहीं। मैं इसके सिवा और किसी लड़की से शादी नहीं करूँगा।"

"पर तुमने यह कैसे मान लिया कि वे इस रिश्ते के लिए सहमत हैं?"

"सहमत तो होना पड़ेगा।"

"वाह! तुम सोचते हो शादी बच्चों का खेल है? हम उन लोगों के बारे में कुछ नहीं जानते। वे कैसे हैं, उनकी क्या हैसियत है, लड़की के ग्रह-नक्षत्र कैसे हैं और वे अपनी लड़की को ब्याहने के लिए तैयार भी हैं या नहीं।--"

"तैयार तो अवश्य होंगे। मैंने सुना है कि इस वर्ष वे उसकी शादी कर देना चाहते हैं क्योंकि वह सोलह वर्ष की होने वाली है।"

"सोलह!" माँ चीख कर बोलीं। "यदि उन्होंने सोलह की आयु तक लड़की को कुँआरी रखा है तो वे लोग ठीक नहीं हो सकते। आखिर हमारी भी इस शहर में कोई इज्जत है। यह सब क्या बच्चों का खेल समझ रखा है?" कहती हुई वे क्रोध में भरी हुई वहाँ से चली गईं।

ये विरोध के बादल कुछ दिन में छँटने लगे क्योंकि चंद्रन के माता-पिता अधिक दिनों तक उसे खिन्न व उदास नहीं देख सकते थे। उसकी खातिर वे एक सीमा तक समझौता करने के लिए तैयार हो गये। यदि विवाह-प्रस्ताव कन्या-पक्ष की ओर से आये तो वे उस पर विचार करने के लिए तैयार थे, किंतु लड़के के माता-पिता होने के कारण वे पहल नहीं करना चाहते थे। परम्परा के अनुसार लड़की वालों को ही विवाह-प्रस्ताव लेकर आना होता था। यदि इसका उलटा हुआ तो जाति के लोग सब उन पर हँसते। यह सब सुनकर चंद्रन क्रोध से बोल उठा : "भाड़ में जायें ये मूर्खतापूर्ण रीति-रिवाज!"

किंतु उसकी माँ उसका क्रोध देख कर डरने वाली नहीं थीं। उन्होंने साफ-साफ कह दिया कि वे जब तक जीवित हैं, अपनी पीढ़ी के इन रीति-रिवाजों को मान्यता अवश्य देंगी। उन लोगों की आपसी बातचीत भी अब कम होती जा रही थी। बात कभी शुरू भी होती तो वह रीति-रिवाजों को लेकर वाद-विवाद में बदल

जाती थी इस प्रकार की बहस के दौरान पिता अक्सर मौन ही रहते थे चंद्रन को यह भी पता नहीं चल पाता था कि उनका मंतव्य किस पक्ष में है। प्रकट रूप से वे चंद्रन के रास्ते में कोई रोड़ा नहीं अटका रहे थे किंतु मदद भी तो नहीं कर रहे थे। लगता था जैसे उन्हें इन मामलों में अपने ज्ञान व समझ पर भरोसा नहीं था अत. उन्होंने इसकी पूरी बागडोर अपनी पत्नी के हाथ में दे दी थी। एक-दो बार चंद्रन ने उन्हें अपने पक्ष में लेने की कोशिश की किंतु वे टाल गये।

इस संकट-काल में चंद्रन का एकमात्र सहारा था मोहन। वह रात्रि के भोजन के बाद रोजाना मोहन के कमरे पर जाता था। इसमें उसका एक और भी स्वार्थ था। वह रास्ते में कुछ क्षण मालती के घर के सामने रुक जाता और अक्सर घर में इधर-उधर जाते हुए उसकी झलक भी पा जाता। उसे देख कर वह कल्पना करता कि शायद वह सोने जा रही है; आह! वे तकिए कितने विशिष्ट हैं जिन पर सिर रख कर वह सोएगी। या शायद वह पढ़ने के लिए कमरे में जा रही है। क्या कहने उन पुस्तकों के, जिनका वह स्पर्श करेगी! वह सोने किस समय जाती होगी और किस समय उठती होगी? किस ढंग से सोती होगी वह? उसका बिस्तर कैसा दिखता होगा? काश, वह उसके घर में जा कर कहीं छिप जाता और रात को चुपचाप उसके कमरे में घुस कर उसे अपनी बाँहों में जकड़ लेता व उसे उठा ले जाता!--

अगर कभी चंद्रन को वहाँ जाने में देर हो जाती और उस घर की बत्तियाँ बुझ जातीं तो वह विक्षिप्त-सा घर के सामने चक्कर लगाता रहता और फिर मोहन के कमरे मे चला जाता। मोहन अपनी अधलिखी कविता एक और सरका कर उसके लिए दरी पर जगह खाली कर देता। यदि मोहन का सहारा नहीं होता तो चंद्रन के निराश प्रेम की आँच उसे झुलसा कर छोड़ती।

चंद्रन मोहन को अपने नवीनतम हालात की जानकारी देता और फिर वे दोनों उस पर अपने-अपने विचार व्यक्त करते।

"यदि उस लड़की के पिता का परिचय हेड क्लर्क के अतिरिक्त कुछ और होता और उसका वेतन सौ रुपये अधिक होता तो मुझे पूरा विश्वास है कि तुम्हारे माता-पिता उससे रिश्ता जोड़ने के लिए जमीन-आसमान एक कर देते," मोहन ने कहा।

"आखिर हमारे माता-पिता हमसे यह आशा क्यों करते हैं कि वे डण्डा लेकर हमें जिधर हाँक देंगे, हम उधर ही नाक की सीध में चलते जायेंगे?" चंद्रन ने क्रोध से कहा, "हम अपनी इच्छानुसार अपनी जिंदगी क्यों नहीं जी सकते? वे हमे हमारे हाल पर क्यों नहीं छोड देते?"

ये काफ़ी जटिल प्रश्न थे और कवि मोहन ने अपने तरीके से उनका उत्तर देते हुए कहा : जीवन मे पैसा ही सबसे शक्तिशाली है। पिता, माता व भ्राता सब तुमसे पैसा चाहते हैं। उन्हें पैसा दे दो तो वे तुम्हें तुम्हारे हाल पर छोड़ देंगे। मैंने इसी विषय पर कविता की कुछ पंक्तियाँ लिखी हैं, शीर्षक है 'मनी लव' (संपत्ति प्रेम)। यह एक छंदमुक्त कविता है। यह तुम्हें जरूर सुननी चाहिए, मैंने तुम्हें ही समर्पित की है।" मोहन ने निम्नलिखित आशय की कविता पढ़ कर सुनाई :

"सोचते हो तुम,
तुम्हारे माँ-बाप को प्यार है तुमसे,
निस्पृह और निःस्वार्थ प्यार।
किंतु मेरे मित्र,
यह विचार है नितांत निराधार।
उन्होंने,
खिलाया-पिलाया तुम्हें,
पाला, दुलारा, तुम्हें,
क्योंकि उन्हें आस है,
एक दिन लाओगे पैसा तुम,
पैसा ही पैसा, ढेर-सा पैसा।
उन्हें विश्वास है,
एक दिन लाओगे एक अदद दुलहन तुम
जो लेकर आयेगी
पैसा ही पैसा, ढेर-सा पैसा।---"

कविता में इसी तरह के दो खंड और थे। सुन कर चंद्रन की आँखों में आँसू आ गये। उसे अपने माता-पिता से घृणा हो आई। घर लौटते समय वह इस कविता को अपने साथ ले गया।

अगले दिन उसने यह कविता अपने पिता को दी। उन्होंने उसे दो बार पढ़ा और सूखी हँसी हँस कर पूछा : "क्या यह तुमने लिखी है?"

"किसी ने भी लिखी हो, उससे क्या फर्क पड़ता है!" चंद्रन बोला।

"क्या तुम ऐसा ही सोचते हो जैसा इसमें लिखा है?"

"हाँ, बिल्कुल," चंद्रन ने कहा और तुरंत वहाँ से चल दिया।

उसके जाने के बाद उसके पिता ने उसकी माँ को उस कविता का अर्थ समझाया। माँ सुन कर रोने लगीं। पिता उन्हें सांत्वना देते हुए बोले : "ये हैं उसकी भावनाएँ! समझ में नहीं आता क्या किया जाये।"

हमने वादा किया है कि यदि प्रस्ताव उस पक्ष की ओर से आया तो उस पर विचार करेंगे। इससे अधिक भला हम क्या कर सकते हैं?"

"पता नहीं।"

"वे लोग पूरे घाघ मालूम होते हैं। शादियों का मौसम शुरू हो गया है। आखिर प्रस्ताव लेकर आते क्यों नहीं? वे चाहते हैं चंद्रन जाकर उनके चरणों में गिरे और उनसे उनकी पुत्री की याचना करे।"

"संभव है उन्हें चंद्रन के बारे में मालूम ही न हो," पिता ने कहा।

"आप उनका पक्ष क्यों ले रहे हैं? चंद्रन जैसे योग्य वर के अस्तित्व के बारे में उन्हें कोई जानकारी ही न हो ऐसा नहीं हो सकता। उस लड़की का बाप काफी धूर्त मालूम होता है। वह हमारे साथ चाल चल रहा है। वह इस बात का इंतजार कर रहा है कि चंद्रन ही उसके पास जाये ताकि उसे बिना दहेज दिए और बिना शादी में विशेष खर्चा किए अपनी बेटी के लिए अच्छा वर मिल जाये।--यह लड़का चंद्रन तो बकवास कर रहा है। अपने बच्चों के लिए इतना कष्ट उठाते हैं और उसका हमें यह फल मिलता है। --आखिर इससे अधिक हम कर भी क्या सकते हैं। इससे पहले कि विवाह का प्रस्ताव हमारी ओर से जाये, मैं सरयू में डूब कर मर जाना पसंद करूँगी।"

❑❑❑

चंद्रन के माता-पिता ने गणपति शास्त्री को बुला भेजा जो मालगुडी के संभ्रान्त परिवारों में घटक का काम करते थे। गाँव में शास्त्री जी की कुछ जमीन थी जिससे उन्हें थोड़ी-बहुत आय हो जाती थी। इसके अतिरिक्त वे कभी कलक्टर के दफ्तर में क्लर्क रहे थे, अत: वहाँ से भी उन्हें कुछ पेन्शन मिलती थी। सरकारी नौकरी से सेवा-निवृत्ति के बाद वे धार्मिक कर्मकांड करवाने, परामर्श देने तथा विवाह-संबंध तय करवाने का काम करते थे। किंतु उनकी ये सेवाएँ शहर के कुछ संपन्न परिवारों तक ही सीमित थीं।

वे अगले दिन दोपहर को आये और सीधे रसोईघर में चले गए जहाँ चंद्रन की माँ कुछ मिठाइयाँ बनाने में व्यस्त थीं। उन्होंने शास्त्री जी का स्वागत करते हुए उन्हें इतने लंबे समय तक घर पर न आने का उलाहना दिया। शास्त्री जी ने बताया कि वे कुछ महीनों से गाँव गए हुए थे। वहाँ उनकी जमीन को लेकर कुछ झगड़ा चल रहा था और किराएदारों से किराया भी वसूल करना था।

"अरे आप खड़े हैं।" वे बोलीं और रसोइए को उन्हें बैठने के लिए पीढ़ा देने का हुक्म दिया।

"अरे नहीं, नहीं। आप तकलीफ न करें। मैं जमीन पर ही बैठ जाऊँगा" कहते हुए उन्होंने रसोइए के हाथ से पीढ़ा लेकर एक ओर रख दिया और जमीन पर बैठ गए।

"थोड़ा नाश्ता और कॉफी तो चलेगी?" चंद्रन की माँ ने पूछा।

"नहीं, नहीं। मैं घर से नाश्ता करके चला हूँ। आप बिल्कुल कष्ट न करें।"

"इसमें भला कष्ट कैसा!" कहते हुए चंद्रन की माँ ने उनके सामने एक तश्तरी में मिठाई और एक कॉफी का प्याला रख दिया।

शास्त्री जी ने धीरे-धीरे मिठाई खाकर कॉफी पी और बोले : "मैंने यह सब इसलिए लिया कि आपने यह मेरे सामने ला रखा। किसी भी वस्तु को बरबाद करना

मुझे अच्छा नहीं लगता। पीलिया होने के बाद से मेरी पाचन-शक्ति पहले जैसी नहीं रही है। मैंने डॉक्टर केशवन को दिखाया था। शायद आप उनको जानती हों। वही त्रिचनापल्ली के राजू का दामाद! उसे मैं लड़कपन से जानता हूँ। -- तो डॉक्टर ने बताया कि मुझे इमली खाना छोड़ देना चाहिए। उसकी जगह केवल नीबू का प्रयोग करना चाहिए ....।''

इसके बाद चंद्रन की माँ उन्हें घर के पीछे वाले बरामदे में ले गईं और उन्हें एक चटाई पर बिठाकर असली बात छेड़ दी।

''क्या आप डी. डब्लू कृष्ण अय्यर के परिवार को जानते हैं?'' उन्होंने शास्त्री जी से पूछा।

बूढ़े शास्त्री जी ने एक मिनट सोच कर कहा :

''डी.डब्लू. कृष्णन; आपका मतलब कोयम्बटूर अप्पई के भतीजे से तो नहीं है? वही, जो एक्जीक्यूटिव इंजीनियर के दफ़्तर में है। मैं उस परिवार को तीन पीढ़ियों से जानता हूँ।''

''मुझे पता चला है कि उनके घर में विवाह-योग्य उम्र की लड़की है।''

वृद्ध ने कुछ देर सोच कर बताया : ''हाँ, सो तो है। उनके एक लड़की है जिसकी उम्र काफी हो चुकी है पर अभी तक शादी नहीं हुई है।''

''इसका कारण क्या है? क्या परिवार में कोई ख़ोट है?''

''नहीं, नहीं, ऐसी कोई बात नहीं है'', वृद्ध ने कहा। उन्हें लगा कि उस परिवार की आलोचना करना ठीक नहीं रहेगा। अत: वे सम्हल कर बोले : ''उस परिवार में कोई दोष नहीं है। जो ऐसा कहता है उसकी जीभ में कीड़े पड़ेंगे। असल में लड़की की बढ़न अच्छी है इसलिए वह अपनी उम्र से अधिक की दिखाई देती है। उसकी आयु पंद्रह से अधिक नहीं हो सकती। आजकल तो शादी की यही उम्र मानी जाती है। अब लोग पुराने विचारों के नहीं रहे हैं। सदाशिव अय्यर का परिवार तो कितने पुराने व कट्टर खयालों का है, उन लोगों ने भी हाल ही में एक लड़की की पंद्रह वर्ष की उम्र में शादी की है।''

चंद्रन की माँ को यह सब सुन कर काफी तसल्ली हुई। उन्होंने पूछा : ''क्या आपकी राय में वह परिवार अच्छा है?''

''डी.डब्लू. कृष्ण अय्यर बड़े कुलीन परिवार से हैं। उनके पिता--'' शास्त्री जी उनके परिवार की तीन पीढ़ियों का प्रभावशाली इतिहास बताने लगे। वे बोले . ''कृष्णन के एक हेडक्लर्क मात्र होने का कारण यह है कि जब तक पारिवारिक सपत्ति उनके हाथ में आई उनके बड़े भाई उसे उड़ा चुके थे और उन्होंने कृष्णन के

लिए केवल ढेर से ऋण का भार छोड़ दिया था बचपन मे सुख ऐश्वर्य मे पले कृष्णन को पिता की मृत्यु के बाद भारी दुर्भाग्य का सामना करना पड़ा। ये सब भाग्य के खेल हैं। आगे क्या होने वाला है कोई नहीं जानता।''

दो घंटे तक बातचीत करने के बाद यह निश्चित हुआ कि शास्त्री जी डी.डब्लू कृष्ण अय्यर के घर जाकर पता लगायेंगे कि क्या वे लोग इस साल अपनी लडकी की शादी करना चाहते हैं और साथ ही उन्हें यह सुझाव देंगे कि वे चंद्रन के परिवार के पास विवाह-प्रस्ताव लेकर आयें। वे उन लोगों को यही बतायेंगे कि वे स्वेच्छा से ही यह सलाह दे रहे हैं, उन्हें ऐसा करने के लिए किसी ने कहा नहीं है।

अगले दिन शास्त्री जी शुभ समाचार लेकर आए। चंद्रन के माता-पिता ने उन्हें देखते/ही उनका स्वागत करते हुए बैठने के लिए कुर्सी आगे बढ़ा दी। उस पर बैठ कर दुपट्टे से पसीना पोंछते हुए शास्त्रीजी चंद्रन की माँ से बोले : ''इस बार गरमी बड़ी जल्दी शुरू हो गई है। आपने घड़े में पानी रखना शुरू किया या नहीं?''

''वह तो जरूरी है। उसके बिना तो गरमी में प्यास ही नहीं बुझ सकती।''

''तो फिर अपने रसोइए से कह कर एक गिलास घड़े का पानी मँगवा दीजिए।''

''आप कॉफी पीजिए।''

''उसकी तकलीफ न करें। जल से काम चल जायेगा।''

''आप कॉफी के साथ कुछ खाना पसंद करेंगे?''

''नहीं, नहीं केवल पानी चाहिए। कॉफी या नाश्ता लाने की तकलीफ न करें।''

''तकलीफ कुछ नहीं है,'' कहती हुई माँ एक प्याला कॉफी ले आईं और पूछने लगीं, क्या हमारे लिए कोई समाचार है?

''हाँ, हाँ बिल्कुल है। मैं आज सुबह डी. डब्लू कृष्ण अय्यर के घर गया था। यह तो आप जानती ही हैं कि हम लोग एक-दूसरे को तीन पीढ़ियों से जानते हैं। मैं पहुँचा तो वे घर पर नहीं थे, किंतु उनकी पत्नी वहीं पर थीं। उन्होंने अपनी बेटी से कह कर मेरे लिए चटाई बिछवाई और कॉफी मँगवाई। मैं जहाँ भी जाता हूँ लोग कॉफी पिलाए बिना नहीं मानते। मैंने कॉफी पीकर प्याला वापस लड़की को दिया--बड़ी स्मार्ट लड़की है, खूब लंबी, गठन भी अच्छी है। रंग भी उसका गोरा कहा जा सकता है। हाँ, आपके जितना गोरा नहीं, किंतु वह काली किसी भी तरह नहीं कही जा सकती। उसकी माँ ने मुझे बताया कि उसने हाल ही में अपना चौदहवॉं वर्ष पूरा किया है।'' यह सब सुनकर चंद्रन की माँ का दिल हलका हो गया। अब उन्हे सोलह साल से भी अधिक की लड़की से अपने लड़के की शादी करके जाति-निन्दा का सामना नहीं करना पडेगा।

मैं जानती थी कि लोग जो बोलते थे वह सच नही हो सकता ' उन्होने कहा।

"फिर हम लोगों ने इधर-उधर की बातें की," शास्त्री जी बोले, "और अंत में शादी की चर्चा छिड़ गई। यह बात पक्की है कि वे इस साल लड़की को ब्याह देना चाहते हैं। ...जब मैं वापस लौटने की सोच रहा था तो कृष्णन आ गए। बहुत अच्छे आदमी हैं। मेरी आयु और उनके पिता और चाचाओं के साथ मेरे पुराने संबंधों को देखते हुए उन्होंने मुझे पूरा सम्मान दिया। वे भी बेटी की शादी इसी साल निपटा देने के इच्छुक हैं। उन्होंने मुझसे उचित वर सुझाने के लिए कहा। मैंने दो-तीन लडकों के बारे में सुझाव दिए और फिर आपके लड़के की बात छेड़ दी। यदि आपके परिवार में सबंध हो जाए तो वे अपने आपको अत्यंत भाग्यशाली समझेंगे। उन्हें लगता है कि आप लोग बड़े आदमी हैं, शायद उनसे रिश्ता न जोड़ना चाहें।"

"बड़े आदमी!" चंद्रन की माँ बोल उठीं, "हमने अपनी इन्हीं आँखों से अमीरों को कंगाल होते देखा है। ये तो सब भाग्य के खेल हैं। धन-संपत्ति से आदमी की पहचान करने से बड़ी मूर्खता दूसरी नहीं हो सकती। संपत्ति तो आज है, कल नहीं। मैं तो किसी भी रिश्ते के लिए चरित्र और सच्चाई को जयादा महत्त्व देती हूँ।"

"उसकी मैं गारंटी देता हूँ," शास्त्रीजी ने कहा, "जब मैंने आपके परिवार का जिक्र किया तो लड़की की माँ प्रसन्न हो उठीं। लगता है वे आप लोगों को बहुत अच्छी तरह जानती हैं। उन्होंने बताया कि आप और वे संबंधी हैं। आपके नानाजी की पहली पत्नी और उनके दादाजी आपस में भाई-बहन थे—सगे भाई-बहन।"

"ओह, मुझे तो यह पता ही नहीं था। यह तो बड़ी खुशी की बात है।" फिर वे पूछ बैठीं: "आपको कुछ अनुमान है वे लोग शादी में कितना खर्च करने के लिए तैयार हैं?"

"हाँ। मैंने यह भी जानने की कोशिश की थी। मेरा अनुमान है कि वे लगभग दो हजार रुपये नकद, एक हजार रुपये के मूल्य के चाँदी के बर्तन व अन्य उपहार देगे और लगभग एक हजार रुपये शादी पर खर्च करेंगे। इसके अतिरिक्त लगभग एक हजार रुपये के आभूषण अपनी लड़की को देंगे।"

चंद्रन की माँ को यह सब सुन कर कुछ निराशा हुई। वे बोलीं : "खैर, यह सब तो बाद में तय किया जा सकता है।"

"बिल्कुल ठीक है," वृद्ध ने कहा, "यदि सब कुछ शुभ रहा तो कल वे लड़की की जन्म कुंडली भेजेंगे। जन्म कुंडलियाँ मिला कर देखने के बाद ही दूसरी बातें तय की जायेंगी। मुझे विश्वास है कि यह शादी शीघ्र ही संपन्न होगी। जब मैं

उनके घर के लिए चला था तो रास्ते मे एक आदमी ताड़ी से भरे मटके लिए आ रहा था। यह बहुत ही शुभ शकुन है। यह शादी अवश्य होगी।''

''जन्म कुंडलियाँ मिलाने की क्या जरूरत है?'' चंद्रन के पिता ने कहा, ''मुझे तो इन चीजों में विश्वास नहीं है।''

''आपको ऐसा नहीं कहना चाहिए,'' शास्त्रीजी बोले, ''यदि हम कुंडलियों का अलग-अलग और मिलाकर, दोनों प्रकार से अध्ययन नहीं करें तो हमें कैसे मालूम होगा कि इन दोनों व्यक्तियों के संयुक्त जीवन में स्वास्थ्य, सुख, दीर्घायु व सामंजस्य रहेगा या नहीं?''

चंद्रन यह जान कर बहुत प्रसन्न था कि लड़की की जन्मकुंडली आने वाली है। वह सोच रहा था कि इससे अगला कदम शादी का ही होगा। यदि वे लोग उससे अपनी बेटी की शादी नहीं करना चाहते तो जन्म पत्री क्यों भेजते। शायद लड़की ने ही इसके लिए जिद की हो। जरूर उसी ने कहा होगा कि मैं चंद्रन के सिवा और किसी से शादी नहीं करूँगी। पर उसे चंद्रन का पता कैसे चला होगा। कहते हैं लड़कियों में एक प्रकार की छठी इंद्रिय होती है जिससे उन्हें इन बातों का पता चल जाता है। लड़की अवश्य ही साहसी है, वरना अपने मन की बात इस तरह कैसे व्यक्त कर सकती थी! यदि उसकी बुद्धि भी उसके शरीर के गठन के ही अनुरूप है तो कितनी अच्छी बात है!....

उस लड़की की कल्पना से ही चंद्रन का हृदय द्रवित हो उठा। उसने अँधेरे में अपने तकिए को कस कर पकड़ लिया और उसके अंतर से पुकार उठी : ''ओह प्रिय! क्या कर रही हो तुम? क्या तुम मेरी पुकार सुन पाती हो?''

इन दिनों वह नदी-तट पर कम दिखाई देती थी किंतु चंद्रन इस कमी को मिल स्ट्रीट जाकर पूरी कर लेता था। जब तक उसे हॉल की रोशनी में वह इधर-उधर आती-जाती नहीं दिख जाती, वह उसके घर के सामने चक्कर लगाता रहता था। उसके पहले की तरह नदी-तट पर नहीं जाने का कारण चंद्रन यही समझता था कि वह लोगों की टीका-टिप्पणी से चंद्रन को बचाने के लिए ऐसा करती है। कितनी निस्स्वार्थ है वह! शाम को बाहर जाना उसने केवल इसलिए छोड़ दिया कि चंद्रन की बदनामी न हो! चंद्रन को इसमें कोई संदेह नहीं रहा कि वह सर्वश्रेष्ठ पत्नी सिद्ध होगी। उससे उत्तम पत्नी पाने की कोई पुरुष आशा ही नहीं कर सकता।...

उसके घर के सामने चक्कर काटते समय चंद्रन प्राय: ईश्वर से प्रश्न करता कि उसकी कृपा दृष्टि कब होगी। ऐसा कब होगा कि वह सड़क के चक्कर लगाना छोड कर एक दामाद की भाँति शान से उस घर में प्रवेश करेगा। शादी के बाद वह ये

सारी बाते उसे बतायेगा वे केवल वे दोनो पहाडी के ढलान पर लता निकुज में बैठकर सूर्यास्त का दृश्य देखा करेंगे। अरुणाभ साँझ के झुटपुटे मे वह अपनी इन दिनों की सारी मनोव्यथा उसे बतायेगा और वे दोनों हँस पड़ेंगे।--

अगले दिन शास्त्रीजी नहीं आये और चंद्रन के मन में तरह-तरह की आशंकाएँ उठने लगीं। आखिर क्या कारण हो सकता है? कहीं वे लोग अचानक अपनी बात से मुकर तो नहीं गये?

उसके अगले दिन भी जन्म कुंडली नहीं आई। चंद्रन हर आधे घंटे बाद अपनी माँ से पूछता रहा कि जन्म कुंडली आई या नहीं। अंत में उसने सुझाव दिया कि किसी को वहाँ भेज कर जन्मपत्री मँगवा लेनी चाहिए। जब उसकी बात पिता के कानों तक पहुँची तो वे बोले : "तुम खुद ही जाकर उनसे जन्म पत्रिका क्यों नहीं माँग लाते?"

चंद्रन की मनोदशा तो इस समय सामान्य थी नहीं। उसने उत्सुकता से पूछा : "सच! मैं जाकर ले आऊँ? मैं तो समझता था कि शायद मुझे ऐसा नहीं करना चाहिए।"

उसके पिता हँसने लगे और उन्होंने यह बात उसकी माँ को बताई तो वे घबरा कर बोलीं : "चंदर, दया करके ऐसा कुछ न कर बैठना। भला ऐसा भी कहीं होता है! जन्म कुंडली वे लोग खुद ही भेज देंगे।"

चंद्रन के पिता ने उससे कहा : "देखो, जब तक तुम सब्र करना नहीं सीख जाते, शादी के योग्य नहीं माने जा सकते। शादी हो जाने के बाद तो तुम्हें इसी की जरूरत पड़ेगी।

माँ ने संदेह से उनकी ओर देख कर कहा : "क्या आप अपनी बात का अर्थ स्पष्ट करने की कृपा करेंगे?"

चंद्रन बेचैनी की स्थिति में अपने कमरे में चला गया। उसने एक उपन्यास में मन लगाने की कोशिश की किंतु असफल रहा। उसका छोटा भाई सीनू अंदर आया और उसकी हालत देख कर पूछने लगा : "भैया, क्या आपकी तबियत ठीक नहीं है?" उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि चंद्रन को हो क्या गया है। आजकल चंद्रन न रात के भोजन के बाद गपशप करता था और न बड़े भाई के अधिकार का उपयोग करता हुआ उस पर रौब जमाता था। चंद्रन ने उसकी बात का कोई उत्तर नहीं दिया। वास्तव में सीनू पूछना चाहता था कि क्या चंद्रन की शादी होने वाली है किंतु शादी की बात करने में उसे शर्म महसूस हुई इसलिए तबियत के बारे में पूछ बैठा था। उसके प्रश्न को दुहराने पर चंद्रन ने उत्तर दिया : "मैं बिल्कुल ठीक हूँ। क्यों, क्या बात है?"

"आप ठीक नहीं लग रहे।"

"हो सकता है।"

"इसीलिए मैं पूछ रहा था। माँ कह रही थीं कि आपकी शादी होने वाली है।"

इन दोनों बातों में कोई संबंध नजर नहीं आ रहा था, किंतु सीनू समझ रहा था कि उसने बड़ी होशियारी से असली बात छेड़ दी है।

चंद्रन ने पूछा : "क्या तुम्हें एक भाभी चाहिए?"

यह सुन कर मारे शर्म के सीनू कुर्सी के पीछे जा छिपा। चंद्रन ने अगला प्रश्न पूछ कर उसे और भी बेहाल कर दिया :

"क्या तुम्हें अपनी भाभी के लिए 'मालती' नाम पसंद है?"

इस पर सीनू को इतनी शर्म आई कि वह चंद्रन को उसी तरह दुखी और चिंतामग्न छोड़ कर कमरे से बाहर भाग गया।

जब इससे अगले दिन भी जन्मपत्री नहीं आई तो चंद्रन ने मोहन के पास जाकर पूछा : "क्यों न मैं मिस्टर कृष्ण अय्यर के पास जाकर इस बारे में पूछूँ?"

"तुमने अब तक ऐसा क्यों नहीं किया?" मोहन ने कहा।

"मैंने सोचा शायद ऐसा करना ठीक नहीं माना जाये।"

"क्या अब स्थिति बदल गई है?"

चंद्रन चुप रहा। अब तक उसे इस बात पर विशेष गर्व रहा था कि प्रेम करते हुए भी उसने कोई नियम-विरुद्ध आचरण नहीं किया था। वह चाहता तो बड़ी आसानी से उससे नदी-तट पर अकेले में बात कर सकता था; वह उसे पत्र लिखने की कोशिश कर सकता था; वह मिस्टर कृष्ण अय्यर से मित्रता करके उनसे उनकी बेटी का हाथ माँग सकता था; और इसी प्रकार की कई बातें कर सकता था, किंतु उसने अपने माता-पिता की खातिर ऐसा नहीं किया; हर चीज उचित ढंग से और नियम तथा परंपरा के अनुसार ही करनी चाही।

मोहन ने कहा : "मैं खुद नियमों या परंपराओं की परवाह नहीं करता, किंतु यदि तुम परवाह करते हो तो फिर नियम के अनुसार ही चलो, जल्दबाजी मत करो।"

पर चंद्रन अपने मन को कैसे समझाता! वह इस बात को लेकर शोकसंतप्त रहा कि आखिर उन लोगों ने कुंडली भेजी क्यों नहीं। इसका अर्थ उनकी उदासीनता के सिवा और क्या हो सकता था।

मोहन बोला : "जब तक उनकी उदासीनता का कोई अधिक ठोस सबूत नहीं मिल जाता हमें प्रतीक्षा करनी चाहिए।"

चद्रन कुछ समय तक उदासी मे डूबा रहा, फिर उसे एक तरकीब सूझी उसने मोहन से कहा: "मुझे इस लड़की के पिता से परिचय करना है और तुम्हें इसमें मेरी मदद करनी है।"

"कैसे?"

"तुम एक अखबार के संवाददाता हो, इसलिए हर जगह जा सकते हो। तुम किसी काम से उनके घर क्यों नहीं जाते? कह देना कि तुम्हें इंजीनियरिंग विभाग के बारे में कुछ मालूम करना है। लोग अखबारों के संवाददाताओं के साथ बहुत अच्छी तरह पेश आते हैं।"

"हाँ, वह तो है। पर तुम्हारा इससे क्या सम्बन्ध?"

"तुम मुझे अपने साथ ले जाकर उनसे परिचय करवा सकते हो। बल्कि तुम यह भी कह सकते हो कि मैं तुम्हारा असिस्टेन्ट हूँ।"

"उससे तुम्हें क्या लाभ होगा?"

"वह तुम मुझ पर छोड़ दो।"

"मेरे पास उनसे मिलने जाने के लिए कोई बहाना नहीं है।"

"ऐसी अफ़वाह है कि नलप्पा वन-क्षेत्र के निकट सरयू नदी पर पुल बनने वाला है। तुम्हें इस अफवाह की सत्यता का पता चलाना है। कृष्ण अय्यर इंजीनियरिंग डिपार्टमेन्ट में काम करते हैं, यह तो तुम जानते ही हो।" मोहन को मानना पड़ा कि प्रेम करने वालों की बुद्धि भी तेज हो जाती है।

घर लौटते समय रास्ते में ही चंद्रन ने श्री डी. डब्लू. कृष्ण अय्यर से मुलाकात की पक्की योजना बना ली और निश्चय किया कि वह मोहन की सहायता के बिना ही अपना काम कर लेगा। उसने मोहन को जो तरकीब सुझाई थी उसने उसकी कल्पना-शक्ति को जाग्रत कर दिया था। अब उसने तय किया कि वह जाकर कृष्ण अय्यर के घर का दरवाजा खटखटायेगा। मालती दरवाजा खोलेगी। वह पूछेगा कि क्या अय्यर साहब घर पर हैं। वह उसे बतायेगा कि वह इस बात का पता लगाने आया है कि क्या सरयू के ऊपर पुल बन रहा है। फिर वह यह कह कर चला जायेगा कि वह दुबारा आयेगा। इससे यह लाभ होगा कि वह उसे पास से देख पायेगा। उसकी आँखें गोल हैं या बादाम के आकार की, उसका रंग गेहुँआ है या साँवला, सब देख लेगा। बल्कि वह अपने साथ एक छोटा कैमरा ले जाकर उसका फोटो भी ले सकता है। वह उन दिनों मालती की सूरत भी स्पष्ट रूप से याद नहीं कर पाता था और इससे उसे बड़ी यंत्रणा होती थी। कई बार वह सड़क पर जाती लड़कियों के चेहरे ध्यान से देखने लगता यह देखने के लिए कि क्य उनमें से किसी की सूरत मालती से

मिलती है लेकिन उस जेसी कोई दूसरी लडकी तो पूरे ससार मे ही नही थी रास्ते वाली एक दुकान में एक लड़का था जिसकी काली, धनुषाकार भौंहें चंद्रन को मालती की भौहों जैसी लगती थीं। चंद्रन थोड़ी सी पेपरमिंट खरीदने के बहाने अक्सर उस दुकान पर चला जाता और उस लड़के की भौंहें देखता रहता।

घर लौटते ही उसे शुभ समाचार मिला। शाम को गणपति शास्त्री लड़की की जन्म कुंडली लेकर आये। उन्होंने बताया कि पिछले दिनों मुहूर्त शुभ नहीं होने के कारण ही यह विलंब हुआ था। उन्होंने कन्यापक्ष को देने के लिए चंद्रन की जन्म पत्री भी ले ली।

इस प्रकार विवाह की बातचीत प्रारम्भ हुई। उस छोटे से कागज के टुकडे को, जिस पर कन्या की कुंडली बनी हुई थी, देख कर चंद्रन का हृदय आनंद से परिपूर्ण हो उठा। उसने गौर किया कि उस कागज के कोनों पर मंगल सूचक पीला रंग लगा हुआ था। यानी वे लोग भली-भाँति जानते हैं कि यह मंगल-कार्य के लिए भेजा जा रहा है। क्या इससे यह सूचित नहीं होता कि उन्हें यह वर पसंद है और वे इसे प्राप्त करने के इच्छुक हैं ? चंद्रन ने बार-बार उस कुंडली को पढ़ा यद्यपि वह विशेष कुछ समझ नहीं पाया। कुंडली को देख कर उसकी सारी उदासी क्षण भर में गायब हो गई।

अगले दिन चंद्रन बहुत प्रसन्न दिखाई दे रहा था। उसकी माँ ने उसे बार-बार टोका भी : "चंदर, यह मत सोचना कि अब केवल शादी का दिन तय करना ही बाकी है। ईश्वर ने चाहा तो सब बाधाएँ दूर हो जायेंगी, लेकिन अब भी कई प्रारम्भिक रस्में बाकी हैं। पहली तो यह कि हमारा ज्योतिषी अध्ययन करके बतायेगा कि तुम्हारी कुंडली उस लड़की की कुंडली से मेल खाती है या नहीं और फिर उनका ज्योतिषी न जाने क्या कहेगा। ईश्वर करे सब ठीक हो। उसके बाद वे लोग हमें लड़की देखने के लिए आमंत्रित करेंगे।"

"मैंने लड़की देख ली है माँ, और वह मुझे पसंद है।"

"फिर भी रिवाज के अनुसार वे हमें लड़की देखने के लिए बुलायेंगे और हम वहाँ जायेंगे। फिर वे हमारे घर आकर पूछेंगे कि तुम्हें लड़की पसंद है या नहीं। उसके बाद शादी की शर्तों पर विचार किया जायेगा और वे तय की जायेंगी।--मैं तुम्हारा दिल नहीं तोड़ना चाहती पर जब तक यह सब न हो जाये, तुम्हें धीरज रखना होगा।"

चंद्रन दाँतों से नाखून काटता हुआ बोला : "लेकिन माँ, तुम दहेज को लेकर कोई मुश्किल तो खड़ी नहीं कर दोगी ?"

"देखेंगे। हमें इस मामले में बहुत कठोर नहीं होना चाहिए, किंतु हम अपनी साख भी तो नहीं गिरा सकते।"

"पर माँ, अगर तुमने इस मामले को लेकर ज्यादा हुज्जत की तो?"

"तुम्हें किसी बात की चिंता करने की जरूरत नहीं है। अगर वे सही शर्तो पर तुम्हें लड़की नहीं देंगे तो तुम्हारे लिए इससे हजार गुनी अच्छी लड़कियाँ ले आऊँगी।"

"माँ, ऐसी बातें मत करो। अगर तुम्हारे दहेज और उपहारों के लिए झगड़ा करने के कारण यह शादी नहीं हुई तो मैं तुम्हें कभी क्षमा नहीं करूँगा।"

"आखिर हमारी भी कोई हैसियत है, प्रतिष्ठा है। हम अपने आप को बहुत अधिक नीचा तो नहीं गिरा सकते न?"

"तुम्हें अपने बेटे की खुशी से अपनी प्रतिष्ठा ज्यादा प्यारी है।"

"इस तरह की बातें करना तुम्हें शोभा नहीं देता, चंद्र।"

चंद्रन ने उनसे बहस करके यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया कि नकद दहेज मॉगना लूट-खसोट के समान है। कन्या के माता-पिता इस बात को लेकर चिंतित रहते हैं कि परंपरानुसार यौवनारंभ से पूर्व ही बेटी का विवाह हो जाना चाहिए और वर के माता-पिता उनकी इस चिंता का फायदा उठाते हैं। इस प्रकार की बातो से चद्रन की माँ हमेशा उत्तेजित हो उठती थीं। वे चिढ़ कर बोलीं : "मेरे अप्पा ने तुम्हारे अप्पा को सात हजार रुपये नकद व दो हजार रुपये से भी अधिक के चाँदी के बर्तन दिए थे लगभग पाँच हजार रुपये शादी पर खर्च किए थे। इसमें गलत क्या है? यह तो हर कन्या के पिता का कर्त्तव्य है कि वह अपनी बेटी के विवाह के निमित्त कुछ रुपया अलग रख छोड़े। हम परंपरा को नहीं तोड़ सकते।"

चंद्रन बोला : "इस तरह बदखर्ची करना नासमझी है। किसी भी शादी पर सौ रुपये से अधिक खर्च नहीं आना चाहिए।

"तुम अपनी उस लड़की के पिता से यही जाकर कह दो और शादी करके आ जाओ। मैं खुशी से तुम्हारा और तुम्हारी पत्नी का स्वागत करूँगी। पर हम लोगो से यह आशा मत करो कि हम तुम्हारी शादी में उपस्थित होंगे। अगर तुम वहॉ हमारी उपस्थिति चाहते हो तो हर चीज सही तरीके से होनी चाहिए।"

"लेकिन माँ," चंद्रन ने विनती की, "तुम अधिक तो नहीं माँगोगी? वे लोग अमीर नहीं है।"

"हम देख लेंगे, पर अभी से ही उनकी वकालत करना मत शुरू कर दो। उसके लिए काफी समय है।"

चद्रन के पिता कही बाहर जाने के लिए कपडे पहन रहे थे चद्रन ने उनके पास जाकर अपनी माँ के रवैये पर चिंता व्यक्त की। वे बोले : "डरो मत। वे तुम्हें नुकसान नहीं पहुँचाना चाहतीं।"

"अगर ये दहेज अधिक माँगें और वे दे न सकें तो क्या होगा?"

"यह सब सोचने के लिए अभी काफी समय है। वे तुम्हारी कुंडली ले गये हैं। उन्हें आकर यह तो बताने दो कि कुंडलियों के बारे में उनका क्या विचार है।"

उन्होंने अपनी छड़ी उठाई और बाहर निकल गये। चंद्रन अनुनय-विनय करता हुआ उनके पीछे-पीछे गेट तक गया। वह चाहता था कि वे माँ की ज्यादती का विरोध करके उसे सहारा व आश्वासन दें, पर उन्होंने केवल इतना कहा : "चिंता मत करो," और तेजी से चल दिए।

10

तीन दिन बाद इंजीनियरिंग डिपार्टमेंट का एक चपरासी चंद्रन के पिता के नाम एक पत्र लेकर आया। वे उस समय बरामदे में थे। उन्होंने उसे पढ़ कर चंद्रन को, जो वहीं एक कुर्सी पर बैठा पुस्तक पढ़ रहा था, थमा दिया। पत्र में लिखा था :

"आदरणीय श्रीमान—आपने कृपापूर्वक अपने पुत्र की जन्म कुंडली मेरी कन्या की कुंडली से मिलान हेतु भेजी थी जो मैं आपको वापस लौटा रहा हूँ। हमारा पारिवारिक ज्योतिषी दोनों कुंडलियों को भली भाँति मिला कर देखने के बाद इस नतीजे पर पहुँचा है कि ये परस्पर मेल नहीं खातीं। चूँकि मेरा ज्योतिष में पक्का विश्वास है और मैं अनुभव से यह जानता हूँ कि बेमेल जन्मपत्रियों के बावजूद शादी कर देने से दुर्भाग्य और महाविपत्ति का सामना करना पड़ता है, अत: मुझे अपनी बेटी के लिए कोई और लड़का देखना पड़ेगा। मैंने आप सब लोगों को जो अनावश्यक कष्ट दिया उसके लिए, आशा है, मुझे क्षमा करेंगे। आपके परिवार से संबंध न जुड सका, इसके लिए मुझसे बढ़ कर खेद और किसे हो सकता है? किंतु यह सब हमारे हाथ में है ही कहाँ! हम लोग तो केवल योजना बनाते हैं। केवल तिरुपतिनाथ ही जानते हैं हमारी भलाई किसमें है।

सादर,

डी. डब्लू कृष्णन।"

चंद्रन ने पत्र पढ़ कर वापस अपने पिता को दिया और बिना कुछ बोले अपने कमरे में चला गया। पिता कुछ देर लिफ़ाफ़े को लिए बैठे रहे, फिर अपनी पत्नी को बुला कर बोले :

उन लोगों ने लिख भेजा है कि जन्म पत्रियाँ नहीं मिलीं

प्रकार से उत्तम है असल मे उन्हे कोई सस्ता वर चाहिए जो सौ रुपये के दहेज और एक दिन की शादी से सतुष्ट हो जाये और वे जानते हैं कि चदर उन्हे इन शर्तों पर नहीं मिल सकता। अब पीछे हटने के लिए बहाना चाहिए।" फिर कुछ देर चुप रह कर उन्होंने कहा : "चलो, अच्छा ही हुआ। चंद्रन को उस बड़ी-भारी प्रौढ़ उम्र की लड़की के पल्ले बाँधना मुझे शुरू से ही अच्छा नहीं लग रहा था। उसके लिए पचासों लड़कियाँ मिल जायेंगी।"

चंद्रन के पिता कपड़े बदल कर बाहर जाने ही वाले थे कि उसने अपने कमरे से बाहर निकल कर भारी स्वर में कहा : "अप्पा, अगर अब भी कुछ हो सकता हो तो कोशिश करके देख लीजिए।"

पिता कहना चाहते थे : "इस लड़की की चिंता छोड़ो, मैं तुम्हारे लिए दूसरी लडकी देख लूँगा," किंतु उन्होंने देखा चंद्रन की आँखें लाल थीं, अतः वे बोले : "चिंता मत करो। मैं पता लगाऊँगा बाधा क्या है और उसे दूर करने की कोशिश करूँगा।" वे चले गए और चंद्रन ने अपने कमरे में जाकर दरवाजे की चटखनी लगा ली।

अगले दिन चंद्रन के पिता ने पत्र लिखा :

"प्रिय मिस्टर कृष्णन— यदि आज शाम को आप आकर मुझसे मिलें तो मुझे बडी प्रसन्नता होगी। मैं आपके पास आ जाता किंतु यह नहीं जानता कि आपको किस समय फुरसत होगी। मैं तो हर समय फुरसत में हूँ इसीलिए आपकी सेवा मे हाजिर हूँ। आपके आगमन की प्रतीक्षा करूँगा।"

शाम को मिस्टर कृष्ण अय्यर आये। कॉफी आदि के शिष्टाचार से निवृत्त होकर चंद्रन के पिता ने पूछा : "अब मुझे बताइए, कुंडलियाँ मिलने में क्या बाधा है।"

"मुझे कहना तो नहीं चाहिए, किंतु आपके बेटे की कुंडली में एक दोष है। हमारे ज्योतिषी का कहना है कि कुंडलियाँ नहीं मिल रहीं। यदि मेरी बेटी की कुंडली के सातवें घर में चंद्र या मंगल होता तो उसके लिए आपके बेटे से उत्तम वर कोई नहीं हो सकता था। किंतु अब तो जैसी स्थिति है----"

"आपको पूरा विश्वास है?"

"थोड़ा-बहुत ज्योतिष तो मैं खुद भी जानता हूँ। जन्मकुंडली में मैं कई चीजे नजर अंदाज कर सकता हूँ जैसे धन, संपन्नता, संतान आदि। किंतु आयु के मामले मे तो लापरवाही नहीं की जा सकती। मैं सैंकड़ों ऐसी घटनाएँ जानता हूँ जिनमें मंगल की इस घर में उपस्थिति से---अब मैं आपको क्या बताऊँ---इससे शादी के शीघ्र बाद ही पत्नी की मृत्यु हो गई," उन्होंने कहा। वे इस बात को कहने में हिचकिचा रहे थे किंतु चंद्रन के पिता के जोर देने पर उन्होंने आखिर बात कह ही दी।

चद्रन के पिता इसके बाद ही इस मामले का पटाक्षेप कर देना चाहते थे किंतु जब उन्हें चंद्रन का अपने कमरे में बंद हो जाना याद आया तो उन्होंने श्रोती जी को जो शहर के बहुत बड़े ज्योतिषी थे, बुला भेजा।

अगले दिन विभिन्न ग्रह–नक्षत्रों और उनके प्रभाव को लेकर वृहत विचार–विमर्श हुआ। चार घंटे तक अपनी जटिल व दुरूह गणनाओं से कई कागज भरने के बाद श्रोती जी इस नतीजे पर पहुँचे कि चंद्रन की कुंडली में कोई दोष नहीं है। डी.डब्लू कृष्ण अय्यर को बुलाया गया। श्रोती जी ने उन्हें बताया कि दोनों कुंडलियों के मिलने मे कोई बाधा नहीं है।

"क्या आपने मंगल पर गौर किया?"

"हाँ, पर यह तो शक्तिहीन हो गया है। यह तो अब सूर्य के प्रभाव में है जो इस पर पंचम घर से दृष्टि डाल रहा है।"

"मुझे इस पर संदेह है," कृष्ण अय्यर ने कहा।

श्रोती जी ने कागज कृष्ण अय्यर को थमा दिए और पूछा :

"लड़के की आयु क्या है?"

"लगभग तेईस वर्ष।"

"बारह और आठ कितना हुआ?"

"बीस।"

"तेईस वर्ष की आयु में इसका असर कैसे हो सकता है? यदि उसका विवाह बीस वर्ष की आयु में हो जाता तो उसे दुबारा विवाह करना पड़ सकता था। पर अब तो ऐसा कोई भय नहीं है। लड़के की आयु बीस वर्ष, तीन महीने और पाँच दिन की होते ही मंगल का प्रभाव जाता रहा।"

"किंतु मेरी गणना में ऐसा नहीं है," कृष्ण अय्यर ने कहा, "लड़के की आयु पच्चीस वर्ष और आठ महीने की होने तक मंगल का प्रभाव रहेगा।"

"आप कौनसे पंचांग को मानते हैं?" श्रोती जी ने उनकी ओर क्रुद्ध दृष्टि डाल कर पूछा।

"वाक्य को," कृष्ण अय्यर ने कहा।

"इसीलिए तो! आप 'दृग' के अनुसार गणना क्यों नहीं करते?"

"हम लोग हमेशा से अपनी गणनाएँ 'वाक्य' के अनुसार ही करते आए हैं और वे कभी गलत सिद्ध नहीं हुई। मेरे विचार से वही सच्चा पंचांग है।"

बड़ी विचित्र बात कह रहे हैं आप श्रोती जी ने व्यग्य से हँस कर कहा

घर लौटते समय कृष्ण अय्यर ने वे कागज साथ ले लिए और आश्वासन दिया कि वे दुबारा गणना और विचार करेंगे। अगले दिन उन्होंने चंद्रन के पिता को लिखा "मैं कल सारी रात, आज सुबह चार बजे तक, कुंडलियों को लेकर बार-बार गणना करता रहा। हमारा ज्योतिषी भी साथ था। किंतु परिणाम में कोई विशेष अंतर दिखाई नहीं दिया। जो सूक्ष्म-सा अंतर था वह केवल यही कि सूर्य का प्रभाव लड़के की पच्चीस वर्ष व आठ महीने की आयु के स्थान पर पच्चीस वर्ष व चार महीने की आयु पर दिखाई दिया।

"कोई भी व्यक्ति, जो 'दृग' पद्धति का अंधानुसरण नहीं करता, इस बात को अवश्य समझेगा कि मंगल का प्रभाव लड़के की लगभग पच्चीस वर्ष की आयु होने तक तो है ही। इन मामलों में कोई खतरा नहीं उठाया जा सकता। यह एक लड़की के जीवन और मृत्यु का प्रश्न है। मंगल से बचना तो संभव ही नहीं है। वह अवश्य मारता है।

"इस संबंध में मेरे कारण आपको जो भी कष्ट हुआ उसके लिए क्षमाप्रार्थी हूँ। आपके परिवार से रिश्ता न होने पर मैं कितना दुखी हूँ यह व्यक्त करने के लिए मेरे पास उपयुक्त शब्द नहीं हैं। आशा करता हूँ कि ईश्वर की कृपा से चंद्रन साहब को शीघ्र ही योग्य वधू प्राप्त होगी।---"

चंद्रन की माँ ने क्रुद्ध होकर कहा : "आप उन लोगों का पिण्ड क्यों नहीं छोड़ते? उनसे मिलने का यह नतीजा हुआ कि लड़के की जन्म पत्री पर दाग लगा दिया गया। अगर वे लोग यह कहते फिरे कि लड़के की कुंडली में मंगल है तो फिर हो चुकी इसकी शादी। गंदी नाली से कुछ उठाने की कोशिश करने पर यही होता है।"

माँ के वहाँ से चले जाने के बाद चंद्रन ने अपने पिता से कहा : "मान लें कि पच्चीस वर्ष का होने तक मेरी कुंडली में मंगल का दुष्प्रभाव है। मैं लगभग तेईस वर्ष का तो हो ही चुका हूँ। जल्दी ही पच्चीस का भी हो जाऊँगा। आप उनसे यह क्यों नहीं कह देते कि मैं पच्चीस वर्ष का होने तक इंतजार कर लूँगा। वे लोग भी दो साल तक इंतजार कर लें। आपस में इस बात का समझौता क्यों न कर लिया जाये?"

चंद्रन के पिता जानते थे कि वर्तमान मनःस्थिति में चंद्रन को कुछ भी समझाना व्यर्थ है, अतः उन्होंने सिर्फ इतना कहा कि वे कृष्ण अय्यर से मिलकर उनके सम्मुख यह सुझाव रखेंगे।

उसके बाद रोजाना चंद्रन अपने पिता से पूछता रहा कि वे कृष्ण अय्यर से मिले या नहीं, और पिता उसे बराबर यही जवाब देते रहे कि उनकी कृष्ण अय्यर से दफ्तर या घर कहीं भी मुलाकात न हो सकी।

कुछ दिन प्रतीक्षा करने के पश्चात् चद्रन ने मालती को एक पत्र लिखा उसने इस बात की पूरी सावधानी रखी कि कहीं वह प्रेम-पत्र न लगने लगे। उसके अपने विचार से वह केवल वस्तुस्थिति को स्पष्ट करने के उद्देश्य से लिखा हुआ एक सीधा-सादा पत्र था। इसमें उसने अपने प्रेम के बारे में और कुंडली में मंगल के दुष्प्रभाव के बारे में लिखते हुए पूछा था कि क्या वह उसके लिए दो साल प्रतीक्षा करने के लिए तैयार है। इसका उत्तर केवल एक शब्द 'हाँ' या 'नहीं' में लिखकर डाक में डाल दे। इसके साथ ही उसने एक टिकट लगा हुआ और अपना पता लिखा हुआ अतिरिक्त लिफाफा भी संलग्न कर दिया।

इस पत्र को लेकर वह मोहन के पास पहुँचा और बोला : "यह मेरे लिए अतिम अवसर है।"

"यह क्या है?"

"मैंने उसे पत्र लिखा है।"

"ऐसा कैसे कर सकते हो?"

"यह प्रेम-पत्र नहीं है। सीधी-सादी काम की बात लिखी है। अब यह तुम्हारा काम है कि इस पत्र को किसी प्रकार उसके पास पहुँचा दो।"

"क्या इसका जवाब भी लाना है?"

"नहीं। जवाब वह डाक से भेज देगी। मैंने इसका इंतजाम कर दिया है।"

"यदि मुझे लड़की को पत्र देते हुए किसी ने देख लिया तो?"

"तुम्हें मेरी खातिर कुछ तो तरकीब करनी ही होगी। यह मेरी आखिरी कोशिश है। जब तक उसका उत्तर नहीं मिल जाता, मुझे इंतजार रहेगा--" चंद्रन ने कहा ओर उसका अंतिम वाक्य सिसकियों में डूब गया।

अगले दिन चंद्रन डाकखाने गया और लॉली एक्स्टेन्शन वाले डाकिए से पूछा कि उसके लिए कोई पत्र तो नहीं है। यह उसका रोजाना का नियम हो गया। उसने नदी-तट पर जाना भी छोड़ दिया। अब वह मॉडर्न इंडियन लॉज भी नहीं जाता था क्योंकि वह मालती के घर के सामने था।

लगभग पंद्रह दिन बाद चंद्रन शाम के समय मॉडर्न इंडियन लॉज के लिए निकल पड़ा। "मुझे अपना दिल कड़ा करके, उसके घर के सामने होकर होटल जाना होगा और मोहन से पूछना होगा कि मेरे पत्र का उत्तर अब तक क्यों नही आया," उसने सोचा।

उसने ज्यों ही मिल स्ट्रीट में प्रवेश किया, वाद्यों की आवाज सुनाई दी। उसके दिल की धडकन तीव्र हो उठी मॉडर्न इंडियन लॉज पहुँचने पर उसने देखा कि

सामने वाले मकान का प्रवेश द्वार केले के तनो और आम के पत्तो की बदनवारो से सजा हुआ था। इससे प्रकट होता था कि वहाँ कोई मांगलिक उत्सव है। चंद्रन का संपूर्ण शरीर काँप उठा। घर के सामने की पोल में बैठा हुआ नगाड़े वाला जोर-जोर से नगाड़ा बजा रहा था और शहनाई वाले ने शहनाई पर कल्याणी राग छेड़ रखा था। यह संगीत स्वर चंद्रन के कानों में तप्त सीसे की भाँति पड़ा। वह दौड़ कर सीढ़ियाँ चढ़ता हुआ मोहन के कमरे में चला गया।

"यह सामने वाले मकान में क्या हो रहा है? चंद्रन ने पूछा।

सुनकर मोहन एकदम उछल पड़ा, फिर चंद्रन को बाँहों में लेकर सांत्वना देने का प्रयत्न करते हुए बोला : "अपने आप को शांत करो। ऐसे काम नहीं चलेगा।"

चंद्रन चीख कर बोला : "सामने वाले मकान में क्या हो रहा है? मुझे बताओ! यह शहनाई, ये आम के पत्ते! किसकी शादी हो रही है उस घर में?"

"अभी हो तो नहीं रही पर होने वाली है। यह तो विवाह के पूर्व का लग्न संस्कार है। अगले सप्ताह उसका अपने किसी मामा के लड़के से विवाह होने जा रहा है।"

"मेरे पत्र का क्या हुआ?"

"पता नहीं।"

"ओह! कोई उस शहनाई वाले का गला क्यों नहीं मरोड़ देता? राग की हत्या कर रहा है।"

"बैठ जाओ, चंद्रन।"

"क्या तुमने वह पत्र पहुँचा दिया था?"

"मुझे मौका ही नहीं मिला। और आज सुबह यह पता चलने पर कि उसकी शादी होने वाली है, मैंने उस पत्र को नष्ट कर दिया।"

चंद्रन ने क्रुद्ध दृष्टि से उसे देखा और 'अलविदा' कह कर दौड़ता हुआ सीढ़ियाँ उतर गया।

सामने वाला मकान हरी सी में रोशनी चमक रहा था। अतिथिगण आ रहे थे— महिलाएँ जरी-किनारी की साड़ियों और पुरुष बढ़िया इस्त्री किए हुए वस्त्रों में। चंद्रन भागता हुआ निकल गया। लगा जैसे नगाड़े की ढम-ढम और कल्याणी राग के स्वर दूर तक उसका पीछा कर रहे हैं।

उस रात चंद्रन को जोर का बुखार हो आया। वह बुखार में न जाने क्या-क्या रहा दस दिन बाद जब वह स्वस्थ हुआ तो परिवर्तन के लिए

मद्रास जाने की जिद करने लगा। उसके पिता ने मद्रास में अपने भाई को तार किया कि वह वहाँ एगमोर स्टेशन पर चंद्रन को लेने आ जाये और फिर चंद्रन को पचास रुपये देकर मद्रास जाने वाली रेलगाड़ी में बिठा दिया। माँ ने स्टेशन पर उसे विदा करते हुए कहा कि वह मद्रास से खूब मोटा-तगड़ा और स्वस्थ होकर लौटे और सब प्रकार की चिंताओं को मन से निकाल दे। पिता ने कहा कि आवश्यकता हो तो वह उन्हें और रुपया भेजने के लिए लिख दे। सीनू भी स्टेशन आया था। उसने पूछा : "भैया, क्या आप मद्रास में 'बिन्स' की दुकान से परिचित हैं?" चंद्रन ने इनकार किया। "वह माउन्ट रोड पर है और खेलों का सामान बेचने वाली देश की सबसे अच्छी फ़र्म है। कृपया वहाँ जाकर उनसे कहें कि मुझे अपने सामान का मोटा वाला सूचीपत्र, जिसमें क्रिकेट संबंधी ढेर से चित्र हैं, भेज दें। मेरे लिए एक 'जूनियर विलर्ड' बैट भी खरीद दें। आप नाम न भूल जाएँ, लिखकर रख लीजिए—'बिन्स, जूनियर विलर्ड।' उसने नाम को जोर से पुकारा क्योंकि ट्रेन का इंजन हरकत में आ गया था और गाड़ी जाने वाली थी। माँ ने अपने आँसू पोंछे और पिता एक टक जाती हुई ट्रेन को देखते रहे।

भाग तीन

11

अगली सुबह ट्रेन के मद्रास एगमोर स्टेशन पर पहुँचने पर चंद्रन ने अपने डिब्बे की खिड़की से प्लेटफार्म पर एकत्रित भीड़ में अपने चाचा के लड़के को देखा जो उसे लेने आया था। उसने जल्दी से अपना सिर अंदर कर लिया। ट्रेन के रुकते ही उसने अपना बैग और बिस्तर एक कुली को पकड़ाया और झट से प्लेटफार्म के बाहर चल दिया। बाहर एक ताँगे में अपना सामान रखकर उसने ताँगे वाले से कहा : "होटल चलो।"

"कौनसे होटल, भैयाजी?"

"जहाँ तुम्हारी मरजी हो।"

"जनता पार्क के सामने वाले में ले चलूँ?"

"हाँ, ठीक है," चंद्रन ने कहा।

ताँगे वाले ने अपने घोड़े को चाबुक मारा और राह चलने वालों को सावधान करता हुआ बढ़ चला। एक लाल रंग की मैली सी इमारत के सामने पहुँच कर ताँगा रुक गया। चंद्रन कूद कर ताँगे से उतरा और होटल में चला गया। ताँगेवाला भी उसके पीछे-पीछे उसका बैग और बिस्तर ले आया।

एक मेज के सामने एक आदमी बैठा रजिस्टर में नाम आदि लिख रहा था। चंद्रन ने उसके सम्मुख जाकर पूछा : "आपके यहाँ कमरा मिलेगा?"

"हाँ," उस आदमी ने बिना ऊपर देखे ही कहा।

"मेरा किराया, साहब", ताँगे वाले ने याद दिलाया।

"कितना हुआ?" चंद्रन ने पूछा।

"एक रुपया। मैं आपको स्टेशन से यहाँ तक लेकर आया हूँ।"

चंद्रन ने अपना पर्स निकाला और उसे पूरा एक रुपया दे दिया। ताँगे वाला आश्चर्य से मुँह बाये हुए रुपया लेकर चल दिया। हमेशा तो उसे एक रुपया माँगने

पर चवन्नी मिलती थी और वह भी काफी देर तक हुज्जत करने के बाद पर यहा तो माँगते ही पूरा एक रुपया हाजिर था। उसे लगा कि यह बरकत वाला दिन है। काश, एक की जगह दो रुपये माँग लिए होते!

मेज वाले आदमी ने घंटी बजाई और एक नौकर आ गया। उसने उस नौकर को चाबी देते हुए ऊपर कमरा नम्बर तीन में चंद्रन का सामान ले जाने के लिए कहा। नौकर उसका सामना लेकर चला गया। चंद्रन की समझ में नहीं आया कि अब उसे क्या करना है। वह झिझकता हुआ वहीं खड़ा रहा।

"एडवांस," मेज वाले आदमी ने कहा।

"कितना?" चंद्रन ने पूछा। इस व्यक्ति का यंत्रवत् और अमानवीय व्यवहार उसे बेहद अखर रहा था। उसने सोचा कि काश इन मद्रास के लोगों में थोड़ी सी इंसानियत होती। स्टेशन पर कुली ने ऐसा व्यवहार किया था मानो वह अंधा, बहरा और गूँगा हो और अब यह होटल वाला अपने मेहमान को नजर उठा कर देख तक नहीं रहा था। इन लोगों को केवल दूसरे के पैसे से मतलब था। ताँगेवाला भी रुपया मिलते ही बिना एक भी शब्द बोले तुरंत चल दिया था। ---चंद्रन बहुत उपेक्षित सा अनुभव करने लगा।

"कितने दिन ठहरना है?" उस आदमी ने पूछा। चंद्रन ने इस बारे में तो कुछ सोचा ही नहीं था। किंतु उसे भय हुआ कि कहीं यह बात कहने पर वह आदमी उसे गर्दन पकड़ कर बाहर न निकाल दे। ऐसे लोग कुछ भी कर सकते हैं। अत. वह बोला: "तीन दिन।"

"तो फिर एक दिन का किराया अभी एडवांस देना काफी है," उस आदमी ने पहली बार चंद्रन पर नजर डाल कर कहा।

"कितना?"

"चार रुपये। ऊपर वाले कमरों का किराया चार रुपये रोज है और नीचे वालों का ढाई रुपये रोज। मैंने आपका सामान ऊपर तीन नम्बर के कमरे में भेज दिया है।"

"बहुत-बहुत धन्यवाद," चंद्रन ने उसे एक दिन का अग्रिम किराया देते हुए कहा।

वह घुमावदार सीढ़ियों से अपने कमरे में पहुँचा। यह एक छोटा-सा कमरा था जिसमें एक कुर्सी, एक मेज और एक लोहे के फ्रेम वाली चारपाई थी। चंद्रन अपनी आँखें मलता हुआ चारपाई पर बैठ गया। उसे बड़ी थकान महसूस हो रही थी। उसने उठकर खिड़की से बाहर झाँक कर देखा। नीचे जनरल हॉस्पिटल रोड पर

ट्राम कारो, मोटर कारो, साइकिलो, रिक्शो, बसो, ताँगो और सब प्रकार की गाड़िय की, जो इधर-उधर आ-जा रही थीं, लाइन लगी हुई थी। होटल की इमारत के पीछे से बिजली से चलने वाली रेलगाड़ियों की जोरों की आवाज सुनाई दे रही थी चंद्रन को यह सारा शोर-गुल असह्य लग रहा था। वह वापस आकर दोनों हाथों मे सिर थामे चारपाई पर बैठ गया। पास वाले कमरे में कोई गुनगुना रहा था। लगा जैसे वह आवाज पास आती जा रही है। चंद्रन ने सिर उठा कर देखा कि एक अपरिचित व्यक्ति तौलिया व साबुनदानी लिए दरवाजे पर खड़ा हुआ है। वह एक साँवले रंग का मूँछों वाला आदमी था।

"नहाने नहीं चलना?" उसने पूछा।

"नहीं। मैं बाद में नहा लूँगा," चंद्रन ने उत्तर दिया।

"बाद में कब? नौ बजे बाद नल में पानी नहीं आयेगा। मेरे साथ आ जाओ। मैं तुम्हे स्नानघर दिखा दूँगा।"

उसी क्षण से उस मुच्छल आदमी ने, जिसका नाम कैलाश था, चंद्रन का चार्ज ले लिया। वह हर काम में चंद्रन का पथ-प्रदर्शक और सलाहकार बन गया।

वे नाश्ते के बाद साथ ही बाहर निकले। उसकी किसी भी बात का विरोध करने का चंद्रन को साहस ही नहीं हुआ। उसकी मेहमाननवाजी भी कम आक्रामक नहीं थी। चंद्रन का कोई भी सुझाव उसे मान्य नहीं हुआ। वह चंद्रन को साथ ले जाकर दिन भर तरह-तरह की ट्राम कारों व बसों में चक्कर लगवाता रहा। शाम होने तक वे लोग कम से कम चार होटलों में खाना खा चुके थे। कैलाश ने हर चीज का बिल चुकाया और लगातार बोलता ही रहा। चंद्रन को कैलाश से मालूम हुआ कि उसकी दो पत्नियाँ थीं और वह दोनों को प्यार करता था। उसने बरसों पहले मलाया जाकर काफी धन कमाया था और अब वह अपने पुराने गाँव में जा बसा था जो मद्रास से लगभग रात भर की यात्रा के बाद आता था। उसने यह भी बताया कि वह मद्रास बीच-बीच में मौज-मस्ती के लिए आता था। उसने कहा : "मैं अपने साथ दो सौ रुपये लाया हूँ। जब तक ये खर्च न हो जायें मैं यहाँ ठहरूँगा और फिर अपने गाँव लौट कर अगले तीन महीने तक अपनी दोनों पत्नियों के बीच शयन करूँगा। फिर दुबारा यहाँ आ जाऊँगा। मैं नहीं जानता ऐसा कब तक चलता रहेगा। तुम्हारे विचार से मेरी क्या उम्र होगी?"

"लगभग तीस वर्ष," चंद्रन ने बिना कुछ सोचे-विचारे कहा।

"आहा, क्या तुम सोचते हो कि मेरे बाल रँगे हुए हैं?"

"नहीं- नहीं" चंद्रन ने उसे आश्वस्त करते हुए कहा।

आजकल पच्चीस वष की उम्र से पहले ही लोगो के बाल सफेद होने लगते हैं। मैं इक्यावन वर्ष का हू। कम से कम अगले बीस वर्ष तक मैं इसी प्रकार की जिंदगी जीने योग्य बना रहूँगा। उसके बाद क्या होगा इससे कोई फर्क नहीं पडता। आदमी को चालीस साल रुपया कमाने में और बाकी चालीस साल उसे खर्च करने मे बिताने चाहिए।''

शाम तक चंद्रन उसकी बातों से बुरी तरह थक गया। कैलाश के पूछताछ करने पर चंद्रन ने उसे बताया कि वह तंजोर में पढ़ने वाला एक विद्यार्थी था और छुट्टियों में मद्रास घूमने आया था।

लगभग पाँच बजे कैलाश चंद्रन को एक भवन में ले गया जहाँ हॉल में गमलो में तरह-तरह के फर्न लगे हुए थे।

''यह कौनसी जगह है?'' चंद्रन ने पूछा।

''होटल मर्टन। अगर तुम्हें आपत्ति न हो तो मैं थोड़ी सी पियूँगा।''

कैलाश चंद्रन को साथ लिए सीढ़ियों से होता हुआ ऊपर बरामदे में गया और एक मेज छाँट कर उसके सामने बैठ गया। वेटर के आने पर कैलाश ने उससे बियर की बोतल और दो गिलास मँगवाये।

''मेरे साथ थोड़ी सी पियोगे?'' उसने चंद्रन से पूछा।

''बियर? नहीं। मैं शराब नहीं पीता।''

''बस जरा सी। मेरा साथ तो तुम्हें देना ही होगा।''

चंद्रन का दिल जोर से धड़कने लगा। वह बोला : ''मैं शराब कभी नहीं पीता।''

''यह तुम्हें किसने बताया कि बियर शराब होती है? पाँच प्रतिशत से भी कम अंश होता है इसमें मदिरा का। तुम्हारे डॉक्टर लोग जो टॉनिक लेने की सलाह देते है। उनमें से अधिकांश में इससे अधिक मदिरा होती है।''

कैलाश इसी प्रकार बहस करता रहा। यहाँ तक कि उसकी बहस ने दूसरी मेजों वाले लोगों का ध्यान भी आकर्षित किया। किंतु चंद्रन टस से मस न हुआ। उसे लग रहा था जैसे उससे कोई अत्यन्त गंभीर अपराध करने के लिए कहा जा रहा हो।

कैलाश ने वेटर से कहा : ''बियर वापस ले जाओ और मेरे लिए जिन व सोडा ले आओ।'' फिर चंद्रन से पूछा : ''नीबू पानी तो ले लोगे?''

''हाँ।''

''थोड़ी सी पोर्ट क्यों नहीं ले लेते?''

नहीं नही मै क्षमा चाहता हूँ, चद्रन ने कहा मैंने अपनी मा से वादा किया था कि जीवन में कभी मदिरा का स्पर्श तक नहीं करूँगा।"

चंद्रन की इस बात ने कैलाश के मन को छू लिया। वह एक क्षण के लिए गभीर हो गया और फिर बोला : "तब तो मत पियो। माँ बड़ी पवित्र चीज है, एक ऐसी चीज, जिसकी कीमत हम तब तक नहीं समझ पाते, जब तक वह हमारे पास होती है। जब हम उसे खो देते हैं तभी हमें पता चलता है कि वह कितनाी मूल्यवान संपत्ति है। अगर मेरे पास भी माँ होती तो मैं कॉलेज में पढ़ता और एक सम्मानित व्यक्ति होता। तब तुम मुझे यहाँ नहीं पाते। जानते हो मैं इसके बाद कहाँ जाऊँगा?"

"नहीं जानता।"

"एक वेश्या के घर।" वह एक मिनट के लिए विचारमग्न हो गया और फिर आह भर कर बोला : "जब तक मेरी माँ जीवित थीं, वे बराबर मुझे बताती रहती थीं—'यह करो। वह मत करो।' और मैं उनकी बात मान कर एक अच्छे बेटे की तरह रहता था। किंतु उनके मरते ही मुझमें भी बदलाव आ गया। माँ बड़ी दुर्लभ वस्तु है भाई, बहुत ही दुर्लभ।"

उसके पीने का दौर शाम को साढ़े आठ बजे तक चलता रहा— जिन के बाद ह्विस्की और ह्विस्की के बाद फिर से जिन। इसी प्रकार उसकी मेज और मद्यशाला के बीच बराबर मदिरा का आवागमन जारी रहा। साढ़े आठ बजे के लगभग उसने जोर की डकार व तीन बार हिचकियाँ लीं और लाल-लाल आँखों से चंद्रन की ओर देख कर पूछा : "क्या मैं तुम्हें नशे में मालूम होता हूँ? चंद्रन के इनकार करने पर वह अत्यंन्त संतुष्ट होकर मुस्कराने लगा।"

"जानते हो? ऐसे भी लोग हैं जो ब्रांडी के दो पेग पीते ही नशे में धुत हो जाते हैं," कैलाश बहुत भारी भर्राई सी आवाज में बोला, "लेकिन मैं किसी से भी शर्त बद सकता हूँ। नीट ह्विस्की के पंद्रह पेग—सुना तुमने? बिल्कुल 'नीट' (खालिस, बिना पानी या सोडा मिलाये) ह्विस्की के—इस पट्ठे के अंदर डाल दो," उसने अपनी छाती ठोकते हुए कहा, "और उसके बाद भी मैं तुम्हें अपना नाम बता सकता हूँ, जोड़-बाकी, गुणा-भाग सब कर सकता हूँ और सौ से लेकर एक तक उलटी गिनती बोल सकता हूँ।"

वे लोग होटल से बाहर आए। कैलाश ने चंद्रन के कंधे का सहारा ले रखा था। सड़क पर चलते हुए कैलाश बीच-बीच में रुक कर पागल की तरह अपनी आँखें गोल-गोल घुमाने या मूँछें खुजाने लगता था। वह इधर-उधर की असंबद्ध बातें बोलता जा रहा था। अचानक सड़क पर रुक कर उसने पूछा : "तुमने कुछ खाया?"

"धन्यवाद। ढेर सी केक।"

"कुछ पिया या नहीं?"

"कई गैलन नीबू का शर्बत।"

"थोड़ी सी बियर क्यों नहीं पी ली? ओह, मैं भी कैसा स्वार्थी हूँ!"

"नहीं, नहीं" चंद्रन ने चिंतित होकर कहा, "मैंने अपनी माँ से शराब न छूने की कसम खाई है।"

"आह," कैलाश ने रुमाल से आँखें पोंछ कर नाक सुड़कते हुए कहा, "माँ। माँ।" वह कुछ समय के लिए गंभीर हो गया, फिर संतुष्ट भाव से कहने लगा, "मुझे मालूम है, मेरी माँ मुझे सुखी देख कर खुद भी सुखी होगी।" और एक लंबी साँस लेकर वह दृढ़ता से आगे बढ़ने लगा मानो उसने यह निश्चय कर लिया हो कि अपनी भावनाओं को अपने ऊपर हावी नहीं होने देगा।

सड़क के अंत तक दोनों चुपचाप चलते रहे। फिर कैलाश ने कहा : "टैक्सी क्यों नहीं कर लेते?"

"टैक्सी कहाँ मिलेगी?"

कैलाश ने कड़वी हँसी हँस कर कहा, "मुझसे पूछते हो! इससे तो अच्छा है उस बिजली के खंभे से पूछो। क्या तुम्हें भगवान ने बिल्कुल ही अंधा बनाया है? तुम्हें यह भी दिखाई नहीं देता कि मेरे बायें पाँव में बड़ा कष्टदायक कॉर्न होने के कारण मैं चल नहीं पा रहा?"

चंद्रन परेशान सा खड़ा रहा। यद्यपि अब सड़क पर उतना ट्रैफिक नहीं रहा था, फिर भी उसे सड़क पार करने में भय महसूस हो रहा था। कैलाश फिर बोल उठा : "ऐसे मुँह बाये भकुए की तरह मत ताकते रहो। थोड़ी मदद करो। दोस्त की तरह बर्ताव करो। दोस्त वह जो मुसीबत में काम आये। क्या तुम्हें यह स्कूल में नहीं सिखाया गया? पता नहीं आजकल के इन स्कूलों में सिखाते क्या हैं!"

सड़क पर जाते हुए एक आदमी ने टैक्सी ढूँढ़ने में चंद्रन की सहायता की। टैक्सी में बैठ कर कैलाश ने ड्राइवर से पूछा : "कोकिलम का घर जानते हो?"

"नहीं।"

"यह टैक्सी करी है तुमने!" कैलाश ने अप्रसन्नता से चंद्रन की ओर देख कर कहा, "चलो, उतर जायें।"

"वह रहती कहाँ है?" ड्राइवर ने पूछा।

"मिन्ट स्टीट में।"

समझ गया कोकिलम का घर नहीं जानूगा भला? आधे घटे बाद एक भीड़-भाड़ वाली सकरी सी सड़क पर बने एक मकान के सामने ले जाकर उसने टैक्सी रोक दी। कैलाश ने चंद्रन से उतरने के लिए कहा और टैक्सी ड्राइवर के साढे पंद्रह रुपये माँगने पर साढ़े सत्रह रुपये किराए के दिए। टैक्सी चली गई। चंद्रन ने पूछा : "यह किसका घर है?"

"मेरी प्रेमिका का," कैलाश ने कहा। उसने ऊपर से नीचे तक मकान को ध्यान से देखा और संदेह प्रकट करते हुए कहा, "आज तो यह कुछ और तरह का लग रहा है। कोई बात नहीं," कहता हुआ वह सीढ़ियाँ चढ़ गया और दरवाजे पर किसी से पूछा : "क्या यह कोकिलम का घर है?"

"नाम से क्या फर्क पड़ता है? मेरे गरीबखाने में आपका स्वागत है, हुजूर," एक प्रौढ़ा स्त्री ने निकल कर कहा।

"बिल्कुल ठीक कहा" कैलाश प्रसन्न होकर बोला। फिर उसने अचानक चद्रन से पूछा : "तुमने टैक्सी का नम्बर नोट किया?"

"नहीं।"

"अजीब आदमी हो। क्या मैं तुम्हें पल-पल में यह बताता रहूँ कि तुम्हें क्या करना चाहिए? तुम्हारे अंदर जरा सी भी बुद्धि नहीं है?"

"मुझे खेद है", चंद्रन ने कहा, "टैक्सी वहाँ खड़ी है। मैं नम्बर देख कर आता हूँ।" वह मुड़ा और संयोगवश प्राप्त हुए वहाँ से भागने के इस अवसर के लिए प्रसन्न होता हुआ तेजी से घर की सीढ़ियाँ लाँघता हुआ दौड़ने लगा। कैलाश बुदबुदा रहा था : "शाबाश! दोस्त वह जो मुसीबत में का...म आ-आ-आये।"

चंद्रन मिन्ट स्ट्रीट से भाग निकला। वह कैलाश से दूर भाग जाना चाहता था। उसने पहली बार किसी शराबी को इतने पास से देखा था; वह पहली बार किसी वेश्या के दरवाजे पर जाकर खड़ा हुआ था। वह बुरी तरह डर गया था।

कैलाश से काफी दूर पहुँच जाने के बाद वह थक कर सड़क के किनारे फुटपाथ पर बैठ गया। उसे घर की याद सताने लगी। वह सोचने लगा कि क्या कोई ऐसी ट्रेन होगी जो उसी रात उसे वापस मालगुडी पहुँचा दे। मालगुडी का विचार ही बड़ा मधुर मालूम हुआ। वह चलता हुआ लॉली एक्सटेन्शन जायेगा, अपने घर और फिर अपने कमरे में जायेगा, अपने बिस्तर पर आराम से सोयेगा। कुछ समय तक वह इस सुखद कल्पना का आनन्द लेता रहा। किंतु शीघ्र ही मन में प्रश्न उठा कि वह अपने उस स्वर्ग को छोड़ कर इस अपरिचित शहर की सड़कों पर किसलिए भटक रहा है। इसका उत्तर अपने साथ ढेर सी मिली-जुली स्मृतियाँ ले आया—

शहनाई पर बजता हुआ कल्याणी राग, हरी सी रोशनी, ज्योतिषी, जन्म कुंडलियाँ, और माँ की बेरुखी। आह! शायद उस दूसरे लड़के से शादी होने के दुख से इस समय भी मालती अपने तकिए में मुँह छिपाकर रो रही होगी। कैसा होगा वह? क्या वह उसे अच्छी तरह रखेगा? उसके साथ अच्छा व्यवहार करेगा? वह खुद कई सप्ताह तक सरयू-तट की रेत पर घूमता हुआ उससे शादी करने का स्वप्न देखता रहा किंतु शादी के लिए चुना गया कोई और ही।

चंद्रन ने निश्चय किया कि वह मालगुडी कभी नहीं जायेगा। उसे मालगुडी से घृणा हो गई। वहाँ की हर चीज उसे मालती की याद दिलायेगी-- सरयू का रेतीला तट, मार्केट रोड, मिल स्ट्रीट, मालती जैसी भौहों वाला वह छोटा सा दुकानदार लडका--। उस नरक में दुबारा जाकर रहना उसके लिए असंभव है। जहाँ मालती की शादी की वे तैयारियाँ हो रही हों, उससे भयंकर शहर कोई दूसरा नहीं हो सकता।- मान लो कि अब भी उसका वह भावी पति किसी महामारी की चपेट में आ जाये? ऐसी घटनाएँ वास्तविक जीवन में कहाँ होती हैं।

चंद्रन ने सोचा कि जब उसने अपना घर ही छोड़ दिया तो वह कहीं भी रहे, क्या फर्क पड़ता है। वह तो एक संन्यासी की भाँति है। 'भाँति' क्या, संन्यासी ही तो है! सिर मुँडा लो, कपड़ों को गेरुआ रंग लो और बस, संसार के लिए तुम मृत समान हो। आत्महत्या करने के अतिरिक्त बस यही एक उपाय है। जीवन का जुआ तो खेल चुके और उसमें हार भी चुके।

वह उठा। कुछ देर अपने होटल की तलाश में भटकता रहा, किंतु फिर उसे लगा कि यह तलाश अनावश्यक है। होटल यदि मिल भी गया तो क्या होगा? वह होटल का बिल चुकायेगा और अपना बैग व बिस्तर लेकर कहीं चल देगा। संन्यासी के पास यह सब सामान होना ही क्यों चाहिए? यह सब छोड़ो। जहाँ तक बिल का सवाल है, होटल वाले को एडवांस तो दिया ही जा चुका है। वह चाहेगा तो बैग और बिस्तर भी ले लेगा।

रात को वह दीवार से लगकर फुटपाथ पर ही सो गया। दीवार पर एक बोर्ड लटका हुआ था। यह जानने के लिए कि वह कौनसी जगह है, उसने बोर्ड को ध्यान से देखा। उस पर ऊपर अंग्रेजी में और नीचे तमिल में केवल यह लिखा हुआ था कि वहाँ इश्तहार चिपकाने वाले पुलिस द्वारा पकड़ लिये जायेंगे। ''चिंता मत करो। मैं यहाँ कोई इश्तहार नहीं चिपकाऊँगा'', उसने दीवार से कहा और लेट गया। दिन भर की थकान के कारण उसे नींद आ गई और उसने बार-बार सपने में देखा कि दीवार से लग कर सोने के कारण पुलिसवालों ने उसे पोस्टर समझ लिया और दीवार से उखाड़ कर गिरफ्तार कर लिया।

अगली सुबह सड़क बुहारने वाले मेहतर ने उसे जगाया। चंद्रन आँखें मलता हुआ उठ बैठा। नींद का असर दूर होते ही उसने निश्चय किया कि उसे जल्दी से जल्दी मद्रास से निकल जाना चाहिए। एक तो उस बड़े भारी, भूलभुलैया जैसे शहर में रहने से कोई लाभ नहीं था, दूसरे कैलाश द्वारा पकड़े जाने का भी खतरा था।

वह पूछताछ करता हुआ सेन्ट्रल स्टेशन पहुँचा और उसने टिकट खिड़की पर जाकर पूछा : "अगली ट्रेन कब छूटेगी?"

"कहाँ के लिए?"

"एक मिनट," कह कर उसने दीवार पर लटके हुए बड़े से रेलवे मानचित्र पर नजर डाली और बोला : "बेजवाड़ा।"

"सात बज कर चालीस मिनट पर ग्रांड ट्रंक एक्सप्रेस जायेगी।"

"बेजवाड़ा के लिए एक तृतीय श्रेणी का टिकट दे दीजिए।"

वह ट्रेन में बैठ गया। डिब्बे में भीड़ नहीं थी। उसे बेजवाड़ा जाना पड़ रहा है, यह सोचकर अचानक उसका मन अत्यधिक खिन्न हो उठा। उसने अपने हाथ मे थामे हुए पीले रंग के टिकट को देखा। वह पीले रंग के गत्ते का टुकड़ा उसे बेजवाड़ा जाने के लिए विवश नहीं कर सकता। उसे वह जगह पसंद नहीं है। जिसका नाम ही ऐसा हो वह स्थान पसंद करने योग्य कैसे हो सकता है? वह किसी भी हालत में वहाँ नहीं जायेगा। पहली घंटी बजी। उसने टिकट को खिड़की से बाहर फेक दिया और ट्रेन से उतर पड़ा। वह शीघ्र ही स्टेशन से बाहर आ गया और सड़क पार करके एक ट्राम में बैठ गया। कंडक्टर से पूछने पर पता चला कि वह ट्राम मैलापुर जा रही थी। उसने मैलापुर का टिकट ले लिया। अंत में जब मैलापुर आ जाने पर ट्राम रुक गई तो वह उतर कर पैदल चल पड़ा। चलते-चलते उसने कपालीश्वर मंदिर का ऊँचा शानदार शिखर देखा जो आसमान से होड़ ले रहा था। उसने मंदिर में प्रवेश करके देवमूर्तियों के सम्मुख साष्टांग प्रणाम किया। मंदिर के तालाब की सीढ़ियों पर उसने एक नाई को ग्राहकों की प्रतीक्षा में बैठे देखा। चंद्रन ने उसके पास जाकर पूछा : "मेरी हजामत बना दोगे?"

सुन कर नाई को आश्चर्य हुआ। अच्छे-खासे बालों वाले छात्र लोग उससे हजामत बनवाना पसंद नहीं करते थे। उसके ग्राहकों में या तो विधवाएँ होती थीं जो पूरी तरह सिर मुँडवा लेती थीं, या फिर वे कट्टर ब्राह्मण जो सिर के थोड़े से बाल छोड़कर बाकी मुँडवा लेते थे। यहाँ तो एक युवा छात्र सा दिखने वाला व्यक्ति उससे बाल कटवाने के लिए तैयार था। चंद्रन ने कहा : "अगर तुम मेरा एक काम कर दो तो मैं तुम्हें काफी पैसा दूँगा।"

"मैं अच्छी हजामत भी बना सकता हूँ, भैयाजी।"

"केवल हजामत ही नहीं, तुम्हें एक और भी काम करना है। एक सस्ता सा कटि-वस्त्र और एक उपरना खरीद कर उन्हें गेरुए रंग में रँग कर लाना होगा। उसके बाद मेरे सिर का मुंडन करके मेरे ये कपड़े और जेब में रखा हुआ बटुआ, सभी कुछ तुम ले सकते हो।" उसने अपना पर्स खोल कर नाई को दिखाया। उसमें जो रुपये थे उतने इस सेफ्टी रेजर के युग में वह छः महीने में भी नहीं कमा सकता था।

"लेकिन याद रखो इस बारे में किसी से एक शब्द भी मत कहना," चंद्रन ने कहा।

"क्या आप सन्यासी हो रहे हैं?"

"प्रश्न मत पूछो", चंद्रन ने आदेश दिया।

"भैया जी, इस उम्र में!"

"तुम प्रश्न पूछना बंद करते हो या मैं बस में बैठ कर यहाँ से चला जाऊँ? तुमसे मदद इसलिए माँग रहा हूँ कि मैं नहीं जानता ये चीजें यहाँ कहाँ मिलेंगी। तुम्हारा नाम क्या है?"

"राघवन।"

"राघवन, मेरी मदद करो। मैं हमेशा तुम्हारा एहसानमंद रहूँगा। तुम्हें भी फायदा होगा। मेरा दिल टूट चुका है, राघवन। मुझे इस दुनिया में जो भी प्यारे थे, उन सबको खो चुका हूँ। मैं यहीं पर तुम्हारा इंतजार करूँगा। जल्दी लौटना।"

"भैयाजी, अगर आपको आपत्ति न हो तो मुझ गरीब की झोंपड़ी में ही चल कर इन्तजार क्यों नहीं करते?"

चंद्रन उसके साथ उसके घर चला गया जो कई गलियों के अंदर घुसने के बाद आता था। घर में केवल एक कमरा था और उससे लगी हुई एक छोटी सी कोठरी थी जो रसोईघर के काम में आती थी और गर्मी व धुएँ से भरी हुई थी। उसमें से एक खूब लंबी और मोटी सी औरत ने बाहर निकल कर नाई से पूछा : "इतनी जल्दी कैसे आ गये?" नाई ने उसके पास जाकर फुसफुसा कर कुछ कहा। फिर उसने चंद्रन के लिए एक चटाई बिछा कर उससे आराम करने के लिए कहा और बाहर चला गया।

चंद्रन का मन-मस्तिष्क ऐसा जड़ हो गया था कि उसने कहाँ और कितनी देर प्रतीक्षा की इसका उसे जरा भी ध्यान नहीं था। वहाँ उसे लगभग आधा दिन अकेले बैठे बिताना पड़ा। देखने के लिए था बस नाई का तेल से चीकट मैला तकिया व

लाल कंबल; दीवार पर लटका हुआ कैलेन्डर का एक चित्र (बिना तारीख व महीनों वाले कागजों के), जिसमें सृष्टि के रचयिता ब्रह्मा बने हुए थे, और एक लोहे की पत्तियों वाला सागौन का बक्सा। किंतु चंद्रन की मन:स्थिति ऐसी थी कि उसे समय का भी पता नहीं चला।

अपराह्न में तीन बजे के लगभग नाई लौटा। वह गेरुए रंग में रँगे हुए कपड़े के दो टुकड़े लाया था और साथ ही कुछ केले और एक हरा नारियल (डाभ) भी। चंद्रन भूखा था, अत: उसने फल लेने से इनकार नहीं किया। फिर उसने नाई से एक पोस्टकार्ड मँगवाया। नाई से पैंसिल माँग कर उसने अपने पिता को पत्र लिखा: ''मैं यहाँ सकुशल पहुँच गया हूँ। मैं चाचा के घर न जाकर अपने एक मित्र के साथ ठहरा हूँ जो मुझे स्टेशन पर मिल गया था। यहाँ से मैं—जा रहा हूँ। स्थान का नाम आपको नहीं बताऊँगा। काफी घूमने-फिरने का इरादा है। मैं बिल्कुल खुश हूँ। यह न सोचें कि मैं अब भी उस शादी को लेकर चिंतित हूँ। जरा भी नहीं। मेरा लंबे समय तक भ्रमण का कार्यक्रम है, इसलिए यदि इन दिनों मेरा कोई पत्र न मिले तो घबरा कर पुलिस स्टेशन जाने की जरूरत नहीं है। वादा कीजिए कि ऐसा कुछ नहीं करेंगे। माँ को प्रणाम। मैं सकुशल रहूँगा। चिंता न करें।'' फिर उसने 'पुनश्च' करके जोड़ा : ''कुछ मित्रों के साथ जा रहा हूँ जो मेरे पुराने सहपाठी हैं। इनसे यहीं पर मुलाकात हो गई थी।''

❑❑❑

12

चंद्रन की वेशभूषा और शक्ल-सूरत—मुँडा हुआ सिर और गेरुए वस्त्र—से अब वह एक संन्यासी नजर आता था, एक संन्यासी, जिसने संसार का परित्याग कर दिया हो और जो संसार के दुख और सुख दोनों से निर्लिप्त हो।

उसने पैदल ही कई जिलों की यात्रा की। जब वह थक जाता तो उधर से निकलती हुई ग्रामीण लोगों की गाड़ियों को रुकवा कर बैठा लेने का अनुरोध करता था। वे लोग एक संन्यासी को इसके लिए कभी इन्कार नहीं करते थे। कभी-कभी तो वह बड़ी सड़कों पर जाने वाली बसों को भी रुकवा लेता था। वह इस बात की कभी चिंता नहीं करता था कि उसे कहाँ जाना है या कहाँ ठहरना है (जब तक कि वह मालगुडी की दिशा न हो)। एक संन्यासी को इस बात से क्या फर्क पड़ता था कि वह कहाँ जा रहा है? उसके लिए तो सभी शहर या कस्बे समान थे—वे ही बाजार, बाल काटने वाले सेलून, कॉफी होटल, दर्जी की दुकानें, व्यापारी, सरकारी अफसर, साइकिलें, कारें और मवेशी। अंतर था तो केवल नामों का, और संन्यासी को नाम से क्या काम?

जब उसे भूख लगती तो वह सबसे निकट वाले घर का द्वारा खटखटा देता और भोजन माँग लेता, या फिर बाजार में नारियल या केला माँग लेता। शुरू के कुछ दिन उसे कॉफी पीने की बेहद तलब होती क्योंकि कॉफ़ी पीने की आदत बचपन से ही थी। जबकि मन का एक भाग कॉफी के लिए बेचैन होता, दूसरा उसे कष्ट पाते देख संतुष्ट होता और कहता : "और कष्ट पाओ। तुम इस संसार में सुख भोगने के लिए नहीं भेजे गए हो। इसी प्रकार कष्ट भोगते हुए नष्ट हो जाओ। तुम्हें कॉफी नही मिलेगी।" धीरे-धीरे कॉफी की यह तलब अपने आप समाप्त हो गई।

यदि कोई उसे अपने घर में सोने के लिए कह देता तो वह वहाँ सो जाता, वरना खुले में ही सो रहता या फिर किसी सराय में सो जाता जहाँ उस जैसे बीसियो

लोग एकत्र हो जाते थे. यदि वह भूखा होता और उसे कोई भी खिलाने वाला नहीं मिलता तो वह भूख की कमजोरी में ही अपने आपको घसीटता हुआ आगे चलता रहता और भूख की पीड़ा का स्वाद लेता। वह अपने पेट से कहता : ''तू जितना चाहे, मुझे कष्ट दे। मुझे मार क्यों नहीं डालता?''

उसके गालों की हड्डियाँ दिखने लगी थी; बदन पर सड़क की धूल लगी रहती थी, हाथ-पाँव कठोर हो गए थे और रंग काला पड़ गया था। उसका चेहरा और आँखें एकदम भावहीन दिखाई देते थे। मुख पर मुस्कराहट भी मुश्किल से ही कभी आती थी।

उसने एक-दो बार दाढ़ी बनाई, किंतु फिर ऐसा करना अनावश्यक लगने लगा और उसने बालों को जैसे चाहें बढ़ने के लिए छोड़ दिया। समय के साथ-साथ उसके चेहरे पर छोटी सी दाढ़ी और मूँछें उग आईं।

वह दूसरे संन्यासियों से भिन्न था। सामान्यत: लोग किसी आध्यात्मिक लक्ष्य की प्राप्ति के लिए संन्यास लेते हैं। त्याग या तो उनके लिए शांति की प्राप्ति का साधन बनता है या फिर उन्हें त्याग में ही शांति मिलती है। किंतु चंद्रन का त्याग इस प्रकार का नहीं था। वह आत्महत्या का ही दूसरा रूप था। आत्महत्या करने पर सामाजिक बदनामी का डर था और उसके लिए जिस साहस की आवश्यकता होती है वह भी शायद उसमें नहीं था। संन्यासी बन कर अपने शरीर को कष्ट देने पर उसे संतोष होता था, मानो ऐसा करके वह समाज से, परिस्थितियों से, और शायद भाग्य से भी, प्रतिशोध ले रहा हो।

लगभग आठ महीने तक भटकते रहने के बाद वह सैनाड जिले के कूपल गाँव में पहुँचा। वह पूर्वी घाट और पश्चिमी घाट को संबद्ध करने वाली पर्वत-श्रेणी की तलहटी में बसा हुआ एक छोटा सा गाँव था।

गर्मी के मौसम में अपराह्न के समय चंद्रन इस गाँव में पहुँचा। धान के खेतों की सिंचाई के लिए निकाली गई नहर से उसने पानी पिया और एक वटवृक्ष के नीचे जाकर बैठ गया। वह प्रात:काल से निरन्तर चलता हुआ आया था और बहुत थक गया था। पेड़ के तने से सिर टिका कर उसने आँखें मूँद लीं। जब उसने आँखे खोलीं तो देखा कि कुछ ग्रामीण उसे घेरे हुए खड़े हैं।

''क्या हम जान सकते हैं कि आप कहाँ से पधारे हैं ?'' किसी ने पूछा। चद्रन इस प्रश्न का झूठा उत्तर देते-देते अब तक काफी थक चुका था। उसे एक तरकीब सूझी। उसने अपने मुँह को छूकर सिर हिलाया।

''ये गूँगे मालूम होते हैं '' किसी ने कहा।

नही, ये हमारी बात सुन सकते हैं क्या आप हमारी बात सुन रहे हैं? चंद्रन ने स्वीकृति में सिर हिलाया।

"क्या आप बोल सकते हैं?"

चंद्रन ने फिर स्वीकृति सूचक सिर हिलाया, दस ऊँगलियाँ दिखाईं, होठों को छुआ, आकाश की ओर देखा और सिर हिलाया। वे समझ गये। "इन्होंने दस साल, दस महीने या दस दिन के लिए मौन व्रत ले रखा है," वे बोले।

वे लोग चकित होकर उसे देखने लगे। इतने सारे लोगों की नजरों का एकमात्र लक्ष्य बनकर चंद्रन को घबराहट सी हो रही थी। उसने अपनी आँखें मूँद लीं। लोगो ने समझा वह ध्यानमग्न हो गया है।

गाँव के एक महत्त्वपूर्ण व्यक्ति ने आगे आकर पूछा : "क्या आप मेरे गरीबखाने में चल कर नहीं रहेंगे?" चंद्रन ने संकेत से मना कर दिया और पेड़ के नीचे ही रात काटी।

अगले दिन अपने खेतों की ओर जाते हुए ग्रामीणों ने रास्ते में उसे हाथ जोड़ कर प्रणाम किया। कोई कुछ केले लाकर उसके सामने रख गया। कोई और आकर दूध दे गया। चंद्रन ने उनकी यह भेंट स्वीकार की और खा-पीकर जाने के लिए उठ खड़ा हुआ।

किसी ने उससे पूछा : "आप कहाँ जा रहे हैं?" चंद्रन ने हाथ के संकेत से कहीं दूर की ओर इशारा किया। उन्होंने उससे ठहरने का अनुरोध किया, किंतु चंद्रन ने सिर हिला कर मना कर दिया। वे उसे जाने नहीं देना चाहते थे, बोले : "महाराज, आपके यहाँ रहने से हमारा गाँव धन्य हो जायेगा। यहाँ तो साधु-महात्माओं के दर्शन ही दुर्लभ हैं। कृपा करके कुछ और दिन यहाँ रहें।" उनकी इस विनय ने चंद्रन के मन को छू लिया। आज तक किसी ने भी उसकी उपस्थिति को इतना महत्व नहीं दिया था। वैसे हर जगह लोग उसका ध्यान रखते थे, किंतु इतना अधिक नहीं। उसने सोचा : "बेचारे! शायद यह गाँव अलग-थलग सा है और यहाँ कोई इस तरह का व्यक्ति आता-जाता नहीं है। यदि मेरे यहाँ रहने से इन्हें खुशी होती है तो क्यों न ठहर जाऊँ। मेरे लिए तो सभी स्थान एक से हैं।"

वह फिर से पेड़ के नीचे वाले स्थान पर लौट गया। उसके वहाँ ठहर जाने पर उन लोगों में प्रसन्नता की लहर दौड़ गई। स्त्री, पुरुष व बच्चे सब उसके पास चले आये। शीघ्र ही बस्ती से बस्ती और गाँव से गाँव में समाचार फैल गया कि दस वर्ष के लिए मौन व्रत धारण किए हुए एक महात्मा पधारे हैं जो एक वटवृक्ष के नीचे दुष्कर चिंतन, मनन व समाधि में अपना समय व्यतीत करते हैं।

अगले दिन आसपास के गाँवों से बीसियों व्यक्ति आकर उस वटवृक्ष के नीचे एकत्र हो गये। चंद्रन पालथी लगाये व आँखें मूँदे समाधि की मुद्रा में बैठा था। वे लोग शंकालु प्रकृति के तो थे नहीं, भोले-भाले और सरल थे (आपसी झगड़ों व मतभेद को छोड़ कर), अतः चंद्रन की वेशभूषा व क्रियाकलाप से उन्होंने उसे वास्तविक साधु ही समझा।

संध्या के समय जब चंद्रन ने आँखें खोलीं तो कुछ ग्रामीण उसके आसपास खड़े हुए थे। उसने संकेत से उन्हें चले जाने के लिए कहा। उसके दुबारा इशारा करने पर वे लोग चले गये।

रात हो गई थी। कोई एक लालटेन जला कर उसके पास रख गया था। उसने देखा वे लोग उसके लिए दूध, फल तथा अन्य खाद्य पदार्थ लाकर रख गये थे। इन उपहारों को देख कर उसे मर्मान्तिक वेदना हुई। उसे लगा कि वह कपटी और पाखण्डी है, वह उनके साथ विश्वासघात कर रहा है। काश, वह उनके विश्वास के योग्य होता! वे भेंट की वस्तुएँ देख-देख कर वह दुखी होता रहा। अत्यन्त ग्लानि के साथ उसने क्षुधा-निवारण के लिए कुछ फल खाकर थोड़ा सा दूध पिया। लालटेन के प्रकाश में वे सारी वस्तुएँ दिखाई दे रही थीं। वह उनसे दूर हट गया। उसने लालटेन भी बुझा दिया—उसे लगा कि वह प्रकाश का भी अधिकारी नहीं है।

उस अँधेरे में बैठा हुआ ही वह अत्यंत निर्दयतापूर्वक आत्म-भर्त्सना करता रहा। जिस क्षण से उसने गेरुए वस्त्र धारण किए थे, वह दूसरों के दान पर जी रहा था, वह भी भ्रम के कारण दिया गया दान। वह एक झूठी, छल-कपट से पूर्ण जिंदगी जी रहा था। यदि वह सच्चा संन्यासी बनना चाहता था तो उसे भूख पर विजय प्राप्त करनी चाहिए थी, चाहे भूख से प्राण ही क्यों न त्यागने पड़ते। अपने इस अभागे पेट को भरने के लिए उसे ऐसा भोजन ग्रहण नहीं करना चाहिए था जो न तो उसका कमाया हुआ था और न उसमें उसे पाने की योग्यता (आध्यात्मिक) ही थी।

उसने स्वयं से प्रश्न किया कि आखिर उसका ऐसा अधोपतन कैसे हो गया। आत्म-प्रवंचना की मनःस्थिति में वह नहीं था। इसके उत्तर के रूप में उसके मन में दो शब्द उभर कर आये—'मालती' और 'प्रेम'। इन्होंने ही मेरी यह दुर्गति की है। उसने सोचा मैंने अपने माता-पिता का, जिन्होंने मेरे ऊपर अपना सारा स्नेह, यत्न तथा पैसा न्यौछावर किया था, परित्याग कर दिया। मैंने वास्तव में यह सब उनके प्रति वैर भाव से ही किया है। संभव है वे अब तक मेरी चिंता में घुल-घुल कर मर गए हों। मैंने उनके प्रेम का और उन्होंने मेरे लिए जो कुछ किया उसका यह बदला दिया है। उसने जितना इस पर विचार किया उतना ही उसका मालती पर क्रोध बढ़ता गया। उसे लगा यह एक मूर्खतापूर्ण आसक्ति थी झूठा प्रेमोन्माद था।

उसे भी मुझसे कोई लगाव नहीं था। जहा चाह हो वहाँ राह निकल आती है। उसे इतने सारे अवसर मिले थे, क्या वह अपनी भावनाएँ व्यक्त नहीं कर सकती थी? वह केवल उसकी भावनाओं से खिलवाड़ कर रही थी। स्त्रियाँ ऐसी ही होती हैं। उन्हें लोगों को यंत्रणा देने में आनन्द आता है। और उसकी याद में मेरा यह हाल हो गया। वास्तव में दुनिया में प्रेम नाम की कोई चीज है ही नहीं। यह केवल साहित्यिक कल्पना है। यदि लोग कहानियाँ न पढ़ें तो वे प्रेम के अस्तित्व से अनभिज्ञ रहेंगे, क्योंकि यह कोई वास्तविक अनुभूति तो है नहीं। और इस काल्पनिक भावना के फेर में मैं अपना सब कुछ खोकर यह छद्मवेशी, नकली साधु बन बैठा। उफ, पागलपन की हद हो गई!

उसके मन में विचार उठा कि क्यों न मैं गाँव वालों को बुला कर उन्हें अपने बारे में सब कुछ बता दूँ। संभव है वे मेरा विश्वास ही न करें। शायद वे समझें कि मैं पागल हो गया हूँ, या फिर यह सोचकर कि मैंने उन्हें मूर्ख बनाया है, वे मार-मार कर मेरा कचूमर निकाल दें। मैं हूँ भी तो ऐसे ही दंड के योग्य!

वह उठा। उसके लिए अब सबसे उपयुक्त और व्यावहारिक कदम यही था कि वह उस गाँव से चला जाये और उसने यही किया। वह रात भर चलता रहा। प्रातःकाल होने पर उसे एक बस जाती दिखाई दी। उसने बस को रोक कर पूछा .

"क्या आप मुझे ले चलेंगे?"

"कहाँ जाना है?"

"जहाँ आप जा रहे हों।"

कंडक्टर ने सीटों की ओर देखते हुए असंतोष व्यक्त किया। "जहाँ आप कहेंगे और जब आपको पूरी सवारियाँ मिल जायेंगी, मैं उतर जाऊँगा," चंद्रन ने कहा।

चूँकि बस अभी खाली थी और अनुरोध करने वाला व्यक्ति गैरिक वस्त्र धारी संन्यासी था, कंडक्टर ने उसे बस में बैठने की अनुमति दे दी। संन्यासी ने बस में चढ कर कहा : "मैं सारी रात चलता रहा हूँ। मुझे ऐसी जगह उतार दें जहाँ तारघर हो। बस-कंडक्टर ने सोचकर कहा : "मदुरम में एक तारघर है।"

"वह यहाँ से कितनी दूर है?"

"लगभग दस मील। पर हम वहाँ नहीं जाते, उसके दो मील पहले ही रास्ता बदल लेते हैं। यह बस कालकी जा रही है।"

चंद्रन बस के कालकी की सड़क पर जाने से पहले ही उतर गया और पैदल चलता हुआ मदुरम पहुँचा। वह सामरी नदी के किनारे बसा हुआ छोटा-सा शहर था मुख्य सडक पर एक डाक एव तार घर था चद्रन ने की खिड़की पर

पहुच कर पोस्टमास्टर से कहा मुझे आपसे कुछ बात करनी है क्या मैं अदर आ सकता हूँ?" पोस्टमास्टर ने उसे ऊपर से नीचे तक घूर कर देखा और फिर अनुमति दे दी।

चंद्रन उस छोटे से पोस्ट ऑफिस के अंदर चला गया। पोस्टमास्टर ने संदेहपूर्ण दृष्टि से उसकी ओर देखा। आजकल ऐसे अंग्रेजी बोलने वाले संन्यासी वहाँ काफी हो गए थे जो लोगों का भविष्य बताने के नाम पर उनसे एक-दो रुपये ऐंठ ले जाते थे।

"शायद आप मुझे मेरा भविष्य बताना चाहते हैं?" पोस्टमास्टर ने कहा।

"नहीं साहब, मैं ज्योतिष नहीं जानता।"

"आजकल यहाँ बहुत सारे संन्यासी आते हैं—इतने सारे कि उन सब के ज्योतिष के लिए हमारे पास पैसा नहीं है।"

"काश, आपको देने के लिए मेरे पास ज्योतिष का ज्ञान ही होता! मेरे पास तो वह भी नहीं है," चंद्रन ने कहा और फिर उसने अपनी सारी आपबीती उन्हें कह सुनाई। उसकी कहानी सुनकर पोस्टमास्टर उसे डेढ़ रुपया उधार देने के लिए राजी हो गया, ताकि वह अपने पिता को टेलीग्राम करके पैसा मँगवा सके।

चंद्रन ने हजामत बनवाने की और वस्त्र बदलने की भी इच्छा प्रकट की। पोस्टमास्टर ने उसके लिए नाई बुलवाया और उसे अपनी एक पुरानी कमीज और सफेद धोती दे दी।

चंद्रन ने नाई से अनुरोध किया कि वह उसके सिर के बाल विशेष यत्नपूर्वक काटे और दाढ़ी-मूँछें बिल्कुल साफ कर दे। फिर वह नहाने गया और स्नानघर से लौट कर उसे लगा जैसे उसे पुनर्जीवन प्राप्त हुआ हो। उसने पोस्टमास्टर की दी हुई कमीज व धोती पहन रखी थी और संन्यासी वाले कपड़ों का बंडल बनाकर हाथ मे ले रखा था। पोस्टमास्टर के सामने ही उसने वह बंडल दीवार के ऊपर से पास वाली गली में फेंक दिया। फिर उसने उनसे थोड़ा सा सिर में लगाने का तेल और एक कंघा माँगा। सिर में तेल लगा कर उसने एक शीशे की सहायता से बालों को कघे से सँवारने का प्रयत्न किया। महीनों तक बिना कमीज के और बढ़ी हुई दाढ़ी-मूछों सहित रहने के बाद, शरीर पर कमीज का स्पर्श और बिना बालों वाली चिकनी ठोडी का अहसास उसे अत्यंत प्रिय मालूम हो रहा था।

अपराह्न में चार बजे के लगभग डाक से चंद्रन को अपने पिता द्वारा भेजा गया सदेश और उसके साथ पचास रुपये प्राप्त हुए, यद्यपि उसने तार केवल पच्चीस रुपये भेजने के लिए किया था'

मद्रास वाली डाकगाड़ी रात को एक बजे मदुरम स्टेशन होती हुई जाती थी। चंद्रन ने मालगुडी का टिकट खरीदा, दो जंक्शनों पर गाड़ियाँ बदलीं और दो दिन बाद सुबह के समय मालगुडी स्टेशन पर आ उतरा।

❑❑❑

भाग चार

13
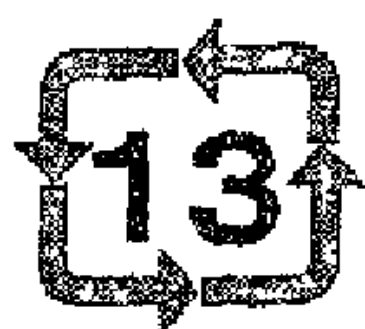
चंद्रन के माता-पिता उसमें आये परिवर्तन को देखकर आश्चर्यचकित रह गए।

"मैं स्टेशन पर आना चाहता था, चंद्रन," उसके पिता ने कहा, "लेकिन मुझे तुम्हारे कार्यक्रम का पता नहीं था।"

माँ ने कहा: "तुम एक लाश की तरह दिखाई दे रहे हो। तुम्हारी हड्डियाँ निकल आई हैं। गाल कैसे पिचक गए हैं! आखिर तुम इतने दिन कर क्या रहे थे?"

सीनू बोला : "मेरे क्रिकेट बैट का क्या हुआ? आपका कोट कहाँ गया? आपकी यह कमीज जरा ढीली है। आपने अपने बाल भी खराब कर लिए—कितने छोटे हैं। आपका बैग कहाँ है?"

उसके माता-पिता काफी चिंतित दिखाई दे रहे थे। माँ ने पूछा : "तुमने हमें एक पोस्टकार्ड तक क्यों नहीं लिखा?"

"लिखा था," चंद्रन ने कहा।

"केवल एक। उसके बाद कम से कम एक बार तो और लिखना चाहिए था।"

पिता ने पूछा : "क्या तुमने बहुत यात्रा की? कौन-कौन सी जगह गये?"

"कई जगहों पर। बस चक्कर ही लगाता रहा," चंद्रन ने कहा, और फिर सावधान हो गया। उसके पिता इससे अधिक कुछ नहीं जान सके।

"तुम अपने चाचा के पास क्यों नहीं गए?"

"मेरी इच्छा नहीं हुई," चंद्रन ने कहा, क्या आप सब मेरे बारे में बहुत चिंतित थे?

"तुम्हारी माँ बहुत चिंतित थीं। ये सोचती थीं कि तुम्हारे ऊपर कोई बहुत बड़ी विपत्ति आई है। हर सुबह ये मुझे जाकर पुलिस को खबर करने के लिए परेशान करती थीं। और वे अपनी पत्नी की ओर मुड़ कर बोले : "मैं तुमसे कहता न था कि तुम बेकार ही बुरी-बुरी बातों की कल्पना कर रही हो?"

अच्छा जैसे आप परेशान नहीं थे वे बोल उठीं आपने कितनी ही बार कहा था कि अखबारों में सूचना निकलवा देनी चाहिए।''

पिता संकुचित हो गये। चंद्रन ने पूछा : ''उम्मीद है आपने यह सब नहीं किया होगा?''

''नहीं, नहीं,'' पिता ने कहा, ''लेकिन अगर कुछ सप्ताह और तुम्हारा पत्र नहीं आता तो मुझे पुलिस को सूचित करना ही पड़ता। हाँ, तुम्हारी माँ बहुत अधिक चिंतित थीं।''

''जैसे आपको चिंता नहीं रही हो,'' माँ ने व्यंग्य किया, ''आप तीन बार मद्रास और फिर त्रिचनापल्ली क्यों गये थे और आपने इतने लोगों को पत्र किसलिए लिखे थे?''

सीनू बोला : ''भैया, माँ और अप्पा आपके लिए बहुत चिंतित और परेशान थे। मुझसे तो इस घर में कोई बात ही नहीं करता था। ये सब इतने महीनों बहुत चिड़चिड़े और उदास रहे। भैया, मुझे अपना घर बिल्कुल भी अच्छा नहीं लगता था। रसोइए के सिवा और कोई बात करने के लिए ही नहीं था। आपको एक-दो बार हमें पत्र लिखना चाहिए था। मुझे आशा थी कि आप कम से कम बिन्स की फर्म पर जाकर उनकी सूची तो ले ही आयेंगे।''

चंद्रन अपने कमरे में गया तो देखा कि हर चीज वैसी ही थी जैसी वह छोड़ गया था। जो पुस्तकें वह मेज पर छोड़ गया था वे ज्यों की त्यों रखी हुई थीं। उसकी चारपाई, पुस्तकें रखने वाला शेल्फ, उसका पुराना कोट, सब अपनी पुरानी जगह पर थे—यहाँ तक कि राइटिंग पैड भी उसी स्थिति में रखा हुआ था। कहीं नाम के लिए भी धूल का कण या मकड़ी का जाला नहीं था। बल्कि कमरे की हर वस्तु हमेशा से अधिक स्वच्छ थी। इतनी स्वच्छता देख कर वह तेजी से अपनी माँ के पास जाकर पूछने लगा : ''माँ, मेरे कमरे की हर चीज इतनी साफ कैसे है?'' उसके पिता ने उत्तर देते हुए कहा : ''तुम्हारी माँ तुम्हारी हर चीज की रोजाना बड़े यत्न से सफाई करती थीं।''

''तुमने इतनी तकलीफ क्यों की, माँ?'' चंद्रन ने पूछा। माँ संकोच व दुविधा से लाल होकर बोलीं : ''मेरे पास और काम ही क्या था?''

''तुम सीनू को मेरे कमरे से बाहर कैसे रख पाती थीं?''

''माँ कमरे को ताला लगा देती थीं। एक घंटे के लिए भी खुला नहीं छोड़ती थीं।'' सीनू ने कहा।

अचानक चंद्रन पूछ बैठा : ''रामू का क्या हुआ? क्या उसकी कोई खबर है?''

''नहीं।''

"उसके कोई पत्र मेरे लिए नहीं आये?"

"नहीं, एक भी नहीं," माँ ने उत्तर दिया।

"उसके घर के लोग कहाँ है? क्या वे लोग अब पास वाले मकान में नहीं रहते?"

"उसके पिताजी का किसी तेलगू जिले में स्थानांतरण हो गया था। वे लोग अपना सारा सामान लेकर यहाँ से चले गए।"

चंदन समझ गया कि अब रामू से पूरी तरह और हमेशा के लिए संपर्क टूट चुका है। पत्र लिखने की आदत रामू को कभी नहीं थी। दो साल से एक कार्ड के अतिरिक्त उसने कुछ भी नहीं लिखा था। जब तक उसके घर के लोग पास वाले मकान में रहते थे, उसका समाचार मिलने की भी आशा रहती थी। अब वह आशा भी नहीं रही थी। "अब वह और मैं अलग हो गए हैं," चंद्रन ने उदास होकर सोचा, "वह मुझे कभी याद नहीं करेगा। वह तो स्वभाव से ही ऐसा निर्मोही था। जो चीज आँख से ओझल हो जाती उसके बारे में वह कभी नहीं सोचता था।"

माँ ने बताया : "वे जाने से पहले हम लोगों से मिलने आये थे और बता रहे थे कि रामू को बंबई रेलवे में पचहत्तर रुपये मासिक की नौकरी मिल गई है।"

सुनकर चंद्रन के हृदय को आघात लगा। रामू ने अपने मित्र को नौकरी मिल जाने की खुशखबरी देना भी आवश्यक नहीं समझा था। "मित्रता भी प्रेम की ही तरह एक मिथ्या भ्रम है," उसने सोचा, "यद्यपि इसमें आदमी पागलपन की उस सीमा तक नहीं पहुँचता। लोग समझते हैं कि वे मित्र हैं, किंतु तथ्य यह है कि वे केवल परिस्थितियों के कारण निकट आते हैं। एक ही कक्षा, एक ही क्लब अथवा एक ही दफ्तर होने के कारण मित्रता हो जाती है। परिस्थितियों में परिवर्तन आते ही संबंधों में भी परिवर्तन आ जाता है। साथ-साथ नदी-तट पर घूमना, सिगरेट, सिनेमा, अतरंगता—कहाँ गया वह सब? अब तो रामू को मेरी जरा भी परवाह नहीं है। मित्रता—क्या यह एक अर्थहीन शब्द नहीं है?"

"क्या बात है चंद्र? तुम अचानक इतने गंभीर कैसे हो गये?" उसके पिता ने पूछा।

"कुछ नहीं, कुछ नहीं," चंद्रन ने कहा, "मैं ऐसे ही कुछ सोचने लगा था अप्पा, क्या आपको कुछ ध्यान है कि आपके पुराने कॉलेज के साथी अब कहाँ होंगे?"

उसके पिता ने याद करने की कोशिश की किंतु फिर हार कर प्रयत्न करना छोड़ दिया, बोले : "कुछ मालूम नहीं। अगर मैं अपने पुराने कॉलेज वाले ग्रूप फोटो को देखूँ तो शायद कुछ याद आ जाये।" उन्होंने पत्नी की ओर मुड़ कर पूछा : "वह फोटो कहाँ है?"

'-मुझे क्या मालूम? उन्होंने उत्तर दिया।

सीनू बोला : "पता नहीं, शायद आप उसी फोटो की बात कर रहे हों।" उसे रद्दी सामान वाले कमरे में एक बड़ा ग्रूप-फोटो मिला था। "मैंने उसे अपनी मेज के ऊपर टाँग रखा है, पर उसका शीशा टूट गया है।"

चंद्रन ने कहा : "मेरा मतलब पूरी कक्षा से नहीं है, केवल आपके कॉलेज वाले दिनों के कुछ खास मित्रों से है।"

"मैंने क्रिस्टियन कॉलेज में जो चार साल बिताए, उस दौरान मेरे तीन चार घनिष्ट मित्र थे तो सही। हम लोग हॉस्टल में भी एक ही कमरे में या पास-पास वाले कमरों में रहते थे। हम हमेशा साथ रहते थे....। उनमें से शिवरामन इंपीरियल सर्विस में चला गया और कुछ समय तक बिहार में था। तीस साल से अधिक हो गए हमें एक-दूसरे को पत्र लिखे। मैंने कुछ समय पहले अखबार में पढ़ा था कि वह रेलवे बोर्ड का कोई चीफ बन कर रिटायर हो गया। गोपाल मेनन सिविल सर्विस में था। उसकी कुछ समय पहले हार्ट फेल होने से मृत्यु हो गई। इसके विषय में भी मैंने अखबार में ही पढ़ा था और उसकी पत्नी को संवेदना-पत्र भेजा था। एक और मित्र को हम कुट्टी कह कर पुकारते थे। उसका पूरा नाम अब याद नहीं रहा। पता नहीं वह अब कहाँ है। मेरा एकमात्र पुराना मित्र जो अब भी इसी शहर में है वह है माधव राव।"

"आपका मतलब उनसे है जो बूढ़े से हैं और कॉलेज के पास रहते हैं?"

"नहीं, वे कोई और होंगे। मेरा मतलब के.टी. माधवराव रिटायर्ड पोस्टल सुपरिन्टेन्डेन्ट से है। वह और मैं पक्के दोस्त थे।"

"क्या आप लोग अक्सर मिलते हैं?

"कभी-कभी। अब वह क्लब भी नहीं आता। सच पूछो तो मैं पिछली बार चार साल पहले उसके घर गया था जब वह ब्लड प्रेशर के कारण बीमार था।"

"जबकि आप लोग कॉलेज में हमेशा साथ रहते थे?"

"हाँ, हाँ। लेकिन ऐसा है कि -- हम लोग हमेशा साथ-साथ थोड़े ही रह सकते हैं? हर एक को अपने अलग रास्ते पर जाना पड़ता है।"

चंद्रन को यह सब अत्यंत कष्टदायक प्रतीत हुआ। शायद वर्षों बाद वह अपने पोते से कहे : "मेरा रामू नाम का एक मित्र था। हमें एक-दूसरे को पत्र लिखे पचास वर्ष हो गए। पता नहीं वह अब जीवित है या नहीं।" उसके पिता के पास कम से कम एक-एक समूह-फोटो तो था जो कबाड़ वाले कमरे में पड़ा था। उसके पास तो वह भी नहीं था— वह अपनी कक्षा का सामूहिक फोटो खरीदना ही भूल

गया था इसके विषय में भी मैंने अखबार में ही पढ़ा था समय कितना निर्मम होता है!

उसने बगीचे में कदम रखा। सब जगह जंगली घास उग आई थी और पौधे खराब हो रहे थे। कुछ क्रोटन और गुलाब जिंदा रहने के लिए संघर्ष कर रहे थे, किंतु जंगली बूटी उन्हें भी दबाने का सफल प्रयत्न कर रही थी। उसने अपने बगीचे की ऐसी दशा पहले कभी नहीं देखी थी। जहाँ तक उसे याद था, उसके पिता दिन-रात बगीचे में काम करते रहते थे। अब माली कहाँ चला गया? और उसके पिता को क्या हो गया?

उसने अंदर जाकर पूछा : "पौधों को क्या हो गया है?" उसके पिता को समझ में नहीं आया क्या जवाब दें, बोले : "पता नहीं।"

"क्या आप आजकल बगीचे में काम नहीं करते?"

"हाँ, मैं ऐसा नहीं कर सका।"

"तो फिर आप इन दिनों किस काम में व्यस्त थे?"

"समझ में नहीं आता कौनसा काम बताऊँ।"

माँ ने शरारत से कहा : "ये अपने खोए हुए बेटे की तलाश में व्यस्त थे।"

"लेकिन मैंने आपको लिखा तो था अप्पा, कि मैं आपको काफी लंबे समय तक पत्र नहीं लिख सकूँगा, आप चिंता न करें।"

"हाँ, हाँ, क्यों नहीं, तुमने लिखा था। तुम्हारी माँ तो केवल मज़ाक कर रही हैं। उनकी बातों को गंभीरता से मत लो।"

शाम को चंद्रन मोहन के होटल चला गया। जाने से पूर्व उसने अपनी माँ से कहा : "संभव है मैं रात को नहीं लौटूँ। मैं मोहन के होटल में ही सो जाऊँगा।"

ज्यों ही चंद्रन उस होटल के पास पहुँचा, वह कठोर, निर्विकार भाव से अपनी उस मन:स्थिति को याद किए बिना न रह सका जो पिछली बार वहाँ आने पर थी। यह निर्विकारता उसने बलपूर्वक, भारी प्रयास के बाद प्राप्त की थी। होटल के सामने आते ही उसके दिल की धड़कन तीव्र हो गई। कहीं सामने वाले मकान के दरवाजे पर वह खड़ी हो तो? होटल में घुसने से पहले, अपने पूर्व निश्चय के बावजूद उसने एक बार मुड़ कर देखा पर सामने वाले दरवाजे पर कोई नहीं था। सीढ़ियाँ चढ़ते हुए उसने अपने आप को इस दुर्बलता के लिए बुरी तरह धिक्कारा : "चंद्रन बाबू! तुम अब भी उस भ्रांति में फँसे हुए हो!" क्या दुबारा संन्यास लेकर भटकने का इरादा है?"

कमरा नं. 14 को ताला लगा हुआ था और बाहर पेंसिल से किसी और का नाम लिखा हुआ था। उसने वापस नीचे उतर कर मैनेजर से मोहन के बारे में पूछताछ

की उसने बताया कि मोहन अब नये कमरा न 14 मे रहता है जो सबसे ऊपर की माजल पर है।

चंद्रन मोहन के नये कमरे में पहुँचा। यह एक प्रकाश व हवा से युक्त साफ-सुथरा बेहतर कमरा था। कमरे में एक मेज व कुर्सी भी रखी हुई थी और दीवार पर चित्र लगे हुए थे।

चंद्रन को देख कर मोहन पाँच मिनट तक तो जड़वत् रहा, फिर उसने मुँह खोला तो प्रश्नों की झड़ी लगा दी : ''यह तुमने अपना क्या हाल कर लिया? कहाँ थे तुम? क्यों...''

''यह कमरा सचमुच बहुत अच्छा है'', चंद्रन ने कहा, ''पुराने को छोड़कर इसका जुगाड़ तुमने कैसे किया?''

''देख तो रहे हो, मेरी स्थिति अब पहले से बहुत अच्छी है,'' मोहन ने खुश होकर कहा, ''मुझे अपने बारे में बताओ।''

''मेरी कहानी तो रामायण की तरह लंबी है, सुनाऊँगा तुम्हें। पहले मुझे अपने हालचाल बताओ।''

''जैसा कि मैंने अभी बताया, बिल्कुल ठीक हूँ। 'डेली मेसेन्जर' अब रोजाना तीस हजार प्रतियाँ बेच लेता है। अब वे मुझे हर कॉलम के पाँच रुपये देते हैं और ज्यादा काट-छाँट भी नहीं करते क्योंकि वे इस तरफ के जिलों में अपने समाचार-पत्र की माँग बढ़ाना चाहते हैं। उसे अब नयी कंपनी चला रही है। वे नियमित रूप से समय पर पैसा देते हैं। एक महीने में मेरे लगभग बीस कॉलम बन जाते हैं। यही नहीं, वे अपने पत्रिका वाले पृष्ठ पर हर सप्ताह मेरी कविताएँ भी छापते हैं और उनकी हर पंक्ति के चार आने की दर से पैसा देते हैं।'' मोहन बड़ा स्वस्थ व प्रसन्न दिखाई दे रहा था।

''यह तो बहुत अच्छी खबर है,'' चंद्रन ने कहा, ''मुझे खुशी है कि तुमने वह पुरानी कोठरी छोड़ दी।''

''इस कमरे के मैं पाँच रुपये अधिक दे रहा हूँ। मैंने जिद की थी कि इस कमरे का नंबर चौदह रखा जाये। यह नंबर भाग्यशाली है। अतः यह कमरा नया नंबर 14 और वह पुराना नंबर 14 कहलाता है। यह कमरा नया बना है। इस होटल का मालिक अब काफी समृद्ध हो गया है। उसने यह इमारत खरीद कर उसमें कई नये कमरे जोड़ दिए हैं। कुछ सालों तक बेचारे का होटल ठीक नहीं चला था, पर अब यहाँ बहुत सारे लोग आते हैं और उसकी कमाई बहुत बढ़ गई है। मैंने दूसरे होटल में जाने की भी सोची थी, पर मन नहीं माना। इसका बूढ़ा मालिक और मैं बुरे दिनों से मित्र रहे

हैं उन दिनों कभी कभी उसके होटल में चावल तक नहीं रहता था और मैं एक दो रुपए उधार लेकर उसे होटल चलाने के लिए देता था।"

दर्जनों बार प्रश्न को रोकने का प्रयत्न करने के बाद आखिर चंद्रन पूछ ही बैठा "क्या वे लोग अब भी सामने वाले मकान में रहते हैं?"

मोहन ने कुछ मुस्कराकर और रुक कर उत्तर दिया : "शादी के बाद ही उन लोगों ने वह मकान छोड़ दिया। पता नहीं वे लोग अब कहाँ हैं।"

"उस घर में अब कौन रहता है?"

"वहाँ अब कोई मारवाड़ी साहूकार रहता है।"

हर जगह परिवर्तन दिखाई दे रहा था और चंद्रन को यह बहुत अखर रहा था। "मैं केवल आठ महीने बाहर रहा हूँ या अठारह वर्ष?" उसने अपने आप से पूछा। वह मोहन से बोला : "मोहन, चलो, हम आज पूरी शाम और रात सरयू किनारे बितायेंगे। मुझे तुमसे बहुत सी बाते करनी हैं। मुझे तुम्हारी जरूरत है। किसी होटल में जाकर कुछ खा लेते हैं और फिर नदी-तट पर चलते हैं।"

मोहन ने इस पर आपत्ति की। बताया कि उसे नगरपालिका की एक अत्यावश्यक मीटिंग में जाना है। किंतु चंद्रन ने उसकी एक न सुनी। अंत में मोहन को उसकी बात माननी पड़ी। वह बोला : "ठीक है, मैं मीटिंग की कार्यवाही कल 'गज़ट' वाले से मालूम कर लूँगा। मुझे यह खबर अपने अखबार के लिए भेजनी है।"

वे एक कॉफी-होटल में गए और फिर नदी-तट पर। नदी-किनारे वाली भीड के चले जाने और पृथ्वी पर अंधकार की चादर फैल जाने के काफी बाद भी नदी की लहरों की आवाज के साथ-साथ चंद्रन का स्वर भी सुनाई देता रहा। उसने मोहन को अपने भटकने की पूरी कहानी सुनाई और अंत में यह निष्कर्ष भी कि प्रेम और मित्रता नितान्त मिथ्या हैं, भ्रम हैं; लोग शादी इसलिए करते हैं कि वे अपनी यौन क्षुधा को तृप्त कर सकें और साथ ही गृह-प्रबन्ध करने वाली पा सकें। स्त्री और पुरुष के पारस्परिक सम्बन्ध में इससे अधिक गहराई नहीं होती।

जब तालुक ऑफिस के घंटे ने रात के ग्यारह बजाये तो चंद्रन यह कहते हुए उठ खड़ा हुआ : "याद रखना, मैंने यह और किसी को नहीं बताया है कि मैं आठ महीने तक संन्यासी था। यह बात अपने तक ही सीमित रखना। मैं नहीं चाहता कि लोग मेरे बारे में बातें करें।"

वे दोनों सुनसान सड़कों को पार करते हुए वापस होटल आ गये।

❑❑❑

14

चंद्रन ने अब एक संयत व शांतिपूर्ण जीवन प्रारम्भ किया। वह अपने जीवन को हर प्रकार के उन्माद व भ्रमपूर्ण विचारों से दूर रखना चाहता था।

आजकल वह बगीचे में काफी काम करने लगा था। हर सुबह वह अपने दो घंटे से भी अधिक बगीचे में बिताता था। उसने अपने समय को पेड़-पौधों और पुस्तकों के बीच विभाजित कर दिया था। शाम होने पर वह अपनी साइकिल (सेकंड हैंड, जो उसने हाल ही में खरीदी थी) उठाता और उस पर बैठ कर लंबी सैर करने ट्रंक रोड की ओर निकल जाता। फिर मोहन के होटल चला जाता। एक तने हुए रस्से पर चलने वाले व्यक्ति जैसी ही सावधानी से वह अपनी दृढ़ इच्छा-शक्ति की सहायता से चित्त को उद्भ्रान्त करने वाले ख़यालों से बच कर चलता था। वह अपने मन-मस्तिष्क को एक क्षण का भी अवकाश नहीं देना चाहता था, क्योंकि वह खालीपन ही सारी मुसीबत की जड़ था। वह जो भी काम करता, संपूर्ण एकाग्रता से करने का भगीरथ प्रयत्न करता। यदि बगीचे की गुड़ाई करता तो अपने मन को कड़े अनुशासन से केवल मिट्टी और कुदाली तक ही सीमित रखता, इसके अतिरिक्त कुछ नहीं सोचने देता। यदि कोई पुस्तक पढ़ता तो मन को पूरी तरह उसी में डुबा देता। वह अपने मन की लगाम को जरा भी ढील नहीं देता था।

अब भी कई ऐसी बातें देखने व सुनने में आ जाती थीं जो मालती की यादों से संबद्ध थीं, किंतु वह उन्हें टाल देता था। वह यथासंभव सूर्यास्त से पूर्व नदी-तट पर नहीं जाता था और अपने पुराने वाले स्थान पर तो कभी नहीं। उसे खुशी थी कि अब मॉडर्न इंडियन लॉज के सामने वाले मकान में मालती के स्थान पर कोई साहूकार आ गया था। यदि उसे कभी शहनाई सुनाई देती, और वह भी कल्याणी राग में, तो अब भी उसके मन का संतुलन डगमगाने लगता था। मोहन के होटल जाते समय भी वह बड़ी सावधानी से शिव मंदिर वाले रास्ते से बच कर निकलता था क्योंकि

की ओर भूल कर भी नहीं देखता था क्योंकि उसे डर था कि कहीं उस दुकान वाले लडके की भौहें न दिखाई दे जायें। फिर भी कोई न कोई चीज मालती की याद दिला कर उसकी मनोवेदना को जगा ही देती थी। ऐसे क्षणों में वह गंभीर विचार द्वारा अपने मन का समाधान करता। वह सोचता : "यह मन का एक विकार मात्र है, मिथ्या है। मालती के बारे में ये मनोभाव वास्तविक नहीं हैं क्योंकि प्रेम केवल मस्तिष्क की एक विकृति है; इसने मुझे भीख माँगने, छल करने और अपने माता-पिता का परित्याग करने के लिए प्रेरित किया। यही मेरी माँ की झुर्रियों व समय से पूर्व सफेद हो गए बालों के लिए उत्तरदायी है। इसी के कारण मेरे पिता अपने प्रिय बगीचे के प्रति उदासीन हो गए और एक गरीब पोस्टमास्टर ने मेरे लिए अपनी एक कमीज और धोती खो दी।"

एक और भी बात उसे अशांत किए हुए थी जिसे वह मन से नहीं निकाल सकता था, और वह थी रोजगार की चिंता। वह अक्सर सोचा करता था कि वह आगामी वर्ष में इंग्लैंड जाकर वहाँ से विशेष योग्यता प्राप्त करके यहाँ लौट कर किसी उपयुक्त नौकरी की तलाश करेगा। कभी तो इस कार्यक्रम की बात सोच कर वह चित्त को शांत कर लेता, पर कभी ऐसा नहीं भी कर पाता। यह उसका चौबीसवाँ वर्ष चल रहा था। कॉलेज छोड़े उसे लगभग दो वर्ष हो चुके थे, किंतु अब भी वह आर्थिक रूप से अपने पिता पर निर्भर था। वह इस विचार से इतना परेशान था कि एक दिन जब उसके पिता बगीचे में काम कर रहे थे तो वह उनके पास जाकर बोला : "क्यों न मैं किसी सरकारी नौकरी के लिए आवेदन कर दूँ?"

पिता ने नजर उठा कर उसकी ओर देखा और प्रश्न किया : "ऐसा क्यों करना चाहते हो?" चंद्रन ने बुदबुदा कर कुछ कहा। पिता समझ गए कि उसे कोई बात चिंतित किए हुए है। उन्होंने कहा : "नौकरी की कोई जल्दी नहीं है।"

"लेकिन अप्पा, मैंने इतना समय व्यर्थ गँवा दिया है। मुझे ग्रेजुएट हुए ही लगभग दो वर्ष हो गए। मैंने न आगे पढ़ाई की, न कुछ और किया।"

"तुमने अपना समय व्यर्थ नहीं गँवाया है। तुम पुस्तकें पढ़ते रहे हो, लोगों को और जिंदगी को जानने-समझने की कोशिश कर रहे हो। चिंता मत करो। इंगलैण्ड से लौटने के बाद नौकरियों के लिए आवेदन कर लेना। काफी समय मिलेगा। योग्यता बढा लेने के बाद ऐसा करना बेहतर रहेगा। अभी चालीस या पचास रुपये महीने की क्लर्की पा लेने से क्या लाभ? और उसे प्राप्त करना भी आजकल आसान नहीं है।"

"पर अप्पा, मैं अब छोटा नहीं रहा। चौबीस का होने वाला हूँ। मेरी उम्र में लोग पूरे परिवार का खर्च चलाते हैं।"

"अगर यह आवश्यक होता तो तुम भी ऐसा कर सकते थे। यदि तुम्हें टायफायड हो जाने के कारण एक साल नहीं रुकना पड़ता और स्कूल में दाखिला दिलवाने मे देर नहीं होती तो तुम बीस वर्ष की उम्र से भी पहले कॉलेज की पढ़ाई समाप्त कर सकते थे।"

चंद्रन ने मन ही मन अपने पिता की प्रशंसा की कि उन्होंने कितनी चतुराई से उसके दोषों को अनदेखा कर दिया था। अब तक जो समय नष्ट हुआ था उसका कारण वे टायफाइड और स्कूल के दाखिले में विलम्ब को बता रहे थे, यह भूल कर कि यदि वह आठ महीने तक भटकता नहीं रहता तो अब तक कब का इंग्लैड में होता। चंद्रन ने यह सोच कर अपने मन को धीरज दिया कि वह इंग्लैंड जाकर कोई बड़ी उपलब्धि करेगा और फिर शिक्षा-सेवा में कोई ऊँचा पद प्राप्त कर सकेगा। उसके पिता उसके इंग्लैंड जाने के संबंध में प्रारंभिक जानकारी प्राप्त करने के लिए मद्रास में अपने भाई को लगातार पत्र लिख रहे थे। इन पत्रों से चंद्रन को एक उपार्जनशील जीवन की ओर प्रगति का एहसास होता था। किंतु ऐसे भी क्षण आते थे जब उसे इस पर संदेह होने लगता था। वह सोचता कि क्या उसे अपने पिता पर इतना बड़ा खर्चा लादना चाहिए? उसका निकट भविष्य में इंग्लैंड जाना भी कहीं छलावा मात्र तो नहीं है? क्या वह ऐसा करके अपने पिता पर भारी बोझ बनने नहीं जा रहा है? ....और वह कुछ निश्चय नहीं कर पाता। उसने मोहन से परामर्श किया। मोहन ने कहा कि यदि वह ऐसा महसूस करता है तो कोई और काम क्यों नहीं कर लेता। चंद्रन के पूछने पर मोहन ने स्पष्ट किया : "हमारे अखबार के मुख्य एजेन्ट क्यों नहीं बन जाते? वे लोग वर्तमान एजेन्ट से संतुष्ट नहीं हैं, उसे नोटिस दे दिया गया है। उन्हें इस जिले और कुछ अन्य जिलों के लिए एजेन्ट चाहिए। इसके लिए उन्होंने विज्ञापन भी दिया है।"

"इससे कितना मिलेगा?"

"काम पर निर्भर करता है। ग्राहकों की संख्या में जितनी वृद्धि होगी, उतना ही अधिक रुपया कमाओगे।"

चंद्रन कुछ हिचकिचा रहा था, बोला : "प्रचार करने कहाँ जाता फिरूँगा?"

"एजेन्ट को इसी बात का तो पैसा मिलता है। छः महीने के अंदर 'डेली मैसेन्जर' की दैनिक ग्राहक संख्या बढ़ कर तीस हजार हो गई है। यह काफी बडी सख्या है। प्रेसीडेन्सी के सब लोग इसे खरीदते हैं। यहाँ भी इसका प्रचार होना चाहिए। बिना एजेन्ट के अखबार की खपत पच्चीस प्रतिशत से अधिक नहीं हो पाती। मेरे दिए गए मालगुडी के स्थानीय समाचार भी वे लोग इसीलिए छापते हैं कि उनके कारण यहाँ की ग्राहक संख्या बढ़ सके --

उसकी इन बातो के बावजूद चद्रन को यह विश्वास हो नही हो पा रहा था कि यह काम विशेष उपयोगी रहेगा। अगले दिन मोहन इस विषय में कुछ और जानकारी ले आया। "मैं वर्तमान एजेन्ट से मिला था", उसने बताया, "उसे हर अखबार की बिक्री पर चौथाई आना मिलता है।" मोहन ने पूरी जानकारी के लिए दफ्तर को लिख भेजा और उत्तर प्राप्त होने पर चंद्रन को दिखाया। कुछ और विचार व बातचीत के उपरांत चंद्रन को यह काम दिलचस्प मालूम हुआ। उसने अपने पिता से पूछा : "यदि मैं इंग्लैंड नहीं जाऊँ तो क्या आपको निराशा होगी?"

"क्या बात है?" पिता ने पूछा, "मैंने तो आवश्यक जानकारी प्राप्त करने के लिए पत्र लिख दिया है।"

"मुझे लगता है कि इंग्लैंड जाने पर व्यर्थ ही ढेर-सा रुपया खर्च होगा।"

"तुम्हें उसकी चिंता करने की आवश्यकता नहीं है।"

"वहाँ से विशेष योग्यता प्राप्त करके लौटना और यहाँ उपयुक्त नौकरी पाना, यह सब एक जुए जैसा, अनिश्चित लगता है।"

पिता चुप हो गए। जब चंद्रन आकर कोई प्रस्ताव रखता था तो वे घबरा जाते थे। लेकिन चंद्रन 'डेली मैसेन्जर' की एजेन्सी के बारे में गंभीरता से सोच रहा था और इसमें एक स्वतंत्र व संपन्न जीवन का भविष्य देख रहा था। उसने अपनी बात की पुष्टि के लिए संबंधित तथ्य व आँकड़े बताए। रोजाना बिकने वाले हर अखबार पर चौथाई आने का लाभ। सारे जिले में केवल एक हजार ग्राहक भी हों तो वह 250 आने रोज के, यानी लगभग 480 रुपये महीने के हिसाब से कमाएगा, जिसका वह सरकारी नौकरी में पंद्रह वर्ष गुलामी करने के बाद भी सपना तक नहीं देख सकता। और फिर अपने व्यवसाय को विस्तृत करने की संभावना तो रहेगी ही। मालगुडी की जनसंख्या में से भी कम से कम दस हजार लोग अंग्रेजी जानने वाले होंगे और उनमें से कम से कम पाँच हजार तो ऐसे होंगे ही जो अखबार पर एक आना रोज खर्च कर सकें। ये ही लोग 'डेली मैसेन्जर' खरीदेंगे।

"एजेन्सी के लिए हमें दो हजार रुपये जमानत के तौर पर देने होंगे जिन पर वे हमें बाद में ब्याज देंगे। ऑफिस से आए पत्र में लिखा है कि कुछ लोगों ने तो आवेदन कर भी दिया है और इस एजेन्सी के लिए भारी प्रतियोगिता है। एजेन्ट का चुनाव पहली तारीख को होगा। मेरे लिए यह अच्छा अवसर है। मेरे विचार से यह इंग्लैंड जाने से बेहतर है," चंद्रन ने कहा।

पिता चुपचाप उसकी बातें सुनते रहे। उसकी माँ, जो पूजा-घर के दियों के लिए रुई की बत्तियाँ बना रही थीं, बोलीं : "मेरे विचार से यह ठीक है। उसे इंग्लैंड जाने की क्या जरूरत है?"

पिता ने जवाब दिया कि ये बाते इतनी आसानी से तय नहीं की जा सकतीं वे अखबार-व्यवसाय के बारे में पूरी तरह अनभिज्ञ थे। उन्होंने इस विषय पर प्रकाश डालने के लिए मद्रास में अपने भाई को पत्र लिखा। उस शाम को क्लब में उन्होंने अपने एक मित्र को, जो शहर का नामी वकील था, अलग ले जाकर उससे पूछा : "क्या तुम 'डेली मैसेन्जर' पढ़ते हो?"

"हाँ।"

"कैसा पेपर है यह? मैंने इसकी एक प्रति देखी थी, पर मैं तुम्हारे विचार जानना चाहता हूँ।"

"मैं इस अखबार का नियमित ग्राहक तो नहीं हूँ किंतु एक पड़ोसी से ले लेता हूँ। यह काफी अच्छा पेपर है, स्वतंत्र और निष्पक्ष।"

"बात यह है कि मेरा बेटा दो हजार रुपये की जमानत देकर इसकी एजेन्सी लेना चाहता है। मैं इस बारे में कुछ नहीं जानता पर वह सोचता है कि यह उसके लिए अच्छा रहेगा।"

"उसके इंग्लैंड जाने का क्या हुआ?" मित्र ने पूछा।

"अब वह इस काम के लिए अधिक उत्साह दिखा रहा है। उसके मन में रोज कोई नया विचार आता है। वैसे इस काम के बारे में भी उसे ज्यादा कुछ मालूम नही है पर उसने वादा किया है कि वह मालूम करके मुझे बताएगा।"

घर लौटने पर चंद्रन ने उनसे कहा : "हम पूछताछ और जाँच-पड़ताल पर इतना समय नष्ट नहीं कर सकते। एजेन्सी के लिए बहुत सारे लोग कोशिश कर रहे हैं। हमें जल्दी करनी चाहिए।"

जब चंद्रन अपने कमरे में चला गया तो उसकी माँ ने कहा : " आप लड़के को तकलीफ क्यों पहुँचा रहे हैं?" पिता ने कोई उत्तर न देकर अखबार में नजर गडाए रखी। माँ ने अपना प्रश्न फिर दोहराया तो वे बोले : "ये बातें तुम मुझ पर क्यो नहीं छोड़ देतीं?"

"अगर लड़का यहीं रहना चाहता है तो आप उसे रहने क्यों नहीं देते? उसे इंग्लैंड भेजने से क्या लाभ है? ढेर-सा रुपया बरबाद करना। इन इंग्लैंड जाने वाले लडकों को ही क्या विशेष उपलब्धि हो जाती है? वे केवल सिगरेट फूँकना, शराब पीना और गोरी लड़कियों के साथ नाचना सीखते हैं।"

"लेकिन मेरी आशा यह है कि मेरा लड़का कुछ और करेगा।"

"अगर अखबार के रोजगार में इतनी कमाई है जितनी वह बताता है तो वह उस काम को क्यों न करे?"

"वास्तव में इतनी कमाई है भी या नहीं, यह तो पहले पता लगा लूँ। इस अखबार को चलाने वाले लोग कौन व कैसे हैं, इसके कब तक चलने की संभावना है, आदि बातें जब तक नहीं जान लेता, इसमें लगाने के लिए दो हजार रुपये का चेक कैसे दे दूँ? मान लो यह पेपर साल भर भी नहीं चले, तो फिर लड़के को इसमें लगाने से क्या लाभ? मैंने इस विषय में अपने भाई को पत्र लिखा है, देखे वह क्या लिखता है।"

वे अंदर जाने के लिए उठती हुई बोलीं : "आपको तो हर बात में अपने भाई से सलाह लेनी होती है। कुछ भी हो, मैं यह नहीं चाहती कि लड़का हर तरफ से हताश हो जाये।" पिता कुछ देर उनके जाने की दिशा में ताकते रहे, अपनी आराम कुर्सी पर थोड़ा आगे-पीछे हुए और फिर अखबार में नजर गड़ा ली।

चंद्रन ने अपने आप से कहा : "मुझे अपने पिता को इस तरह विवश और परेशान करने का कोई अधिकार नहीं है। यदि वे और प्रतीक्षा व विलंब करना चाहते हैं तो उन्हें ऐसा करने का हक है। यदि मेरे भाग्य में एजेन्सी होगी तो मिल जायेगी और यदि भाग्य में न हुई तो दौड़-धूप करने पर भी नहीं मिलेगी।"

उसके चाचा का पत्र आने में चार-पाँच दिन लग गये। तब तक घर में चद्रन अथवा उसके पिता, किसी ने भी उस अखबार की चर्चा नहीं की। किंतु हर सुबह नौ बजे चंद्रन बाहर निकल जाता था और रास्ते में लॉली एक्स्टेन्शन वाले डाकिए से पूछ लेता था कि उसके पिता के नाम कोई पत्र तो नहीं है। अंत में एक सुबह वह पत्र आ ही गया। और कोई समय होता तो चंद्रन डाकिए के हाथ से पत्र लेकर अपने पिता के पास ले जाता और उसके समाचार जानने की जिज्ञासा प्रकट करता। पर इस बार उसने अपनी इच्छा को दबा लिया, डाकिए से पत्र ले जाकर पिता को देने के लिए कहा और खुद वाचनालय चला गया। वहाँ से वह दोपहर तक लौटा। वह अपने पिता के पास न जाकर रसोई व भोजनालय की ओर चला गया। अंत मे पिता ने खुद ही उसे बुलाकर पत्र दे दिया। चंद्रन ने पत्र खोल कर पढ़ा : "--- इस अखबार को चलाने के लिए जो निदेशालय है उसमें जे.डब्लू. प्रभु, सर एन.एम राव आदि काफी प्रभावशाली लोग हैं। इसकी एजेन्सी मिलना आसान नहीं है पर यदि मिल जाये तो सचमुच बहुत अच्छी बात होगी। मेरा एक मित्र इसके प्रबध निदेशक को जानता है। यदि आप चंद्रन को तुरन्त यहाँ भेज दें तो उस मित्र के माध्यम से जो कुछ किया जा सकता हो, करूँगा।

चंद्रन ने पत्र को दो बार पढ़ा और अपने पिता को लौटाते हुए यों ही पूछ लिया : "आपका इस बारे में क्या विचार है?" पिता ने कहा : "तुम आज ही मद्रास जा सकते हो मैं तुम्हारे चाचा को तार कर दूँगा" चंद्रन ने अपनी माँ के

पास जाकर कहा   मैं आज मद्रास जा रहा हू   माँ ने चिंतित होकर पूछा
''वापस कब आओगे?''

''दो-तीन दिन में, काम पूरा होते ही।''

''सच कह रहे हो?''

''चिंता मत करो माँ, मैं जरूर वापस आऊँगा,'' चंद्रन ने कहा।

उसने तुरन्त अपना सामान जमाना शुरू कर दिया। जब वह अपने कमरे में इधर-उधर कपड़े फैलाये बैठा था तो उसके पिता उसके लिए कोई न कोई चीज हाथ में लिए बार-बार कमरे में आ रहे थे। वे आधा दर्जन रुमाल लेकर आये और बोले . ''तुम्हें मद्रास में इनकी जरूरत पड़ सकती है।'' इसके बाद वे दो बिल्कुल नई धोतियाँ लेकर बोले : ''मेरे पास तो बहुत सी रखी हैं।'' फिर उन्होंने एक ऊनी स्कार्फ लाकर चंद्रन से कहा कि उसे मद्रास में अपने चाचा को दे दे। माँ ने आकर पूछा कि क्या वह रास्ते में खाने के लिए कुछ ले जाना पसंद करेगा। फिर उन्होने अपनी देवरानी के लिए एक टोकरी सब्जियाँ भेजने की इच्छा प्रकट की। चंद्रन ने टोकरी ले जाने के लिए मना कर दिया। किंतु उन्होंने जिद करते हुए कहा कि टोकरी उसे अपने सिर पर रख कर तो ले जानी नहीं है। चंद्रन ने धमकी दी कि यदि उसे कोई टोकरी दी गई तो वह उसे ट्रेन से बाहर फेंक देगा।

पाँच बजे तक चंद्रन भोजन आदि से निवृत्त होकर जाने के लिए तैयार हो गया। उसका सामान—ट्रंक और बिस्तर हॉल में लाया गया। माँ ने एक छोटी टोकरी भी लाकर रख दी। टोकरी देख कर चंद्रन ने फिर विरोध किया। माँ ने टोकरी को उठा कर कहा : ''देखो, यह कितनी हल्की है! इसमें तुम्हारी चाची के लिए कुछ सब्जियाँ हैं। तुम्हें वहाँ खाली हाथ नहीं जाना चाहिए।''

चंद्रन के पिता, माँ व सीनू उसे छोड़ने स्टेशन गए। सीनू बोला : ''वहाँ ज्यादा मत ठहरना। और इस बार 'बिन्स' को मत भूलना।''

अगली सुबह ट्रेन के मद्रास एगमोर स्टेशन पहुँचने पर चंद्रन ने खिड़की से बाहर देखा तो प्लेटफार्म पर उसके चाचा दिखाई दिए। वे चश्मा लगाये, लगभग चालीस वर्ष के, खिचड़ी बालों वाले, कुछ मोटे व हँसमुख व्यक्ति थे। वे आढ़त का काम करने वाले काफी व्यस्त व्यवसायी थे और शहर के सभी महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों को जानते थे। उसके ट्रेन से उतरते ही चाचा बोले : इस बार मैं खुद तुम्हें लेने आया हूँ ताकि तुम पहले की तरह भाग न निकलो।

चंद्रन ने शर्म से लाल होते हुए कहा : ''अप्पा ने आपके लिए स्कार्फ भेजा है।''

तो आखिर उन्होने उस स्कार्फ का मोह छोड ही दिया वही है या कोई दूसरा?''

"गहरे नीले रंग की ऊन का।"

"तब तो वही है। वे बरसों से मुझे वह स्कार्फ देने से कतरा रहे थे।"

एक कुली ने चंद्रन का सामान ले जाकर बाहर खड़ी हुई कार में रख दिया। चंद्रन चाचा के साथ अगली सीट पर बैठा।

"यह कार तुम्हें कैसी लगी?" चाचा ने पूछा।

"काफी अच्छी है।"

"यह मैंने नई ली है, अपनी पुरानी एसेक्स के बदले में।"

"ओह!" चंद्रन यह देख कर खुश हुआ कि उसके चाचा उससे समवयस्क की भाँति बात कर रहे थे, पहले की भाँति चिढ़ा नहीं रहे थे। पहले चद्रन यथासंभव उनसे दूर रहने की कोशिश करता था, किंतु अब वे उसे काफी ठीक लग रहे थे।

चाचा ने उससे पूछा कि उसने इंग्लैण्ड जाने का विचार क्यों त्याग दिया। वे कार चलाते हुए लगातार बोलते चले जा रहे थे। वे कभी ट्राम कारों का रास्ता काटते, कभी पैदल चलने वालों को पुकार कर सावधान करते और कभी कार को अचानक तेजी से मोड़ लेते।

चंद्रन के चाचा का बँगला लुज़ चर्च रोड पर था। जब वे घर पहुँचे तो उनकी पत्नी व बच्चे (चंद्रन की उम्र का एक लड़का और एक लड़की) बरामदे में खड़े हुए थे।

"चंद्रन कितना लंबा हो गया है!" चाची ने कहा। सुन कर चंद्रन को अच्छा लगा।

"चाची, माँ ने आपके लिए सब्जियाँ भेजी हैं," उसने कहा और फिर अपने चचेरे भाई-बहन की ओर मुड़ा। उसके समवयस्क चचेरे भाई ने मुस्करा कर कहा : "पिछली बार मैं स्टेशन आया था।"

"ओह," चंद्रन ने कहा और शर्म से लाल हो गया। लोग उसकी पिछली यात्रा को भूल क्यों नहीं जाते, उसने सोचा।

"राजू, चंद्रन का सामान अपने कमरे में ले जाओ और फिर उसे स्नानघर दिखा दो," चाचा ने अपने बेटे से कहा।

राजू उसे अपने कमरे में ले गया। राजू ने अपना कोट उतार दिया। राजू फिर बोला: "मैं पिछली बार स्टेशन गया था। मैंने प्लेटफार्म पर तुम्हें बहुत ढूँढा।"

चद्रन ने उसकी बात पर ध्यान न देते हुए अपना बक्सा खोल कर तौलिया व साबुन निकाला और कुछ कठोरता से कहा : "मुझे बाथरूम दिखा दो।"

जब चंद्रन अपने बालों में कंघी कर रहा था तो उसकी चाची घुँघराले बाल व बड़ी-बड़ी आँखों वाली एक नन्ही बच्ची को लेकर आईं और बोलीं : "तुमने इस लड़की को देखा? अभी-अभी सो कर उठी है। तुम्हारे पास आने की जल्दी मचा रही थी।"

चंद्रन ने उसका गाल सहला कर पूछा, "इसका नाम क्या है?"

"कमला," चाची ने जवाब दिया।

चंद्रन ने बच्ची से बात करने की कोशिश की पर वह अजनबी को देख कर रोने लगी। चंद्रन की समझ में नहीं आया कि क्या करे। चाची बच्ची को ले जाती हुई बोलीं : "नये लोगों को देख कर ऐसे ही करती है। तुम्हें थोड़ा जानने लगेगी तो ठीक हो जायेगी।

भोजन के बाद ग्यारह बजे चंद्रन के चाचा उसे कार में लेकर निकले। लिंग चेट्टी मार्ग पर एक चार मंजिल की इमारत के सामने जाकर कार रुकी। अपने चाचा के पीछे-पीछे सीढ़ियाँ चढ़ता हुआ चंद्रन एक बरामदे में खुलने वाले दरवाजे मे से होकर दफ्तर के कमरे में पहुँचा। वहाँ फाइलों से लदी हुई एक मेज के सामने एक आदमी बैठा हुआ था। चाचा ने और उस व्यक्ति ने एक-दूसरे को अभिवादन किया। चाचा ने परिचय करवाते हुए कहा : "यह मेरा भतीजा है जिसके बारे में मैंने तुमसे बात की थी और ये हैं मिस्टर एस.टी. मुरुगेशम, इंग्लैडिया लिमिटेड के जनरल मैनेजर।

चंद्रन ने मेज के पार हाथ बढ़ा कर कहा : "आपसे मिल कर खुशी हुई, सर।"

"कुर्सी ले लो," मुरुगेशम ने कहा। मुरुगेशम से कुछ देर बातचीत करके चाचा उठ गए, बोले : "अब मुझे जाना होगा। कुछ रेलवे वाले लोग बारह बजे मेरे दफ्तर में आने वाले हैं। तो तुम इस लड़के की व्यवस्था कर रहे हो?"

"मैं पूरी कोशिश करूँगा।"

"उससे काम नहीं चलेगा। तुम्हें इसका पक्का इंतजाम करना है। यह ग्रेजुएट है, एक बड़े सरकारी पेंशनयाफ्ता अफसर का बेटा है। जो भी जमानत चाहिए, देगा। तुम्हें इसे लगाना ही है। इस अखबार की खातिर इसने अपना इंग्लैण्ड जाने का कार्यक्रम तक रद्द कर दिया। --इसे अपने साथ रखो। वापसी में मैं इसे ले जाऊँगा," कह कर चाचा चले गए।

मुरुगेशम ने घड़ी देख कर चद्रन से कहा : हम लोग दो बजे चलेंगे। आशा है आधे घंटे इंतजार करने में तुम्हें कोई आपत्ति नहीं होगी?"

"बिल्कुल नहीं, आप इतमीनान से अपना काम कीजिए सर," चंद्रन ने कहा और कुर्सी पर पीछे सरक कर आराम से बैठ गया। मुरुगेशम ने ढेर से कागजों पर हस्ताक्षर करके उन्हें एक ओर सरका दिया और मेज पर रखे टेलीफोन द्वारा कहा : "शिपिंग (जहाज परिवहन)," और एक मिनट ठहर कर फिर कहा, "दामोदर्स को सूचित करो कि हम 'वॉटर वे' को गुरुवार आधी रात से पहले लोड नहीं कर सकते। गुरुवार मध्यरात्रि। अब भी बैग आ रहे हैं। शनिवार की शाम से पहले जहाज रवाना नहीं हो सकेगा।--ठीक है। धन्यवाद।"

चंद्रन मंत्रमुग्ध सा यह सब देखता रहा। किसी कार्यरत व्यवसायी को देखने का उसके लिए यह पहला अवसर था। उसके मन में मुरुगेशम के लिए प्रशंसा का भाव उत्पन्न हुआ। इतने दुबले-पतले से आदमी के हाथों में कितने बड़े-बड़े व महत्त्वपूर्ण कामों की बागडोर थी! शायद जहाज रवाना होने के लिए उसके एक शब्द की, एक आदेश की प्रतीक्षा कर रहे थे। उसे इतनी व्यावसायिक जानकारी कैसे हुई होगी? उसकी कमाई कितनी होगी? दस हजार? इतने पैसे का वह क्या करता होगा? उसे तो इतना व्यस्त रहना पड़ता है। इतना सारा पैसा खर्च करने व जीवन का आनंद लेने के लिए उसे समय कब मिलता होगा? --इतने में टेलीफोन की घंटी बज उठी। मुरुगेशम ने फोन पर कहा : "यह ठीक है। उनसे कहो कि उन्हें समय पर नोटिस मिल जायेगा। धन्यवाद!" एक असिस्टेन्ट ने कुछ पत्र लाकर उसके सामने रख दिए। मुरुगेशम ने उन पर कुछ लिख कर वे पत्र वापस असिस्टेन्ट को दे दिए और कहा : "मैं लगभग आधे घंटे के लिए बाहर जा रहा हूँ। यदि इस बीच में कोई जरूरी टेलीफोन आये तो मुझे 'डेली मेसेन्जर' के दफ्तर में फोन कर देना। पर वहाँ किसी को भेजना मत। और केवल बहुत जरूरी होने पर ही फोन करना।" उन्होंने उठ कर अपनी फ़र की बनी हुई टोपी उठाई। चंद्रन उनकी वेशभूषा की सादगी से प्रभावित हुआ। उन्होंने सिर्फ एक धोती, सिल्क का लंबा कोट और काले रंग की फ़र की टोपी पहन रखी थी।

वे चंद्रन के साथ उस इमारत के बाहर निकल कर एक कार में बैठ गये। लगभग पंद्रह मिनट में वे लोग माउन्ट रोड पर बने एक नये, सफेद भवन के सामने पहुँच कर कार से उतर गए। उस इमारत पर बड़े-बड़े अक्षरों में 'डेली मेसेन्जर' का बोर्ड लगा हुआ था। वे लोग लिफ्ट द्वारा ऊपर पहुँचे और अनेकों बड़े-बड़े कक्षों को, जिनमें कई मेजें लगी हुई थीं और लोग झुके हुए काम कर रहे थे, पार करके तरह-तरह के घुमावदार रास्तों में होते हुए आगे बढते गए। मुरुगेशम ने एक लाल

पर्दे वाले दरवाजे को ठेल कर अदर प्रवेश किया फाइलो से भरी हुई मेज के सम्मुख एक व्यक्ति बैठा हुआ था। हैलो मुरुगेशम, उस व्यक्ति ने कहा। वह एक गोरा, गंजा आदमी था जिसने बिना रिम का चश्मा लगा रखा था। उसके सिर के ऊपर पूरी रफ्तार से पंखा चल रहा था।

"मैं इस लड़के को तुमसे मिलाने के लिए लाया हूँ," मुरुगेशम ने कहा।

गंजे आदमी ने उदासीनता से चंद्रन की ओर देखा और मुरुगेशम से कहा : "तुम कल क्लब में नहीं दिखाई दिए।"

"मैं आ नहीं सका। मुझे घाट पर जाना था।"

उसी समय एक चपरासी एक परिचय-कार्ड लेकर आया। गंजे आदमी ने उस पर एक नजर डाल कर कहा: "आज और इंटरव्यू नहीं होंगे। कल डेढ़ बजे।"

मुरुगेशम ने मेज की दूसरी ओर जाकर गंजे आदमी से फुसफुसा कर कुछ बात की। मुरुगेशम उस गंजे आदमी की घूमने वाली कुर्सी के हत्थे पर बैठ कर बात कर रहे थे। चंद्रन से किसी ने बैठने के लिए नहीं कहा था, अत: वह हाथों को पीछे बाँधे हुए दीवार की ओर देखता हुआ खड़ा रहा। गंजे आदमी ने अचानक चंद्रन की ओर देख कर पूछा :

"तुम्हारे पिता का नाम?"

"एच.सी. वेंकटाचल अय्यर।"

"क्या काम करते थे?"

"डिस्ट्रिक्ट जज थे।"

"अच्छा," कह कर गंजा आदमी मुरुगेशम की ओर मुड़ कर बोला : "मुझे मालूम नहीं वे लोग एजेन्सियों के मामले में क्या कर रहे हैं। मैं शंकरन से पूछ कर तुम्हे बाद में बताऊँगा।"

मुरुगेशम ने असंतोष व्यक्त करते हुए कहा : "ऐसे तो काम नहीं चलेगा। शंकरन को बुला कर बता दो कि क्या करना है। तुम तो उसे आदेश दे सकते हो।" वे कुर्सी का हत्था छोड़ कर दूसरी कुर्सी पर आ बैठे और बोले : "यह ग्रेजुएट है; अच्छे परिवार का है; जितनी जमानत चाहो, देने को तैयार है। इसने तुम्हारे पेपर की ही खातिर इंग्लैण्ड जाने का इरादा छोड़ दिया है।"

"इंग्लैण्ड क्यों जाना चाहते थे?" गंजे सज्जन ने चंद्रन की ओर मुड़ कर पूछा।

"डॉक्टरेट करना चाहता था।"

"कहाँ पर?"

लदन यूनिवर्सिटी मे

"किस विषय में?"

"अर्थशास्त्र में या राजनीतिशास्त्र में," चंद्रन ने उत्तर दिया। विषय के बारे में उसने इससे पूर्व नहीं सोचा था।

"हमारे पेपर में काम क्यों करना चाहते हो?"

"क्योंकि वह मुझे पसंद है, सर।"

"क्या? पेपर या एजेन्सी?"

"दोनों," चंद्रन ने कहा।

"यदि तुम्हें किसी जिले का कार्य सौंप दिया जाये तो क्या तुम्हें विश्वास है कि तुम ग्राहक-संख्या में वृद्धि कर सकोगे?"

"जी सर।"

"कितनी वृद्धि कर सकते हो?"

चंद्रन ने बताया कि वह ग्राहक-संख्या को 5,000 तक पहुँचा सकता है। अपनी बात की पुष्टि के लिए उसने मालगुडी क्षेत्र का संदर्भ देते हुए वहाँ की जनसंख्या में जितने लोग शिक्षित थे और एक आना रोज अखबार पर खर्च कर सकते थे उनकी संख्या बताई।

"प्रस्ताव तर्कसंगत और विश्वसनीय प्रतीत होता है," मुरुगेशम ने कहा।

गंजे सज्जन ने फीकी मुस्कान के साथ कहा, "आशावादी होना तो अच्छा ही है।"

"आशावादी हो या न हो, इसे एक अवसर तो दो," मुरुगेशम ने कहा।

"मुश्किल यह है कि इन बातों में सामान्यतः मैं दखल नहीं देता। संबंधित मैनेजर लोग ही यह सब देखते हैं। मुझे जरा भी मालूम नहीं है कि वे इस विषय मे क्या कर रहे हैं।"

"अरे बाबा," मुरुगेशन ने अधीर होते हुए कहा, "कभी-कभी यह नियम तोड कर तुम उन्हें आदेश दे सकते हो। इसमें कोई हर्ज नहीं है। मेरी खातिर ही सही। मुझे वापस अपने ऑफिस जाना है। जल्दी करो। शंकरन को बुलवाओ।"

मुरुगेशम ने घंटी बजा दी। एक चपरासी आया। मुरुगेशम ने उससे कहा · "मिस्टर शंकरन को बुलाओ।"

एक आदमी त्यौरियाँ चढ़ाए हुए आया। उसने सिर हिला कर अभिवादन किया और सीधा जाकर कुर्सी पर बैठ गया।

गंजे व्यक्ति ने पूछा क्या दक्षिण वाले जिलो के लिए कोई जगह खाली है?

"संवाददाताओं के लिए? नहीं।"

"मेरा मतलब एजेंसियों से है।"

"हाँ, कुछ स्थान ऐसे हैं जहाँ हम वर्तमान एजेन्टों को बदलना चाहते हैं।"

"तुम्हारा तो मालगुडी है, है न?" गंजे आदमी ने चंद्रन की ओर मुड़ कर पूछा।

"जी, सर।"

"मेरे विचार से यह उन स्थानों में से एक है," शंकरन ने कहा। गंजे सज्जन ने शंकरन से कहा : "मुझे इस जगह का कुछ विवरण चाहिए।"

शंकरन ने घंटी का बटन दबाया और एक कागज के टुकड़े पर कुछ लिख कर चपरासी को देते हुए कहा : "यह शास्त्री के पास ले जाओ।" चपरासी चला गया और कुछ मिनटों के बाद एक वृद्ध आदमी को बुला लाया जिसके हाथ में एक रजिस्टर था। उस आदमी ने रजिस्टर खोल कर शंकरन के सामने मेज पर रख दिया और अदब से एक ओर खड़ा हो गया। तभी मुरुगेशम ने कहा: "बैठ जाइये मिस्टर चंद्रन।"

"हाँ, हाँ, आप खड़े क्यों हैं?" गंजे सज्जन ने कहा।

चंद्रन एक कुर्सी पर बैठ गया और गंजे व्यक्ति, शंकरन, शास्त्री तथा मुरुगेशम की ओर देखता हुआ सोचने लगा : "मेरी जिंदगी इन लोगों के हाथों में है। मेरे भाग्य का फैसला पूरी तरह इन अजनबियों के हाथों में है। आखिर ऐसा क्यों है?"

शंकरन ने रजिस्टर में देखते हुए कहा : "विवरण यह दिया हुआ है, सर। मालगुडी एजेन्सी : वर्तमान एजेन्ट पुराने शासन के समय से ही चला आ रहा है। दो साल पहले तक अधिकतम ग्राहक-संख्या 35 थी; उसके बाद 25 बनी रही। अब तक इस एजेन्सी के लिए ग्यारह आवेदन-पत्र आ चुके हैं जिनमें से एक पुराने एजेन्ट का (तरक्की का वादा करते हुए) भी है। जिले में अखबार पढ़ने वाली कुल जनसंख्या 7,000 है।"

"धन्यवाद," गंजे सज्जन ने कहा, "इसका निर्णय आप कब तक करेंगे?"

"पहली तारीख तक इंतजार कर लेता हूँ।"

"देर करने की क्या आवश्यकता है? अगर आपको कोई आपत्ति न हो तो एजेन्सी इनको दे दीजिए। ये तुरंत जमानत देकर काम शुरू करने के लिए तैयार हैं।"

शंकरन ने चंद्रन की ओर देखा और गंजे सज्जन से कहा : "कुछ और भी आवेदन-पत्र आ सकते हैं, सर।"

उन्हें फाइल में रख लीजिए

"बहुत अच्छा, सर," कह कर शंकरन उठ गये और चंद्रन से बोले : "मेरे साथ आइये।"

शंकरन चंद्रन को एक हॉल में ले गये जहाँ कई मेजें लगी हुई थीं और लोग काम कर रहे थे। मेजों के किनारों से सरकते हुए गैली प्रूफ फर्श पर गिरते जा रहे थे। वे दोनों हॉल के सबसे दूर वाले कोने में जाकर बैठ गए। शंकरन ने 'डेली मेसेन्जर' के बारे में एक संक्षिप्त भाषण ही दे डाला : "'डेली मेसेन्जर' अब वह पुराना पेपर नहीं रहा जो एक-दो साल पहले तक था। इसकी कुल ग्राहक-संख्या एक साल से भी कम समय में 8,000 से 30,000 हो गई है। इसका श्रेय प्रचार-विभाग तथा संपादक-विभाग, दोनों को जाता है, उसी तरह जैसे चलने के लिए दोनों टाँगों की जरूरत होती है।" ऑफिस के तथा नीचे चलते हुए प्रेस के शोर के बावजूद शंकरन आधे घंटे तक भाषण देते रहे। अंत में भाषण के उपसंहार के रूप में उन्होंने चंद्रन को धमकी दी कि यदि नियुक्ति की तारीख से छः महीने के अंदर वास्तविक प्रगति नहीं दिखाई तो एजेन्सी उससे छीन कर किसी और को दे दी जायेगी।

मालगुडी लौट कर चंद्रन ने तेजी से अपना कार्य प्रारम्भ कर दिया। उसने सात रुपये महीने किराए पर मार्केट रोड पर एक छोटा कमरा लिया और उसके दरवाजे पर एक साइन बोर्ड लटका दिया जिस पर बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा था ''द डेली मेसेन्जर (स्थानीय कार्यालय)''। ग्यारह बजे से पाँच बजे तक अपने इस ऑफिस मे बैठ कर उसने संभावित ग्राहकों की सूची तैयार की। कम से कम भी 500 तो हर स्थिति में थे ही। यदि वह संपूर्ण जिले का दौरा करे तो कम से कम 500 तो और हो ही जायेंगे और छः महीने के लिए एक हजार ग्राहक पर्याप्त माने जा सकते हैं, उसने सोचा।

उसने एक कागज लिया और प्रचार के लिए अपनाई जाने वाली प्रक्रिया को उसमें नोट करने लगा। वह विचार में डूबा हुआ कभी अपने पेन का पिछला हिस्सा चबाने लगता, तो कभी मार्केट रोड पर जाने वाले टैफिक को देखने लगता। चार दिन तक इसी प्रकार विचारमग्न रहने के बाद उसने अपनी पूरी प्रचार-योजना तैयार कर ही ली। उसने नोट किया : ''बुलेटिन; नमूना; इंटरव्यू; अग्रिम।'' यानी योजना यह थी कि सर्वप्रथम तो वह सूची वाले व्यक्तियों को अपना बुलेटिन भेजेगा, फिर दो दिन तक उन्हें नमूने के तौर पर अखबार की प्रतियाँ भेजी जायेंगी, इसके बाद वह खुद जाकर उनसे मुलाकात करेगा और अंत में उनसे एक महीने का ग्राहक-शुल्क अग्रिम ले लेगा।

इसके बाद उसने चार चरणों में बुलेटिन की योजना बनाई : सूचना; स्पष्टीकरण आग्रह; और दबाव।

बुलेटिन संख्या 1 में कहा गया : ''मिस्टर एच.वी. चंद्रन, बी.ए. आपको परिवार व मित्रगण सहित सी 96 मार्केट रोड पर सादर आमत्रित करते हैं जहाँ उन्होंने मद्रास

था : "'डेली मेसेन्जर' की ग्राहकी के लिए आपके पास पाँच कारण हैं: पहली बात तो यह कि प्रेसीडेन्सी में ही इसके तीस हजार ग्राहक हैं और 30,000 व्यक्ति प्रतिदिन गलती नहीं कर सकते। रोजाना प्रभात काल में घर के फर्श पर आकर गिरने वाले अखबार के स्वर से आपकी आँख खुले, यह आपके हर दिवस का अत्यंत शुभ व सुखद श्रीगणेश होगा। अखबार रोजाना आपके घर की सामने वाली खिडकी से अंदर डाल दिया जायेगा। इसमें आपको देश-विदेश के, सारी दुनिया के समाचार मिलेंगे। चाहे मालगुडी की नगर परिषद् द्वारा पास किया गया प्रस्ताव हो अथवा आइसलैंड में हुई राजनीतिक हत्या, हर समाचार का एकदम ताजा और यथार्थ विवरण आपको इस पेपर में मिलेगा। विस्तृत जानकारी संस्कृति की पहचान है, और 'डेली 'मेसेन्जर' से आपको राजनीति, अर्थव्यवस्था, खेलकूद, साहित्य आदि की और इसके पत्रिका परिशिष्ट से मानव-जीवन के अन्य क्षेत्रों से सम्बंधित सर्वांगीण जानकारी प्राप्त होगी। इसकी रद्दी भी यदि बेचेंगे तो आपके पैसे वसूल हो जायेंगे। यदि आपको यह अखबार पसन्द न आये तो आप अपनी प्रति एक रुपया मन के हिसाब से किराने वाले को बेच सकते हैं।"

बुलेटिन संख्या 3 में लिखा हुआ था: "अपने राष्ट्र की संतान होने के नाते 'डेली मेसेन्जर' के ग्राहक बनना आपका कर्त्तव्य है। उस हर आने से, जो आप इस पर खर्च करते हैं, आप भारतीय उद्योग रूपी दुर्बल शिशु को पोषण प्रदान करते हैं। अपने देश के आर्थिक व राजनीतिक उद्धार के लिए आपको भी अंशदान करना है।"

बुलेटिन संख्या 4 में केवल यह कहा गया था : "अनिश्चय में फँसे हुए लोगों को। अब भी देर नहीं हुई है। तुरंत सी-96 मार्केट रोड पहुँच कर अपनी प्रति प्राप्त कर लें। या फिर वह आपके घर पहुँचा दी जाये? जो आज किया जा सकता है उसे कल पर न टालें।"

यह सब उसने 'टूथ प्रिंटिंग वर्क्स' को, जो उसके कार्यालय से चार दरवाजे छोड़ कर ही था, छापने के लिए दे दिया। यह प्रेस भी उसके ऑफिस की ही तरह एक कमरे में चल रहा था और इसमें मालिक के अतिरिक्त पाँव से चलने वाला यंत्र, एक टाइप बोर्ड तथा एक कम्पोज़िटर था।

प्रेस वाले ने लगभग एक सप्ताह में बुलेटिन छाप कर दिए। चंद्रन ने वे चारों बुलेटिन रोज एक-एक करके क्रम से अपनी बनाई हुई सूची के अनुसार लोगों को भेज दिये। उसने अखबार बाँटने के लिए तीन छोटे लड़के नियुक्त कर लिए थे और उन्हें तीन सस्ती-सी साइकिलें भी दिला दी थीं। उसने पूरे मालगुडी शहर को तीन भागों में बाँट कर लडकों में से हर एक को एक एक भाग का जिम्मा दे दिया था

इसके बाद उसने एक छोटा बैण्ड किराए पर लेकर शहर की खास खास सडको पर जुलूस निकलवाया, जिसमें बड़े–बड़े इश्तिहार और पोस्टर, जिनमें 'डेली मेसेन्जर' की प्रशंसा की गई थी, प्रदर्शित किए गए।

फिर उसने 'डेली मेसेन्जर' की सौ प्रतियाँ रोजाना नमूने के तौर पर उन लोगों को भिजवाईं जिन्हें बुलेटिन भेजे गए थे।

इस सारी तैयारी के बाद वह खुद हर सुबह ढंग से तैयार होकर अपनी साइकिल पर जाकर एक-एक क्षेत्र के हिसाब से ग्राहकों से मुलाकात करने लगा। उसने अनुमान लगाया कि यदि वह सुबह आठ बजे से शाम के आठ बजे तक काम करे और हर व्यक्ति को बीस मिनट दे तो एक दिन में छत्तीस व्यक्तियों से मुलाकात कर सकता है।

वह जिस घर में इंटरव्यू के लिए जाता वहाँ अपना कार्ड अंदर भेज देता और उस व्यक्ति के आते ही अभिवादन करके पूछता : "आपको हमारा समाचार पत्र कैसा लगा?" वह शीघ्र ही एक कुशल विक्रेता बन गया। अपने सामने वाले व्यक्ति को दस मिनट में पहचान कर उसका वर्गीकरण कर देता था। उसने इन लोगों को चार वर्गों में बाँट रखा था: (1) वे लोग जो ताजा समाचार पढ़ना पसंद करते थे और उन पर एक आना रोज खर्च कर सकते थे। (2) वे लोग जो पड़ोसियों से पुराने अखबार माँग कर पढ़ते थे और बासी खबरों पर ही संतोष कर लेते थे। (3) वे लोग जो वाचनालय में जाकर समाचार पत्र पढ़ते थे। (4) जिन्हें बार–बार मिल कर अखबार खरीदने के लिए बाध्य किया जा सकता था। चंद्रन इनमें से पहले और चौथे वर्ग के लोगों से काफी बातचीत करता था किंतु दूसरे और तीसरे वर्ग के लोगों पर कुछ सेकंड से अधिक बरबाद नहीं करता था।

वह क्लबों व वाचनालयों के सचिवों, स्कूलों के हेडमास्टरों, वकीलों, डॉक्टरों, व्यापारियों, और भू-स्वामियों से तथा शहर, घर, दफ्तर और क्लब में उपलब्ध हर शिक्षित व्यक्ति से जाकर मिलता था। यदि कभी उसके पास समय का अभाव होता तो वह कुछ स्थानों पर मोहन को भेज देता था।

कुछ ही सप्ताहों के अंदर उसका एक निश्चित दैनिक कार्यक्रम बन गया। हर सुबह वह पाँच बजे उठ जाता और साढ़े पाँच बजे मद्रास से आने वाली ट्रेन के लिए स्टेशन पहुँच जाता। ट्रेन से अखबारों के बंडल लेकर वह उन्हें साइकिल वाले लडकों के हाथ अलग-अलग स्थानों पर भिजवा देता। उसके बाद वह घर लौट आता। ग्यारह बजे वह दफ्तर जाता और वहाँ पाँच बजे तक ठहरता। उस समय तक मोहन भी अपने दैनिक समाचार डाक में डालने के बाद उसके पास आ जाता। कभी-कभी मोहन भी नये ग्राहक बनाने में उसकी मदद करता। वह कहता : "आज मैंने

एक बडी रोचक अपराध सबन्धी घटना का विवरण भेजा है वह कल के पेपर मे विस्तार से छपेगा। ' ज्यो ही वह अखबार आता, चद्रन सबधित व्यक्तियो के पास ले जाकर उसे दिखाता और उनसे एक महीने का ग्राहक-शुल्क प्राप्त कर लेता या कम से कम कुछ प्रतियाँ तो उन्हें बेच ही देता। कुछ लोग तो अखबार में अपने नाम छपे देख कर इतने प्रसन्न होते कि वे एक साथ उसकी एक दर्जन प्रतियाँ खरीद लेते। इस तरह भी औसतन आधा दर्जन प्रतियाँ तो राजाना बिक ही जाती थीं। मोहन समाचार पत्र के लिए विविध प्रकार की घटनाओं के विवरण भेजता था, जैसे आबकारी संबंधी छापे, फुटबॉल मैच, आकस्मिक दुर्घटनाएँ, पुलिस के थानेदारों द्वारा की गई दिलचस्प गिरफ्तारियाँ, हत्याएँ, आत्महत्याएँ, चोरी की वारदातें, अलबर्ट कॉलेज यूनियन में होने वाले भाषण तथा वार्षिकोत्सव, चाय पार्टियाँ और विदाई समारोह की दावतें आदि।

'डेली मेसेन्जर' के ही कारण वह दो साल बाद अपने पुराने कॉलेज गया। मोहन ने इस पेपर को खरीदने के लिए यूनियन और कॉलेज के आदेश प्राप्त कर लिए थे। एक दिन तीनों लड़कों में से एक ने आकर अचानक चंद्रन को बताया : "सर, कॉलेज के क्लर्क ने कहा है कि उन्हें कल से पेपर की जरूरत नहीं है।"

"क्यों?"

"पता नहीं, सर। यूनियन वालों ने भी यही बात कही है।"

चंद्रन खुद कॉलेज गया। यूनियन क्लर्क ने उसे देखते ही पहचान लिया और पूछा : "कैसे हैं आप, मिस्टर चंद्रन?"

"मेरे अखबार बाँटने वाले लड़के ने बताया कि आप लोगों ने अखबार बंद कर दिया है। क्या आपको कारण मालूम है?"

"मुझे तो मालूम नहीं, सर। यह तो अध्यक्ष का आदेश है।"

"इस साल अध्यक्ष कौन हैं?"

"इतिहास के राघवाचार," क्लर्क ने कहा।

चंद्रन यूनियन से निकल कर कॉलेज के दक्षिण भाग में, जहाँ प्रोफेसर का कमरा था, पहुँचा। राघवाचार अपने कमरे में ही एक छोटी-सी क्लास ले रहे थे। चंद्रन घटा समाप्त होने की प्रतीक्षा में फिर से यूनियन की ओर लौट गया। वह डिबेट वाले हॉल की गैलरी में बैठ कर प्रतीक्षा करने लगा। उसकी ओर किसी का ध्यान भी नहीं गया। बीसियों बार वह इसी हॉल में विषय-प्रवर्तक बन कर बोला था, सबके आकर्षण का केन्द्र रहा था। उन दिनों जब वह अपने खाली समय में इस तरह आ बैठता तो कितने लोग आकर उसे घेर लेते थे, वे लोग वहाँ किस तरह धूम मचाते थे मानो वहाँ के

मालिक हो और वहां कभी-कभी आने वाले अजनबियों को, जो डरते हुए से इधर-उधर घूमा करते थे, किस तरह दया की दृष्टि से देखते थे!

उसने सोचा : "इनमें से एक भी मेरे साथ का नहीं है। सब नये चेहरे हैं, पूरी तरह अजनबी हैं। जब हम कॉलेज में पढ़ते थे तब ये लोग शायद हाई स्कूल में होंगे। --रामू, रामू! मैं अक्सर रामू को खोजता हुआ इस जगह आया करता था। यदि कोई क्लास या भाषण उबाने वाला होने की संभावना होती तो रामू उसे छोड़ कर यहाँ या वाचनालय में बैठ कर उपन्यास आदि पढ़ना अधिक पंसद करता था। वह काफी अच्छा मित्र था। पर शायद लोग बदल जाते हैं। रामू के साथ समय कितनी जल्दी बीत जाता था। दुनिया की हर अच्छी चीज की प्रशंसा के लिए उसके पास शब्द होते थे।--यदि उसे अपने मित्र से सच्चा स्नेह होता तो वह पत्र लिखता, विशेषकर नौकरी मिलने की शुभ सूचना तो जरूर देता। दृष्टि से दूर, दिल से दूर—यह तो मित्रता का लक्षण नहीं है। दुनिया में मित्रता नाम की कोई चीज नहीं है।"

चंद्रन गैलरी से उठ कर दीवार पर लगे कुछ फोटो देखने लगा। आपकी सब रुचियों, खुशियों, तकलीफों, आशाओं, संपर्कों और अनुभव का सार होते हैं ये सामूहिक फोटो, चंद्रन ने सोचा। जिन दिनों आप कॉलेज में होते हैं, आप समझते हैं कि आपका व्यक्तित्व कॉलेज में सबसे अलग प्रकार का है और अलग ही रहेगा। आपके जैसा कॉलेज में और कोई नहीं आयेगा। और आपका अंत होता है एक ग्रूप-फ़ोटो में। ये जो हँसते हुए लड़के इधर-उधर दिखाई दे रहे हैं, यह नहीं जानते कि कुछ समय बाद ग्रूप-फ़ोटो में कैद होकर रह जायेंगे और उस फ़ोटो के अतिरिक्त कॉलेज के लिए इनका कोई अस्तित्व नहीं रह जायेगा।--वह फ़ोटो 1931 वाले छात्र-संघ का था। वह पंजे के बल खड़ा होकर फ़ोटो वाले चेहरों को ध्यान से देखने लगा। कई चेहरे परिचित लग रहे थे किंतु उन सबके नाम याद नहीं रहे थे। ये सब अब कहाँ पर थे? चार साल तक उसकी कक्षा में दो सौ लड़के थे, किंतु उसकी बहुत कम से मुलाकात होती थी। कहाँ गये वे सब? न जाने कहाँ बिखर गए। शायद वे अब व्यापारी, वकील, हत्यारे, थानेदार, क्लर्क या अफसर हों, किसे पता है? उनमें से कुछ इंग्लैण्ड चले गये हों, कुछ विवाहित और बच्चों के बाप हों, कुछ खेती करने लगे हों, मृत, भूखे और बेरोजगार हों। सब जिंदगी के चंगुल में फँसे हैं—अजगर की कुंडली में जकड़े हुए भैंसे की भाँति।--

फ़ोटो में क्रांतिकारी वीरास्वामी था। बाद में वह केवल एक बार सरयू-तट पर मिला, मानो कोई मृत व्यक्ति क्षण भर के लिए जीवित हो उठा हो। उसने किसी ब्रिगेड और क्रांति और प्राकृतिक चिकित्सा के बारे में बात की थी। न जाने अब कहाँ होगा, क्या करता होगा। ---फोटो में आगे की पंक्ति में बैठे हुए लोगों मे

यूनियन का सचिव नटेशन था जो हमेशा समस्याओं से घिरा रहता था, हमेशा झींकता व मीटिंग आयोजित करता रहता था। चंद्रन को ध्यान आया कि परीक्षा के बाद से उसे नटेशन की कोई सूचना नहीं मिली थी। उसे यह तक पता नहीं था कि नटेशन देश के किस भाग का था। वह बहुत अच्छा मित्र था, सहायता करने वाला और साथ निभाने वाला। यदि उसकी मदद नहीं होती तो इतिहास-एसोसिएशन कुछ भी काम नहीं कर पाता। वह अब कहाँ था? कहीं उसने आत्महत्या तो नहीं कर ली? क्या समाचार-पत्रों में यह विज्ञप्ति दी जा सकती है: "नटेश, मेरे मित्र, तुम कहाँ हो?"

घंटा बजा। चंद्रन जल्दी से राघवाचार से मिलने के लिए निकला। उसने कॉलेज के बरामदों में चलते हुए अनेकों छात्रों को देखा। बीसियों नए चेहरे। "कम से कम हमारे जमाने के छात्रों की कद-काठी इनसे अच्छी थी। ये सारे लड़के नाटे और कमजोर से दिखाई देते हैं," उसने सोचा। उसने कुछ को पहचाना जो उसके जमाने मे कॉलेज में सबसे जूनियर थे, किंतु अब सीनियर कक्षा के छात्र थे। उन्होंने मुस्करा कर उसका अभिवादन किया तो उसे बड़ी खुशी हुई। चंद्रन राघवाचार के कमरे मे पहुँचा। वे अपनी कुर्सी पर बैठे हुए थे और चश्मे को वापस उसके केस में रख रहे थे।

चंद्रन ने उनका अभिवादन किया। प्रोफेसर अब उतने चुस्त दिखाई नहीं दे रहे थे। उन दिनों वह उनसे कितना डरता था, चंद्रन ने सोचा। प्रोफेसर ने केस से निकाल कर चश्मा लगाया और चंद्रन का निरीक्षण किया किंतु उसे पहचान नहीं पाए।

उन्होंने उससे बैठने के लिए कहा और फिर से उसे पहचानने की कोशिश की।

"आपने मुझे पहचाना नहीं, सर?"

"क्या तुम कभी इस कॉलेज में थे?"

"जी, सर, 1931 में। मैं हिस्ट्री एसोसिएशन का पहला सेक्रेटरी था। मेरा नाम एच.वी. चंद्रन है।"

"एच.वी. चंद्रन," नाम को दोहराते और सोचते हुए प्रोफेसर ने कहा : "हाँ, हाँ। मुझे याद आ गया। तुम कैसे हो? अब क्या कर रहे हो? तुम जानते हो, हर साल लगभग दो सौ छात्र पास होकर कॉलेज से चले जाते हैं। कभी-कभी याद रखना कठिन हो जाता है।"

चंद्रन ने कभी नहीं सोचा था कि राघवाचार इतनी सौम्यता से भी बात कर सकते हैं। उन दिनों उनकी आवाज सुनते ही कक्षाओं में कैसी चुप्पी छा जाती थी।

"तुम कर क्या रहे हो, चद्रन?"

चंद्रन ने उन्हें अपना काम और वहाँ आने का उद्देश्य बताया।

"यूनियंन क्लर्क को बुलाओ", प्रोफेसर ने कहा। क्लर्क के आने पर उन्होने पूछा : "तुमने 'डेली मेसेन्जर' क्यों बंद कर दिया?"

"अध्यक्ष महोदय का आदेश था कि कुछ समाचार पत्र बंद कर दिए जायें।"

"और तुमने इसके लिए 'डेली मेसेन्जर' चुना, क्यों?" राघवाचार ने गुर्रा कर पूछा। उनकी आवाज में वही बाघ जैसी गुर्राहट थी। "यूनियन में दैनिक अखबार कौनसा आ रहा है?" उन्होंने पूछा।

"एवरी डे पोस्ट, सर।"

यह नाम सुन कर चंद्रन को आघात लगा। यह पेपर उसका सबसे बड़ा शत्रु था। यदि यह न होता तो वह पंद्रह दिन में अपने पेपर के एक हजार ग्राहक बना लेता। वह बोला : 'पोस्ट'! इस पेपर में प्लेनेट न्यूज सर्विस के समाचार नहीं आते थे, सर। इसे केवल बी.के. प्रेस एजेन्सी का 'सी' ग्रेड (दर्जा) प्राप्त है।

"क्या इससे विशेष फर्क पड़ता है?" राघवाचार ने पूछा।

"बहुत ज्यादा, सर। मैं यह इसलिए नहीं कह रहा हूँ कि मैं 'डेली मेसेन्जर' का एजेन्ट हूँ। आप 'मेसेन्जर' के टेलीग्राम 'पोस्ट' से मिला कर देख लीजिए आपको दोनों का अंतर मालूम हो जायेगा, सर। 'बी.के. एजेन्सी' 'प्लेनेट' से आधी भी नहीं है, सबसे कम खबरें देती है। और फिर 'सी' ग्रेड इसका सबसे नीचा ग्रेड है, 'ए' और 'बी' बेहतर हैं। हमारे पेपर को 'बी.के.एजेन्सी' के 'ए' व 'बी' ग्रेड और साथ ही 'प्लेनेट सर्विस' का प्रथम ग्रेड प्राप्त है। अतः हमारे पेपर में सारे समाचार आते हैं।"

"फिर भी, काफी लोग 'पोस्ट' को खरीदते हैं," राघवाचार ने कहा।

"नहीं, सर। अब अधिकतर लोग केवल 'मेसेन्जर' खरीदते हैं। 'पोस्ट' की ग्राहक-संख्या गिर कर 2,000 रह गई है। कभी ऐसा समय था जब 'पोस्ट' ही दक्षिण भारत का एकमात्र अखबार था, पर अब ऐसा नहीं है।"

राघवाचार ने क्लर्क की ओर मुड़ कर आदेश दिया : "कल से 'पोस्ट' के स्थान पर 'मेसेन्जर' लेना शुरू कर दो।"

जब चंद्रन जाने के लिए खड़ा हुआ तो प्रोफेसर ने उससे कहा : "मेरी शुभकामनाएँ तुम्हारे साथ हैं। मिलते रहा करो। हमारे लिए छात्रों को याद रखना उतना सरल नहीं है, जितना उनके लिए हमें याद रखना। इसलिए भूलना मत।"

हरगिज नहीं सर चद्रन ने कहा और तत्काल निश्चय किया कि वह सप्ताह मे एक बार जरूर उनसे मिला करेगा।

कॉलेज पुस्तकालय के क्लर्क से चंद्रन को पता चला कि गजपति अब वाचनालय के इनचार्ज थे। चंद्रन ने कॉमन रूम में जाकर गजपति को अपना कार्ड भेज दिया और प्रतीक्षा करने लगा।

अब भी गजपति का उसी तरह डाउडन और ब्रेडले पर आक्षेप करना जारी होगा, उसने सोचा।

"हैलो, हैलो चंद्रन! तुम्हें देखे जमाना हो गया। अब तुम क्या कर रहे हो?" कहते हुए गजपति ने उसे थपथपाया और उसके कंधों के गिर्द अपनी बाँह डाल दी। चंद्रन को गजपति से ऐसे स्नेहपूर्ण व्यवहार की अपेक्षा नहीं थी अतः वह कुछ चकरा सा गया। इसके सिवा गजपति में कोई परिवर्तन नहीं दिखाई दिया। वे अब भी अपना वही बदरंग फ्रेम वाला चश्मा लगाये हुए थे और उनकी नीचे की ओर लटकती हुई मूँछे भी वैसी ही थीं।

जब चंद्रन ने अपना उद्देश्य बताया तो गजपति ने कहा : "यदि यूनियन में 'मेसेन्जर' लिया जा रहा है तो हम कॉलेज के रीडिंग रूम के लिए इसे नहीं खरीद सकते, क्योंकि प्रिंसिपल ने आदेश दिया है दोनों वाचनालयों में एक ही पत्र-पत्रिका की प्रतियाँ नहीं मँगाई जायें।"

"लेकिन सर, 'पोस्ट' को खरीदना तो पैसा बरबाद करना है। उसमें कुछ भी समाचार नहीं होते। उसकी टेलीग्राम सेवा भी अपर्याप्त है और उसके संवाददातओ की संख्या 'मेसेन्जर' से आधी भी नहीं है।"

"अब जैसी भी है, प्रिंसिपल का यही आदेश है।"

"आप खुद मेरे अखबार के ग्राहक क्यों नहीं बन जाते, सर?"

"मैं? मैं कभी अखबार नहीं पड़ता।"

चंद्रन आश्चर्य से बोला : "तो फिर समाचारों के लिए आप क्या करते है, सर?"

"मेरी समाचारों में कोई रुचि नहीं है।" स्पष्ट था कि यह आदमी शेक्सपियर और उसके आलोचकों की पुस्तकों के अतिरिक्त कुछ नहीं पढ़ता था।

"सर, यदि आप इसे मेरी अशिष्टता न समझें तो मेरा विचार है कि आपको अखबार पढ़ने की आदत डाल लेनी चाहिए। मुझे विश्वास है कि आपको अच्छा लगेगा। फिर तो आप पेपर के बिना एक दिन भी नहीं रह सकेंगे।"

"अच्छी बात है, भेज देना। ग्राहक-शुल्क कितना है?"

"ढाई रुपया मासिक, और पेपर आपके घर पहुँचाया जायेगा।"

"लो यह एक महीने का ग्राहक-शुल्क," कहते हुए गजपति ने अपना पर्स निकाला और एक महीने का शुल्क दे दिया। "अपने अखबार बाँटने वाले से कहना कि इस पते पर अखबार दे जाया करे--"

"धन्यवाद, सर। इसकी रसीद मैं आपको कल भेज दूँगा।"

"उसके लिए तकलीफ करने की जरूरत नहीं है। मैं तो बस यह चाहता हूँ कि मेरे पुराने छात्र जीवन में खूब प्रगति करें। जब मैं उन्हें तरक्की करते देखता हूँ तो मुझे बहुत खुशी होती है।"

चंद्रन ने उनकी यह बात पहले कभी नहीं जानी थी। उनकी इस बात ने उसके दिल को गहराई से छू लिया। वह अभिभूत हो उठा।

"आप कभी मेरे ऑफिस तशरीफ लाइये, सर" उसने कहा।

"जरूर, जरूर। कहाँ पर है तुम्हारा ऑफिस?"

जाने से पूर्व उन्हें प्रसन्न करने की कोशिश में चंद्रन ने कहा : "कॉलेज छोड़ने के बाद भी मैं काफी पढ़ता रहा हूँ, सर।"

"मैं यह सुन कर सचमुच बहुत प्रसन्न हूँ। क्या पढ़ते रहे हो?"

"थोड़ा-बहुत शेक्सपियर; कुछ विक्टोरियन निबंधकार। लेकिन कहानी-उपन्यास के क्षेत्र में मेरे विचार से वर्तमान लेखकों का मुकाबला नहीं है। आपको ऐसा नहीं लगता कि वेल्स, गॉल्सवर्दी और हार्डी पुराने उपन्यासकारों से श्रेष्ठ हैं?"

अपनी राय बताने से पूर्व गजपति थोड़ा रुके और फिर बोले : "यह मेरी सच्ची धारणा है कि पंद्रहवीं सदी के बाद पढ़ने योग्य कुछ लिखा ही नहीं गया है। जो व्यक्ति साहित्य का वास्तविक आनंद लेना चाहता है उसके लिए तो एलिज़ाबेथ कालीन साहित्य के समान दूसरा है ही नहीं। बाकी सब बकवास है।"

"गॉल्सवर्दी, सर?"

"मुझे वह उबाऊ लगता है।"

"वेल्स व हार्डी?"

"वेल्स तो साहित्यकार नहीं, बल्कि सामाजिक विचारक है। थोड़ा सा सनकी भी है। और हार्डी? उसे आवश्यकता से अधिक महत्त्व दे दिया गया है। हाँ, उसकी पुस्तक 'टैस' के कुछ अंश अच्छे हैं।"

चंद्रन समझ गया कि समय बीत जाने पर भी उनकी हठधर्मिता में कोई परिवर्तन नहीं आया था। वेल्स, गॉल्सवर्दी, हार्डी और इन अनेकों आलोचकों को गुमान भी न था कि गजपति उनसे कैसी शत्रुता रखते थे!

''सर, मेरे ऑफिस कभी जरूर आइए। भूलिएगा नहीं,'' चंद्रन ने जाने से पहले अनुरोध किया।

❑❑❑

16

एक शाम को पाँच बजे, जब चंद्रन अपने दफ्तर में रसीदों पर हस्ताक्षर कर-करके अगली सुबह वितरण के लिए लिफ़ाफ़ों में रख रहा था, उसके पिता अंदर आये। चंद्रन विस्मित होकर अपनी कुर्सी पीछे सरका कर खड़ा हो गया। उसके पिता सामान्यतः वहाँ नहीं आते थे। वे केवल उद्घाटन के दिन तथा एक और दिन एक मित्र के साथ वहाँ आए थे। दूसरी बार जब वे आए तो उन्होंने यह खेदसूचक सफाई दी थी कि वह मित्र चंद्रन से मिलना चाहता था। यह उनका तीसरी बार आगमन था।

''बैठो चंद्रन, अपना काम जारी रखो,'' कहते हुए उसके पिता बेंच पर ही बैठने लगे थे। चंद्रन ने अपनी कुर्सी उनकी ओर सरका कर उनसे बैठने का अनुरोध किया।

पिता ने चारों तरफ नजर डालते हुए पूछा: ''तुम्हारा काम कैसा चल रहा है?''

''बिल्कुल ठीक, अप्पा। बस, ग्राहक-शुल्क एकत्र करने में परेशानी होती है। मैं खुद जाऊँ तब तो वे लोग पैसे दे देते हैं, पर यदि लड़कों को भेजूँ तो हीले-हवाले करते हैं। मैं हर सुबह 350 ग्राहकों के पास कैसे जा सकता हूँ? अब मैं एक बिल कलेक्टर नियुक्त करूँगा। अब तो ऐसा करने की हैसियत भी है।''

''क्या हेड ऑफिस के लोग तुम्हारे काम से खुश हैं?''

''होने तो चाहिएँ। छः महीने तक मैंने हर महीने पचास ग्राहक के हिसाब से ग्राहक-संख्या में बढ़ोतरी की है। किंतु उन्होंने कुछ लिखा नहीं है। वैसे यह अच्छा लक्षण है। इससे ज्यादा की मैं उम्मीद भी नहीं करता। अगर काम असंतोषजनक हो तो अफसर लोग हमारे ऊपर भौंकने लगते हैं और अगर संतोषजनक हो तो वे ऐसा कहते नहीं, बस चुप रहते हैं।''

''तुमने ठीक कहा। सरकारी नौकरी में भी ऐसा ही है। हम अधिक से अधिक अपने अफसरों से उदासीनतापूर्ण मूल्यांकन की ही अपेक्षा कर सकते हैं।''

उसके बाद कुछ समय के लिए चुप्पी छा गई। अचानक उसके पिता ने कहा : "मैं एक विशेष काम से आया हूँ। तुम्हारी माँ ने मुझे भेजा है।"

"माँ ने?"

"हाँ। उन्हें खुद तुमसे बात करने का साहस नहीं हो रहा था, इसलिए मुझे भेजा है।"

"क्या बात है, अप्पा?"

"किंतु मैं तुम्हें स्पष्ट रूप से बता देना चाहता हूँ कि मैंने तुम्हारे पीठ पीछे कुछ नहीं किया है। मेरा इसमें कोई हाथ नहीं है। यह पूरी तरह से तुम्हारी माँ का ही काम है।"

"वह है क्या, अप्पा?"

"ऐसा है कि मिस्टर जयराम अय्यर ने, जो कि तालापुर के एक बड़े वकील हैं, कुछ समय पहले अपनी लड़की की जन्म कुंडली हमारे पास भेजी थी। हमने भी शिष्टता के नाते बदले में तुम्हारी कुंडली उन्हें भेज दी थी। कल उनका पत्र आया है कि कुंडलियों का बहुत अच्छा मेल रहा है। उन्होंने पूछा है कि क्या हमे इस संबंध पर आपत्ति है। मैं तो इस मामले को वहीं खत्म कर देना चाहता था, पर तुम्हारी माँ की इच्छा है कि यह बात तुम्हें बता दी जाये और तुम्हारे निर्णय पर छोड़ दी जाये। उन्होंने हमारे गणपति शास्त्री के माध्यम से हमसे संपर्क किया है।"

चंद्रन फर्श की ओर ताकता हुआ बैठा रहा। उसके पिता ने एक मिनट ठहर कर फिर कहा : "मैंने सुना है कि लड़की लगभग पंद्रह वर्ष की है। उन्होंने फोटो भी भेजा है। लड़की देखने में अच्छी है। तुम चाहो तो फोटो देख सकते हो। उन्होने लिखा है कि उसका रंग काफी गोरा है। वे दहेज में 3,000 रुपये नकद और अन्य उपहार देने के लिए तैयार हैं।"

वे चंद्रन के उत्तर की प्रतीक्षा कर रहे थे। चंद्रन ने उनकी ओर देखा। उसके पिता के ललाट पर पसीने की बूँदें थीं और उनकी आवाज भी कुछ-कुछ काँप रही थी। उसे अपने पिता पर बड़ी दया आई। यह बातचीत और इसकी तैयारी उनके लिए कितनी कठिन और श्रमसाध्य रही होगी! पिता एक क्षण मौन बैठे रहे और फिर उठते हुए बोले : "अब चलता हूँ। मुझे क्लब जाना है।"

चंद्रन उन्हें दरवाजे तक छोड़ने गया और जब वे बेंत झुलाते हुए सड़क पर चल रहे थे तो उनकी पीठ की ओर देखता रहा। अचानक उसे ध्यान आया कि उसने उनकी बात का कुछ भी जवाब नहीं दिया था। संभव है वे उसके मौन को स्वीकृति समझ लें और मन में झूठी आशाएँ पाल लें। यह तो बहुत बुरा हुआ।

उसने अपने ऑफिस मे काम करने वाले लडके को जो पडोस की दुकान की सीढियो पर बैठा हुआ था, बुलाकर उससे ऑफिस का ध्यान रखने के लिए कहा और अपनी साइकिल पर बैठ कर उसी दिशा में चल दिया जिधर उसके पिता गये थे। वे अभी अधिक दूर नहीं गये थे। चंद्रन उनके पास जा पहुँचा।

"मुझसे कुछ कहना है?"

"हाँ, अप्पा।"

पिता ने अपनी चाल धीमी कर दी और चंद्रन जमीन की ओर देखता हुआ उनके साथ चलने लगा। "अप्पा, आपने इतनी दूर आने की तकलीफ की है, पर मैं आपको बता देना चाहता हूँ कि मैं शादी नहीं कर सकता।"

"ठीक है, चंदर। तुम इस बात को लेकर परेशान मत होओ।" चंद्रन कुछ दूर तक उनके साथ चला, फिर बोला : "मैं वापस अपने दफ्तर जाऊँ?"

"हाँ।"

जब चंद्रन अपनी साइकिल पर चढ़ने लगा तो पिता ने उसे रोक कर कहा : "मैंने दफ्तर में तुम्हारी मेज पर कुछ कागज और पत्र पड़े देखे थे जो हवा में उड़ सकते हैं। मुझे याद दिला देना, मैं कल तुम्हें कुछ पेपरवेट दे दूँगा।"

वह लौट कर अपनी मेज पर आया और उसने कुछ और रसीदों पर हस्ताक्षर करने की कोशिश की। उसके पिता के आगमन ने मानो उसकी दुखती हुई रग को छेड़ दिया था, उसके मन के उस नाजुक धैर्य और शांति की, जो उसने बड़े प्रयत्न व कष्ट से प्राप्त की थी, जड़ को ही हिला दिया था।

वह और रसीदों पर हस्ताक्षर नहीं कर सका।

रसीदों व लिफाफों को एक ओर सरका कर उसने मेज पर कुहनियाँ टेक दीं और चेहरा हाथों में लिए सामने दीवार की तरफ ताकता हुआ बैठा रहा।

छः बजे मोहन आया। उसने अपनी टोपी मेज पर पटकी और मेज के सामने पड़े बेंच पर चंद्रन और दीवार के बीच में, बैठ गया।

चंद्रन ने यंत्रवत् पूछा : "नया समाचार क्या है?"

"कुछ खास नहीं। वही हमेशा वाली बकवास; भाषण, और खेलकूद और आत्महत्याएँ। मैं यह काम छोड़ने के बारे में गंभीरता से सोच रहा हूँ।" वह बड़ा खिन्न व चिड़चिड़ा लग रहा था।

"अब क्या बिगड़ गया?" चंद्रन ने पूछा।

"सभी कुछ। मैंने सोचा था कि यह काम तभी तक करूँगा जब तक साहित्य-जगत में जम नहीं जाता। और नतीजा क्या हुआ? इस समाचार लेखक के काम ने

जैसे मुझे पूरा निगल लिया है। सुबह से रात तक मैं दूसरे लोगों के मामलों को नोट करता हुआ सारे शहर में भटकता रहता हूँ और फिर होटल में जाकर सो जाता हूं। कविता की एक पंक्ति लिखने योग्य भी नहीं रहता। चार महीने से एक भी पंक्ति नहीं लिखी है। अखबार के पत्रिका वाले पृष्ठ पर तुम जो देखते हो, वे मेरी पहले की कविताएँ हैं। अपनी कलम उठाता हूँ तो इससे अधिक मर्मस्पर्शी कोई चीज नही लिख पाता : आज अमुक व्यक्ति पर किए गए अमुक दोषारोपण का फैसला सुनाया गया।---''

''मुझे बड़ी भूख लगी है,'' चंद्रन ने कहा, ''किसी होटल में चलें?''

''हाँ।''

जब तक वे होटल से बाहर आये, मोहन की मन:स्थिति में परिवर्तन आ चुका था। उसने अपने पिछले मूड की आलोचना करते हुए कहा : ''यदि मैंने कुछ नहीं लिखा, तो इसमें किसी की क्या गलती है? मुझे अपना कार्यक्रम ऐसा बनाना चाहिए कि लिखने के लिए भी समय निकल सके।''

कुछ देर वे सिगरेट फूँकते हुए नदी किनारे टहलते रहे। वे नलप्पा क्षेत्र की ओर जाकर नदी के दूसरे किनारे पहुँचे, कुछ देर वहाँ टहलते रहे और फिर वापस आकर किनारे की रेत पर बैठ गये। मोहन अपनी तसल्ली के लिए कार्य-योजना बनाता हुआ लगातार बोलता रहा। उसने काव्य की परिभाषा को विस्तृत करते हुए कहा कि काव्य नाम की कोई भिन्न व विशिष्ट चीज तो होनी ही नहीं चाहिए। समाचारों के कॉलम लिखने में भी वही काव्यात्मक आनंद प्राप्त होना चाहिए। इस प्रकार की अलग-अलग संकीर्ण सीमाएँ होना ठीक नहीं है। इन सब चीजों का उचित सम्मिश्रण ही तो जीवन है।

जब मोहन अपने सारे काव्य-सिद्धांतों की व्याख्या कर चुका तो चंद्रन ने धीरे से कहा : ''आज पाँच बजे अप्पा मेरे दफ्तर आये थे, मेरी शादी का प्रस्ताव लेकर।'' मोहन अपनी काव्यात्मक परेशानियों को भूल कर चंद्रन की बात सुनने लगा, बीच में कोई टीका-टिप्पणी भी नहीं की। चंद्रन अपने पिता के आगमन का वृत्तान्त इस ढंग से सुना रहा था कि उसकी व्यक्तिगत राय का मोहन को बिल्कुल पता नहीं चल रहा था। उसमें प्रेम, विवाह और स्त्रियों के प्रति विरक्ति तो झलक रही थी पर उस विरक्ति में जोश नहीं था। मोहन यह निश्चित नहीं कर सका कि यह शादी के प्रति चंद्रन के रुख में परिवर्तन आ रहा है अथवा पूर्ण विरक्ति की स्थिति है जिसमें कोई जोश, कोई उत्साह शेष नहीं रहता। अपनी बात का उपसंहार करते हुए चंद्रन ने कहा : ''--- और मैंने तेजी से अपने पिता के पीछे जाकर उन्हें बताया कि यह सोचा भी नहीं जा सकता।''

चद्रन की बात समाप्त हो गई . मोहन कुछ नहीं बोला . कुछ देर तक मौन छाया रहा, केवल नदी किनारे वाले वटवृक्ष की डालियों की सरसर ध्वनि सुनाई दे रही थी।

"अपनी माँ के लिए, उनकी आशा-आशंकाओं के लिए सोच कर मुझे बड़ा अफसोस होता है। मेरे ही कारण उनकी यह दशा हो गई, इसके लिए मैं अपने आप को कोसता रहता हूँ। लेकिन मैं कर ही क्या सकता हूँ? मैं अपने पिता को और क्या उत्तर दे सकता हूँ?" चंद्रन ने फिर कहा।

"तुम्हारे उत्तर की उन पर क्या प्रतिक्रिया हुई?"

"उन्होंने तो तटस्थता ही दिखाई। पेपरवेट की बात करने लगे। मेरी परेशानी यह है कि मैं नहीं जानता मुझे क्या करना चाहिए। मेरी माँ अब भी मेरी शादी की योजनाएँ बनाती रहती हैं पर मैं इसके लिए उन पर क्रोध भी तो नहीं कर सकता। यह सब मैं पहले ही काफी भुगत चुका हूँ।"

"तो फिर छोड़ो। तुम्हें इन बातों की चिंता करने के लिए मजबूर कौन कर रहा है?"

"लेकिन मुझे अपने माता-पिता पर दया आती है। वे इसके लिए कैसी जी-जान से कोशिश कर रहे हैं! उनके इन सारे प्रयत्नों में कुछ ऐसा है जो मुझे बड़ा करुण, बड़ा दयनीय जान पड़ता है।"

"मेरी समझ में यह नहीं आता कि जब तुमने विनम्रतापूर्वक अपने पिता को बता दिया है कि तुम ऐसा नहीं कर सकते तो फिर तुम अब भी इस विषय में चिंता क्यो कर रहे हो," मोहन ने कहा।

"ठीक कहते हो। जब बात पूरी हो चुकी तो उसकी चिंता क्या करनी। किसी और चीज के बारे में बात करते हैं।"

किंतु यह 'और चीज' सूझना आसान नहीं था। फिर कुछ समय तक चुप्पी छाई रही।

"वापस चलें?" मोहन ने पूछा।

"हाँ," चंद्रन ने कहा, किंतु उठने की कोई चेष्टा नहीं की। लगभग पंद्रह मिनट तक मोहन बैठा नदी का स्वर सुनता रहा और चंद्रन उँगली से रेत में वृत्त बनाता रहा।

"अगर तुम मेरे स्थान पर होते तो क्या करते?" चंद्रन अचानक पूछ बैठा।

"कैसे बताऊँ? मेरी जगह तुम क्या करते?" मोहन ने पूछा।

चंद्रन ने इस बार प्रत्यक्ष रूप से ही पूछ लिया : "अच्छी तरह सोच कर बताओ, तुम मुझे क्या करने की सलाह देते हो?"

अगर लडकी कुरूप नहीं है ओर साथ ही तुम्हे कुछ पैसा भी मिल रहा है तो शादी क्यों नहीं कर लेते? पैसों के साथ-साथ एक जीवनसाथी भी मिलेगा।''

चंद्रन ने टिप्पणी की कि मोहन अब बड़ी घटिया व घिसी-पिटी बातें करने लगा है। कोई आश्चर्य नहीं कि अब वह कविता नहीं लिख पाता।

इस बात से आहत होकर मोहन बोला : ''यदि किसी को शादी करनी है तो या तो वह प्रेम (यदि सचमुच ऐसी चीज है तो) के लिए करता है या फिर पैसे और आराम के लिए। सत्य की ओर से आँखें मूँद लेने से कोई लाभ नहीं है। मै अब कठोर यथार्थवाद में विश्वास करने लगा हूँ।'' अपनी यह अभिव्यक्ति उसे बेहद पसंद आई। उसने 'कठोर यथार्थवाद' पर एक संक्षिप्त सा भाषण ही दे डाला। यह अभिव्यक्ति उसे अब तक नहीं सूझी थी। अब जब सूझ ही गई तो वह इस पर पूरी तरह विश्वास करने लगा। उसने इसे एक व्यक्तिगत दार्शनिक प्रणाली का दर्जा दे दिया। पाँच मिनट तक इसकी विस्तृत व्याख्या करते-करते वह हठधर्मिता पर उतर आया। उसने अन्य सब दर्शन-प्रणालियों को चुनौती देते हुए कहा कि हर प्रकार की मानवोचित विचार-प्रणाली में और अधिक कठोर यथार्थवाद की आवश्यकता है। जब वह बोलते-बोलते अत्यधिक उत्तेजित हो गया तो उसने अपनी वाणी में ढेर सा कठोर यथार्थवाद लाकर कहा : ''मैं तो कहता हूँ कि शादी के इस प्रस्ताव पर तुम्हें गंभीरता व ध्यानपूर्वक विचार करना चाहिए। तुम्हें पूरे तीन हजार रुपये मिल रहे हैं, एक सुंदर पत्नी मिल रही है जो तुम्हारे कपड़ों की मरम्मत करेगी, बटन लगायेगी, जब तुम अखबार-वितरण के लिए बाहर चले जाओगे तो तुम्हारे फर्नीचर की सफाई करेगी, और जो तुम्हारे लिए कमरे में कॉफी लेकर आयेगी। इन सबके अतिरिक्त, एक सुंदर, कोमल-सा साथी पास में होना हमेशा सुखद मालूम होता है।''

''और इन सब के ऊपर है माता-पिता को खुशी देना,'' चंद्रन ने जोड़ा।

''बिल्कुल ठीक। सुंदर साथी जिंदाबाद! कोमल साथी जिंदाबाद! जीवन साथी जिंदाबाद!'' मोहन ने हर्षध्वनि की।

''हिप, हिप, हुर्रे!'' चंद्रन ने साथ देते हुए कहा।

अब कठोर यथार्थवादी बोला : ''मैं तुमसे कुछ प्रश्न पूछना चाहता हूँ। क्या तुम उनका उत्तर दोगे?''

''ठीक है, पूछो,'' चंद्रन ने कहा।

''मैं ये प्रश्न तुम्हारे मन को जाँचने के लिए कर रहा हूँ। इनका उत्तर सचाई और ईमानदारी से देना।''

''ठीक है.'' चंद्रन ने कहा।

''क्या तुम अब भी मालती को याद करते हो?

''उसे याद न करने के लिए मैंने अपने मन पर नियंत्रण कर लिया है। वह अब दूसरे आदमी की पत्नी है।''

''क्या तुम्हें अब भी उसकी स्मृति प्रिय है?''

''मुझे प्रेम में विश्वास नहीं है। मेरे विचार से प्रेम का कोई अस्तित्व ही नहीं है। यदि मैं अपने माता-पिता का ख़याल रखता हूँ तो वह कृतज्ञता के कारण, और कुछ नहीं। यदि मैं शादी करता हूँ तो मैं अपनी पत्नी के साथ मारपीट नहीं करूँगा, उसे गालियाँ नहीं दूँगा क्योंकि ऐसा करना असभ्यता होगी। हम आदतवश लोगों के साथ जो सद्व्यवहार करते हैं या देखते हैं उसका यही उद्देश्य होता है और हम उसे प्रेम कहते हैं। वास्तव में प्रेम जैसी कोई चीज है ही नहीं।''

''फिर तो शादी करने या न करने से तुम्हें कोई फर्क नहीं पड़ना चाहिए। फिर शादी करने से यदि तुम्हारे माता-पिता खुश होते हों, ढेर-सा पैसा मिलता हो और जब तुम खुद भी इतना कमा रहे हो तो शादी करने में हर्ज ही क्या है?''

चंद्रन ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया। वह चुपचाप इस पर विचार करता रहा और फिर बोला : ''मोहन, सिक्का उछाल कर इसका निर्णय करते हैं।'' वे सड़क पर नगरपालिका द्वारा लगाये गये लैम्प के पास पहुँचे जिसकी परछाई के आसपास पीली सी रोशनी का घेरा था। चंद्रन ने एक ताँबे का सिक्का जेब से निकाला। मोहन ने उसके हाथ को रोक कर कहा : ''इसे वापस रख लो। चाँदी का सिक्का उछालेंगे। जानते तो हो, शादी का मामला है।'' और उसने जेब से चवन्नी निकाल कर उसे अपने दाहिने हाथ की तर्जनी पर साधा और पूछा : ''उछाल दूँ?''

''हाँ। 'हेड्स' (चित) आये तो शादी।''

''ठीक है।''

मोहन ने सिक्का उछाल दिया। सिक्का रोशनी के घेरे में जा गिरा। दोनों ने झुक कर देखा और मोहन बोल उठा : ''अपना वादा निभाना। हेड्स!'' और उसने जोरों का ठहाका लगाया।

''हेड्स है?'' चंद्रन के स्वर में कुछ कंपन था, ''अच्छी बात है, अगर लडकी सुंदर हुई तो। सुंदर होगी तभी शादी करूँगा।''

''वह तो है ही,'' मोहन ने सिक्का उठा कर जेब में रखते हुए कहा।

17

पाँच दिन बाद प्रातःकाल अपनी माँ के साथ ट्रेन में बैठ कर चंद्रन लड़की देख कर रिश्ता पक्का करने के लिए तालापुर जा रहा था। उसने कोई बारहवीं बार अपनी माँ से कहा : ''अगर मुझे लड़की पसंद नहीं आई तो उन्हें बुरा तो नहीं लगेगा?''

''बिल्कुल नहीं। तुम्हारे अप्पा से शादी होने से पहले मुझे भी तीन-चार लोग देख कर गए थे।''

''उन्होंने तुम्हें पसन्द क्यों नहीं किया?'' चंद्रन ने माँ की ओर देखते हुए पूछा।

''यह सब भाग्य की बात है,'' माँ ने कहा। ''भाग्य में जो लिखा हो उसी से और जिस समय लिखा हो उसी समय रिश्ता होता है। जब सही समय आता है तो कुरूप से कुरूप लड़की भी भावी वर को ठीक लगने लगती है।''

''नहीं माँ,'' चंद्रन ने विरोध किया, ''मैं बदसूरत लड़की से शादी नहीं करूँगा।''

''कुरूपता और सुंदरता तो देखने वाले की दृष्टि पर निर्भर होती है। और वह सबकी अलग-अलग होती है। दुनिया में जो कुरूप लड़कियाँ हैं उनकी शादी कैसे होती है?''

चंद्रन ने आशंकित होकर पूछा : ''माँ, कहीं तुम्हारा मतलब यह तो नहीं कि यह लड़की कुरूप है?''

''अरे नहीं नहीं, बिल्कुल नहीं। तुम खुद देख कर निर्णय करना। तुम्हारे पास लड़की का फोटो है।''

''फ़ोटो में तो ठीक लगती है, पर हो सकता है वह केवल कैमरे का करतब हो।''

''कुछ ही घंटों की तो बात है। उसे देख कर ही निश्चय करना।''

लेकिन मा इतनी दूर से उनके घर जाकर लड़की को देखे और फिर कह दे कि हम यह शादी नहीं कर सकते। यह तो अच्छी बात नहीं है।''

''इसमें बुरा क्या है? यह तो रस्म है। जब लड़की शादी के योग्य होती है तो उसकी जन्म कुंडली दसियों जगह भेजी जाती है, अलग-अलग स्थानों से दसियों लोग उसे देखने आते हैं, पसंद या नापसंद करते हैं या फिर लड़की खुद भी उन्हे नापसंद कर सकती है; और अंत में किसी एक से उसकी शादी होती है। मेरी शादी के एक साल पहले एक डॉक्टर हमारे परिवार से रिश्ता जोड़ने का इच्छुक था। कुंडलियाँ भी मेल खाती थीं। उस डॉक्टर का लड़का मुझे देखने भी आया था, पर उसकी सूरत मुझे अच्छी नहीं लगी। मैंने अपने अप्पा से कह दिया कि मैं उससे शादी नही करूँगी। उसके बाद तुम्हारे अप्पा मुझे देखने आये और उन्होंने मुझे पसंद कर लिया और जब मेरे अप्पा ने मुझसे उनके लिए पूछा तो मैंने भी 'ना' नहीं किया। हर लडकी के लिए पति और हर आदमी के लिए पत्नी पहले से ही तय होते हैं। यह किसी के हाथ में नहीं है।''

शाम को चार बजे वे लोग तालापुर पहुँचे। लगभग अठारह वर्ष के एक लड़के ने डिब्बे में झाँक कर पूछा : ''क्या आप लोग मालगुडी से आये हैं?''

''हाँ,'' चंद्रन ने कहा।

''मैं मिस्टर जयराम अय्यर का बेटा हूँ। मैं अपने नौकर से आपका सामान उतरवा लूँ?''

''सामान तो कुछ भी नहीं है क्योंकि हम लोग सात बजे वाली ट्रेन से वापस जा रहे हैं,'' चंद्रन ने कहा। चंद्रन और उसकी माँ ने क्षण भर के लिए एक-दूसरे की ओर देखा। ''यह लड़की का भाई है,'' वह नजर कह रही थी। चंद्रन ने फिर से लड़के की ओर देख कर लड़की की शक्ल-सूरत का अनुमान लगाने की कोशिश की। कहीं लड़की की सूरत अपने भाई जैसी हुई तो--! लड़का काला और रूक्ष सी त्वचा वाला था। यह भी तो हो सकता है कि वह सग़ा भाई नहीं हो। चंद्रन पूछना चाहता था कि क्या जयराम अय्यर उसके अपने पिता हैं, पर उसने अपने आप को रोक कर दूसरा ही प्रश्न किया : ''क्या आप मिस्टर जयराम अय्यर के सबसे बड़े बेटे हैं?''

''मैं उनका दूसरा बेटा हूँ,'' उसने उत्तर दिया। चंद्रन ने आशा की थी कि शायद उसके जवाब से लड़की की सूरत के विषय में अंदाज लगाया जा सके किंतु ऐसा नहीं हुआ।

लड़के ने उन्हें ले जाकर बाहर खड़ी कार में बिठाया और वे लोग शीघ्र ही लडकी के घर पहुँच गये, जहाँ मिस्टर जयराम अय्यर और उनकी पत्नी ने उनका

स्वागत किया जिस प्रकार चद्रन अपने भावी सबधियो के बारे मे अनुमान लगाने की कोशिश कर रहा था उसी तरह वे भी उसे परखने का प्रयास कर रहे थे। चद्रन ने देखा कि मिस्टर जयराम अय्यर सफेद होते हुए बालों और संवेदनशील चेहरे वाले एक अधेड़ व्यक्ति थे। उनका रंग कुछ काला था किंतु उनकी पत्नी काफी गोरी दिख रही थीं, जिससे चंद्रन को आशा हुई कि संभवत: लड़की ने माँ का रंग और पिता की मुखाकृति पाई हो।

जब एक घंटे बाद लड़की उसके सामने आई तो उसे यह देख कर संतोष हुआ कि सचमुच लड़की का रंग माँ जैसा और चेहरा पिता जैसा था। माता-पिता के काफी खुशामद व मनुहार करने पर वह हॉल में आई। फर्श पर नजर जमाए उसने एक अंदर वाले कमरे से हॉल में कुछ कदम रखे। वह सहमी हुई-सी लग रही थी और कुछ काँप भी रही थी। लगता था जैसे क्षण भर में वापस अदृश्य हो जाने के लिए तैयार हो।

शुरू में तो चंद्रन को लड़की की ओर ताकने में शर्म महसूस हुई और वह दीवार पर लगे चित्र की ओर ही देखता रहा। किंतु फिर उसे ध्यान आया कि वह तो यहाँ आया ही लड़की देखने के लिए था। उसने तुरंत मन में निश्चय करके अपनी नजर लड़की की ओर मोड़ दी। वह नीली साड़ी पहने थी। उसके कानों व गले में कुछ हीरे चमक रहे थे। उसका दिल जोर से धड़क उठा और फिर लगा जैसे बंद हो गया हो। "इसकी शारीरिक गठन गज़ब की है", उसके मन के किसी कोने से आवाज उठी। "इसका चेहरा भी बहुत सुंदर होगा पर मैं उसे देख नहीं पा रहा हूँ क्योंकि वह जमीन की तरफ देख रही है।" उसकी इच्छा हुई कि चीख कर अपनी दाहिनी ओर की कुर्सी पर बैठे निरर्थक बातचीत करते मिस्टर जयराम अय्यर से कहे : "सर, कृपया अपनी बेटी से चेहरा ऊपर करने के लिए कहें। मैं उसका मुख नहीं देख पा रहा हूँ।"

मिस्टर जयराम अय्यर ने अपनी बेटी से कहा : "शर्म की कोई बात नहीं है, बेटा। यहाँ आओ।"

लड़की अब भी बहुत घबराई हुई थी और उधर आने में झिझक रही थी। चंद्रन को उस पर तरस आने लगा। वह बोला : "वहीं रहने दीजिए सर। तकलीफ देने की जरूरत नहीं है।"

"जैसा आप चाहें", जयराम अय्यर ने कहा।

तभी लड़की ने धीरे से सिर उठाया और चुपके से चंद्रन पर एक नजर डाली। अब चंद्रन को उसका चेहरा दिखा। वह निस्संदेह बहुत सुंदर था। उसने मालती के

चेहरे से उसकी तुलना की तो उसे आश्चर्य होने लगा कि आखिर मालती के चेहरे मे उसने ऐसा क्या देखा था जो वह उसके प्रेम में पागल हो उठा था।---

जयराम अय्यर ने अपनी बेटी से कहा : "वीणा पर कोई गीत बजाओ।" चंद्रन ने देखा कि वह अब भी बहुत घबराई हुई है और वह उसकी सहायतार्थ बोल उठा : "तकलीफ न करें, सर। वे घबराई हुई हैं।"

"घबराने की तो बात नहीं है। वह बहुत अच्छा बजाती है और गाती भी है।"

"मुझे यह सुन कर खुशी हुई, सर। लेकिन इस समय गाना उनके लिए बहुत मुश्किल है। मैं किसी और दिन उनका संगीत सुन लूँगा।"

जयराम अय्यर ने उस पर एक विनोदपूर्ण नजर डाली और बोले : "अच्छी बात है।"

चंद्रन कार में बैठ कर भारी दिल से उस बँगले से विदा हुआ। और जब उसने ट्रेन में बैठ कर अपने भावी साले से विदा ली तो उसका मन रो उठा। जब तालापुर स्टेशन पीछे छूट गया तो चंद्रन की माँ ने पूछा :

"लड़की पंसद आई?"

"हाँ, माँ," चंद्रन ने उत्साह से कहा, "तुमने उन्हें बता दिया न?"

"जब तक वे खुद आकर न पूछें, हम उन्हें कुछ नहीं बता सकते।"

चंद्रन ने निराशा से कहा : "ओह, ये रस्में! मुझे इनसे घृणा है। इनसे अनावश्यक विलंब होता है। क्यों न हम उन्हें कल इस आशय का तार भेज दें?"

"धीरज रखो। धीरज रखो, चंद्र। हर चीज अपने सही समय पर होती है।"

"अगर उन्होंने हमसे पूछा ही नहीं तो?"

"जरूर पूछेंगे। दो-तीन दिन में या तो वे लोग हमारे पास आयेंगे या फिर पत्र लिखेंगे।"

"मुझे मिस्टर जयराम अय्यर से कह देना चाहिए था कि उनकी बेटी मुझे पंसद है," चंद्रन ने पछताते हुए कहा।

माँ ने आशंकित होकर पूछा : "तुमने ऐसा कुछ कह तो नहीं दिया उनसे?"

"नहीं, माँ।"

"धैर्य रखो, चंद्र। हर चीज सही ढंग से होने दो।"

चंद्रन पीछे सरक कर बैठ गया। उसने खुद को अपने भाग्य के भरोसे छोड़ दिया और उदास मन से खिड़की के बाहर ताकता हुआ बैठा रहा।

उसने पूछा : "माँ, क्या तुम्हें वह लड़की पसंद है?"

"हाँ, देखने में अच्छी है।"

"और आवाज? बोलती ठीक से है?"

"हाँ, बातचीत भी ठीक करती है।"

"क्या वह बातचीत से बुद्धिमान लगती है?"

"हाँ, हाँ। पर मेरे सामने वह बहुत कम बोली। अपनी होने वाली सास के सामने शर्म जो आ रही थी।"

"वह कौनसी कक्षा में पढ़ रही है, माँ?"

"छठी कक्षा में।"

"क्या वह पढ़ाई में होशियार है?"

"उसकी माँ ने बताया था कि वह अपनी कक्षा में बहुत अच्छी मानी जाती है।"

"उसके पिता ने कहा था कि वह वीणा बहुत अच्छी बजाती है। और लगता है वह गाती भी बहुत अच्छा है।---माँ, उसका नाम क्या है?"

उसे नाम अच्छी तरह याद था किंतु फिर भी दुबारा सुनने की इच्छा हो रही थी।

"सुशीला," माँ ने कहा।

"वह तो मुझे पता है," इस डर से कि कहीं माँ उसकी भावनाओं को समझ रही हों, चंद्रन ने कहा, "मैं तो यह जानना चाहता था कि क्या उसका कोई घर का नाम भी है।"

"उसकी माँ ने उसे एक-दो बार मेरे सामने पुकारा था और उन्होंने सुशीला ही कहा था।"

शेष यात्रा के दौरान चंद्रन के कानों में 'सुशीला' शब्द का सुमधुर संगीत ही गूँजता रहा। सुशीला, सुशीला, सुशीला। उसका नाम, संगीत, शारीरिक गठन, चेहरा, और उसकी हर चीज चंद्रन को दिव्य मालूम हो रही थी। सुशीला, सुशीला—मालती, ऊँहूँ, बिल्कुल भी नहीं जँचता। बोलने में भी आसान नहीं है। पता नहीं लोग यह नाम किसलिए रखते होंगे, उसने सोचा।

❑❑❑

पंद्रह दिन बाद शादी के पूर्व होने वाला लग्न-संस्कार संपन्न हुआ। उसके लिए जयराम अय्यर अपने कुछ लोगों के साथ मालगुडी आये। चंद्रन के घर में अतिथियों का स्वागत और दावत हुई। अनेकों लोगों को निमंत्रित किया गया था। उस मांगलिक अवसर पर जयराम अय्यर ने उठ कर एक केसर के छींटे लगे हुए कागज में से शादी का लग्न पढ़ कर सबको सुनाया। उसमें कहा गया था कि ईश्वर की असीम कृपा से अमुक के पुत्र चंद्रन का शुभ विवाह अमुक की पुत्री सुशीला से दस दिन बाद अमुक तारीख को संपन्न होने वाला है।

इसके बाद ही शादी की तैयारियाँ शुरू हो गईं। 'डेली मेसेन्जर' का काम इन दिनों चंद्रन को बोझ लगने लगा। उसे सारे दिन इधर-उधर चक्कर लगाने पड़ते थे—कभी दर्जी के पास, कभी सुनार या जौहरी के पास, कभी रेशमी कपड़ों की दुकानों पर, तो कभी मुद्रक के पास।

एक हजार से भी अधिक की संख्या में सुनहरे किनारों व सुंदर छपाई वाले निमंत्रण-पत्र मालगुडी में और उसके बाहर भेजे गये। अपने दफ्तर में बैठ कर लिफ़ाफ़ों पर पते लिखते हुए एक बार फिर चंद्रन को महसूस हुआ कि समय ने उसके सहपाठियों और मित्रों को उससे कितना दूर कर दिया था। वह चाहता था कि किसी को भी निमंत्रण देना न भूले। किंतु बड़ी कठिनाई से वह लगभग एक दर्जन ही ऐसे लोगों को याद कर पाया, जिनसे उसकी समय-समय पर शहर में मुलाकात हो जाती थी। नाम तो कुछ और लोगों के भी याद आये किंतु उनका कुछ भी पता-ठिकाना मालूम नहीं था। वह यह सोच कर खिन्न हो उठा कि उसे रामू, वीरास्वामी और नटेशन के बारे में भी कुछ पता नहीं था। रामू बम्बई में था किंतु उसका पता बताने वाला कोई नहीं था। ईश्वर जाने नटेशन कहाँ था। और वीरास्वामी? ''संभवत: वह किसी जेल में राजनीतिक कैदी के रूप में होगा, या फिर रूस चला गया होगा,'' उसने सोचा।

या फिर वह किसी सरकारी दफ्तर मे क्लर्की कर रहा होगा मोहन ने कहा।

"उसकी 'ब्रिगेड' का क्या हुआ होगा?"

"पता नहीं। कुछ साल पहले वह एक-दो बार मेरे होटल आया था। उसके बाद मैंने उसे नहीं देखा।"

"शायद अब उसकी ब्रिगेड में लाखों सदस्य हो गए हों जो सब के सब अंग्रेज सरकार को उखाड़ फेंकने की प्रतीक्षा में हों," चंद्रन ने कहा।

"ज्यादा संभावना तो इस बात की है कि वह पुलिस का मुख़बिर बन गया होगा। काफी फायदे का काम है," कवि महोदय ने कटाक्ष किया और फिर से दोहराया : "मुझे उसका कुछ भी पता नहीं है। वह कई महीनों या वर्षों पहले मेरे होटल में आकर ठहरा था।"

मोहन की इस बात से चंद्रन के दिमाग में यादों का एक सिलसिला शुरू हो गया। बहुत पहले की शामें; चंद्रन, मोहन और वीरास्वामी; मालती वाली शामें; उन्मादपूर्ण दिन।-- सुशीला में एक कांति है जो मालती में नहीं थी। नहीं, नहीं, इस प्रकार तुलना करके किसी को नीचा दिखाना अनुचित है। उसने अपने आप से कहा कि वह ऐसा केवल द्वेषवश कर रहा है। --बेचारी मालती! जीवन में आज पहली बार वह उसकी एक दूर के शहर में जा बसी बहन के रूप में कल्पना कर पा रहा था। बेचारी लड़की, वह आखिर क्या करती! हाँ, सुशीला की तो बात ही और है।

"क्या सोच रहे हो?" मोहन ने पूछा।

"उस मदुरम में रहने वाले पोस्टमास्टर को एक कार्ड भेजना चाहिए। पता नहीं अब उसे मेरी याद भी होगी कि नहीं।"

चंद्रन जब शादी करने के लिए तालापुर गया तो उसकी अनुपस्थिति में मोहन ने उसका काम सँभाला। चंद्रन जब वापस लौटा तो वह एक नया ही आदमी था। उसके मन में सुशीला; बेला व चंदन की खुशबू; पवित्र अग्नि का सुवासित धुआँ, प्रकाश; संगीत; चहल-पहल व हँसी-खुशी रची-बसी हुई थी।

उसके बाद लगभग एक महीने तक मोहन को चंद्रन के लंबे-लंबे इकतरफा भाषण बर्दाश्त करने पड़े जैसे : "पहले दिन तो वह मुझसे शर्म के मारे बात भी नहीं कर रही थी। तीसरे दिन जाकर उसके मुख से कुछ बोल फूटे। मेरे यहाँ लौटने से पहले तो उसने मुझसे काफी बातें कीं। शुरू में तो संकोच होता ही है। बडी बुद्धिमान लड़की है, काफी समझदारी की बातें करती है। मैंने जब उससे पूछा कि मेरे बारे में उसके क्या विचार हैं तो वह शरारत भरी तिरछी नजर से मुझे देखने

लगी बडी शरारती निगाहे हैं उसकी उसने मुझसे वादा किया है कि हर दूसरे दिन मुझे पत्र लिख़ेगी। बहुत सुंदर अंग्रेजी लिखती है।''

फिर तो रोजाना ही चंद्रन अपने समय का अधिकांश भाग उसे पत्र लिखने और उसके पत्र पढ़ने में बिताने लगा। उसे अगले साल भर तक अपना समय इसी प्रकार बिताना था। वह मोहन से भी अधिकतर इन पत्रों के बारे में बातचीत करता था, जैसे: ''आज उसने मुझे बहुत ही जोरदार पत्र भेजा है, मुझे पहली बार 'प्रियतम' कह कर संबोधित किया है। उसने मुझे बीस हजार चुंबन भेजे हैं जबकि मैंने अपने पिछले पत्र में उसे केवल पंद्रह हजार चुंबन भेजे थे।---''

अथवा ''मैंने उसे जो रेशमी कपड़े भेजे थे वे उसे बहुत पसंद आये। उसने लिखा है कि वे अति सुंदर हैं।'' या फिर अपनी अंदर वाली जेब, जिसमें हमेशा सुशीला के एकाधिक पत्र रहते थे, टटोलते हुए वह कहता : ''बेचारी लड़की! वह मुझे लिखती है कि मैं अपने स्वास्थ्य का पूरा ध्यान रखूँ। सुबह इतनी जल्दी नहीं उठा करूँ। उसने मेरे काम के बारे में भी पूछा है और मेरे लिए शुभकामना की है कि मेरे पेपर की ग्राहक-संख्या में वृद्धि हो। उसने 'डेली मेसेन्जर' के लिए दीर्घ जीवन व स्वास्थ्य की कामना की है। काफी विनोदप्रिय है वह।''

दो महीने बाद एक शाम को चंद्रन अपने ऑफिस में बड़ा उदास बैठा हुआ था। मोहन ने आकर बेंच पर बैठते हुए पूछा : ''क्या हो गया?'' चंद्रन ने अपना चिंताग्रस्त चेहरा उसकी ओर करके कहा :

''आज भी कोई पत्र नहीं आया। आज छठा दिन है। पता नहीं क्या कारण है।''

''हो सकता है वह परीक्षा की तैयारी में व्यस्त हो। शायद कल तक पत्र आ जाये।''

''मुझे तो ऐसा नहीं लगता,'' चंद्रन ने कहा। वह अत्यधिक निराश दिखाई दे रहा था, बोला : ''पहली बार ऐसा हुआ है कि उसने इतने दिन तक मुझे पत्र नहीं लिखा।''

मोहन की समझ में नहीं आया कि उसे कैसे सांत्वना दे। उसे पहले कभी ऐसी समस्या का सामना नहीं करना पड़ा था।

चंद्रन बोला : ''मुझे चिंता यह सोच कर हो रही है कि कहीं वह बीमार न हो। अपने पिछले पत्र में उसने लिखा था कि उसे जोरों का जुकाम हो गया है। हो सकता है अब तेज बुखार आ गया हो। और बुखार भी पता नहीं किस तरह का हो।''

मामूली मलेरिया भी तो हो सकता है   मोहन ने साहस करके कहा

"छः दिन तक लगातार!" चंद्रन ने अवसादपूर्ण हँसी के साथ कहा, "मैं नहीं जानता यह क्या है। पता नहीं उसके परिवार के लोग उसकी ठीक तरह से देखभाल भी कर रहे होंगे या नहीं। मुझे खुद जाकर देखना होगा। मैं अभी घर जाता हूँ। ·. बजे वाली ट्रेन पकड़ कर कल सुबह तक तालापुर पहुँच जाऊँगा। मेरे लौटने तक तुम मेरे दफ्तर का काम सँभाल लोगे न?"

"हाँ।"

"अनेकों धन्यवाद। मैं जल्दी लौटने की कोशिश करूँगा," कह कर चंद्रन उठ गया। उसने सड़क पर आकर साइकिल-स्टैण्ड से अपनी साइकिल ली और मोहन से कहा : "मैंने तख्ती पर दो पते नोट कर रखे हैं। अगर वे लोग पैसे नहीं दें तो लड़कों से कह देना कल से उन्हें अखबार देना बंद कर दें।"

जब वह साइकिल पर चढ़ने वाला था तो मोहन दौड़ कर दरवाजे तक आया और बोला : "देखो, ऐसा नहीं है कि मैं काम से बचना चाहता हूँ या ऑफिस की देखभाल नहीं करना चाहता, पर तुम ऐसे गंभीर और दुखद अनुमान क्यों लगा रहे हो? और वह भी केवल इस आधार पर कि कुछ दिन से पत्र नहीं आये या पत्र में जुकाम होने की बात लिखी थी?"

चंद्रन ने तिरस्कार की दृष्टि से उसे देखा और बिना कुछ कहे साइकिल पर चढ़ कर चल दिया। मोहन कुछ देर जाती हुई साइकिल को देखता रहा, फिर निराशा से हाथ झटक कर अंदर की ओर मुड़ गया। कवि का काम है केवल प्रश्न पूछना; वह हमेशा उत्तर की अपेक्षा तो नहीं कर सकता।

❑❑❑